नित्यक्रम

श्रीमद् राजचंद्र आश्रम
अगास

© इस ग्रंथके सभी अधिकार प्रकाशकने स्वाधीन रखें है । अतः प्रकाशककी लिखित अनुमतिके बिना इस ग्रंथको या इस के किसी अंशको मूलरूपमें या अनुवाद के रूपमें तथा इस ग्रंथमें मुद्रित चित्रपटोंको छापने या छपवानेका काम कोई भी व्यक्ति या संस्था न करें ।

प्रकाशक

श्री भुलाभाई वनमाळीदास पटेल
अध्यक्ष, श्रीमद् राजचंद्र आश्रम
वाया-आणंद, स्टे. अगास,
पो. बोरीआ - ३८८१३० (गुजरात)

मुद्रक

श्रीधर प्रिन्टर्स प्रा.लि.
जे.के. ब्लोक, रवि एस्टेट,
दूधेश्वर रोड,
अहमदाबाद-३८० ००४

प्राप्तिस्थान

श्रीमद् राजचंद्र आश्रम
स्टेशन अगास, वाया आणंद
पोस्ट बोरीआ - ३८८ १३०
गुजरात
टेलीफोन : ०२६९२-२८१७७८
फेक्स : ०२६९२-२८१३७८

श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, अगास - संचालित
श्री परमश्रुत प्रभावक मंडल,
हाथी बिल्डिंग, ए /१८, भांगवाडी,
४४८ कालबादेवी रोड,
मुंबई-४०० ००२
टेलीफोन : ०२२-२२०६९२३४

नवम आवृत्ति : प्रतियाँ ३०००, विक्रम संवत् २०६९, ईस्वी सन २०१३.
लागत किंमत : रू. ४८/- बिक्री किंमत : रू. ८/-

कृपया इस पुस्तककी किसी प्रकारसे आशातना न करें, इस पर दाग न लगायें, इसे न फाडें तथा नीचे जमीन पर न रखें ।

प्रकाशकीय निवेदन

(नवम आवृत्ति)

मुमुक्षु बंधुओने नित्य उपयोगी एवी आ ‘नित्यक्रम’ पुस्तकनी बालबोध लिपिमां प्रथम आवृत्ति ‘‘श्रीमद् राजचंद्र मुमुक्षु मंडल’ तरफथी सं. २००९ मां प्रसिद्ध थई हती. ते पछी बीजी त्रण आवृत्तिओ श्री राजमंदिर, आहोर तरफथी सं. २०१९, सं. २०२२ अने सं. २०३० मां प्रगट करवामां आवी हती. हिंदीभाषी मुमुक्षुओने अति उपयोगी जणायाथी आ पुस्तकनुं प्रकाशन ते पछीथी श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, अगास तरफथी करवामां आव्युं हतुं. आज सुधीमां, सळंग कुल आठ आवृत्ति आ पुस्तकनी प्रकाशित थई चूकी छे अने तेनी ज आ पुनरावृत्ति छे.

प. उ. प. पू. प्रभुश्रीजीनी आज्ञानुसार आ आश्रममां भक्ति-स्वाध्यायनो क्रम घणां वर्षोथी नियमितपणे चाले छे; ते क्रमनी संकलनारूप आ पुस्तक छे. गुजराती प्रथमावृत्तिनुं निवेदन पण साथे ज आप्युं छे तेथी पुस्तक-परिचय सहेजे थशे.

सर्व मुमुक्षुओने आ पुस्तकनो विनयपूर्वक सदुपयोग आत्मश्रेय साधवामां प्रबल निमित्तरूप बनो ए ज शुभेच्छा.

—प्रकाशक

प्रथमावृत्तिनुं निवेदन

(गुजराती आवृत्ति)

दररोज श्रीमद् राजचंद्र आश्रममां नित्य नियम तरीके जे जे पाठो बोलाय छे, ते भिन्न भिन्न पुस्तकोमां होवाथी नवीन मुमुक्षुओने ते शोधवामां मुश्केली पडती, तथा परगाम जवुं होय त्यारे अनेक पुस्तको साथे लई जवां पडतां; ए मुश्केली दूर थाय ए भावनाथी धामण गामना एक मुमुक्षुभाई धीरजभाईए, बधा पाठ एक ज पुस्तकमां छपाय तो सारुं एवी इच्छा दर्शावेली अने ते अर्थे कुल खर्च आ प्रकाशनखाताने आपवा तेमणे कहेलुं. तदनुसार आ पुस्तक प्रगट थयुं छे, ते सर्व मुमुक्षु भाईबहेनोनी जरूर पूरी पाडे तेवुं छे. भाई धीरजभाईने आवा सर्व मंडळने हितकारी विचार करवा बदल अने ते अर्थे आर्थिक मददनी पण सगवड करी आपवा बदल धन्यवाद घटे छे.

श्रीमद् राजचंद्र आश्रम,
अगास,
जेठ सुद ५, २००७

अध्यात्मप्रेमी,
ब्र० गोवर्धनदास

अनुक्रमणिका

क्रमांक	विषय		पृष्ठ
१.	मंगलाचरण	...	१
२.	जिनेश्वरनी वाणी	...	२
३.	प्रातःकाळनी भावनानां पदो	...	२
४.	आत्मजागृतिनां पदो	...	३
५.	स्वात्मवृत्तांत काव्य (धन्य रे दिवस)	...	३
६.	जड ने चैतन्य बन्ने	...	५
७.	श्री सद्‌गुरुभक्ति रहस्य (वीश दोहरा)	...	६
८.	आलोचना पाठ	...	८
९.	सामायिक पाठ (छ आवश्यक कर्म)	...	११
१०.	मेरी भावना	...	१७
११.	कैवल्यबीज शुं ? (यम नियम)	...	१९
१२.	क्षमापना	...	२०
१३.	छ पदनो पत्र	...	२१
१४.	वीतरागनो कहेलो	...	२६
१५.	प्रातःकाळनी स्तुति	...	२७
१६.	चैत्यवंदन सूत्रो	...	२९
१७.	वंदन तथा प्रणिपातस्तुति	...	३८
१८.	श्री सद्‌गुरु उपकार महिमा	...	३९
१९.	श्री सद्‌गुरु स्तुति	...	३९
२०.	प्रभु-उपकार	...	४०
२१.	जिनेन्द्र पंचकल्याणक	...	४१
२२.	आठ दृष्टिनी सज्झाय	...	५१
२३.	छूटक पदो	...	६०
२४.	गुणस्थान आरोहण क्रम (अपूर्व अवसर)	...	६१

२५.	मूळमार्ग रहस्य	...	६४
२६.	सायंकाळनी स्तुति तथा देववंदन	...	६५
२७.	आरती	...	६९
२८.	मंगल दीवो	...	७०
२९.	भक्तिनो उपदेश (शुभ शीतळता)	...	७२
३०.	बिना नयन पावे नहीं	...	७२
३१.	अमूल्य तत्त्वविचार (बहु पुण्यकेरा)	...	७३
३२.	ब्रह्मचर्य विषे सुभाषित	...	७४
३३.	श्री आत्मसिद्धिशास्त्र	...	७५
३४.	भक्तिना छंदो	...	८९
३५.	स्तवनो –		
	(१) श्री आनंदघनजीकृत चोवीशी, श्री देवचंद्रजी कृत चोवीशी, श्री यशोविजयजीकृत चोवीशी तथा श्री मोहनविजयजीकृत चोवीशी	...	९३
	(२) श्री देवचंद्रजी तथा श्री यशोविजयजीकृत विहरमान जिनस्तवनो; श्री यशोविजयजी कृत वर्तमान चोवीशी तथा देवचंद्रजी कृत गतचोवीशी	...	१९१
	(३) श्री यशोविजयजीकृत तेर स्तवनो	...	२५६
	(४) छूटक स्तवनो	...	२६५
३६.	क्षमापनापाठनुं पद्य	...	२७१
३७.	बृहद् आलोचना	...	२७३
३८.	स्तुति तथा थोयो	...	२९३
३९.	पचखाण	...	२९५

नित्यक्रम

"धर्मध्यान लक्ष्यार्थथी[1] थाय
ए ज आत्महितनो रस्तो छे,
चित्तना संकल्पविकल्पथी
रहित थवुं ए महावीरनो
मार्ग छे. अलिप्तभावमां
रहेवुं ए विवेकीनुं
कर्तव्य छे."

—श्रीमद् राजचंद्र

१. आत्माना लक्षे

ॐ

अहो सत्पुरुषनां वचनामृत,
मुद्रा अने सत्समागम !
सुषुप्त चेतनने जागृत करनार,
पडती वृत्तिने स्थिर राखनार,
दर्शनमात्रथी पण निर्दोष
अपूर्व स्वभावने प्रेरक,
स्वरूप प्रतीति, अप्रमत्त संयम
अने
पूर्ण वीतराग निर्विकल्प स्वभावनां
कारणभूत;–
छेल्ले अयोगी स्वभाव प्रगट करी
अनंत अव्याबाध स्वरूपमां
स्थिति करावनार !
त्रिकाळ जयवंत वर्तो !
ॐ शांतिः शांतिः शांतिः

–श्रीमद् राजचंद्र

ॐ

श्रीमद् सद्‌गुरवे नमोनमः

श्रीमद् राजचंद्र आश्रम

नित्यक्रम

(प्रातःकालनी भक्तिनो क्रम : समय ४-६।।)

१. मंगलाचरण

अहो ! श्री सत्पुरुषके वचनामृतं जगहितकरम्,
मुद्रा अरु सत्समागम सुति चेतना जागृतकरम्;
गिरती वृत्ति स्थिर रखे दर्शन मात्रसें निर्दोष है,
अपूर्व स्वभावके प्रेरक, सकल सद्‌गुण कोष है.

स्वस्वरूपकी प्रतीति अप्रमत्त संयम धारणम्,
पूरणपणे वीतराग निर्विकल्पताके कारणम्;
अंते अयोगी स्वभाव जो ताके प्रगट करतार है,
अनंत अव्याबाध स्वरूपमें स्थिति करावनहार है.

सहजात्म सहजानंद आनंदघन नाम अपार है,
सत्देव धर्म स्वरूप-दर्शक सुगुरु पारावार है;
गुरुभक्तिसें लहो तीर्थपतिपद शास्त्रमें विस्तार है,
त्रिकाळ जयवंत वर्तो श्री गुरुराजने नमस्कार है.

एम प्रणमी श्री गुरुराजके पद आप-परहित कारणम्,
जयवंत श्री जिनराज (गुरुराज)वाणी करुं तास उच्चारणम्;
भवभीत भविक जे भणे, भावे, सुणे समजे सद्दहे,
श्री रत्नत्रयनी ऐक्यता लही, सही सो निज पद लहे.
(सही सो परम पद लहे.)

२. जिनेश्वरनी वाणी

अनंत अनंत भाव भेदथी भरेली भली,
अनंत अनंत नय निक्षेपे व्याख्यानी छे;
सकल जगत हितकारिणी, हारिणी मोह,
तारिणी भवाब्धि, मोक्षचारिणी प्रमाणी छे;
उपमा आप्यानी जेने तमा राखवी ते व्यर्थ,
आपवाथी निज मति मपाई में मानी छे;
अहो ! राजचंद्र, बाळ ख्याल नथी पामता ए,
जिनेश्वर तणी वाणी जाणी तेणे जाणी छे.
(गुरुराज तणी वाणी जाणी तेणे जाणी छे.)

सं. १९४१ —श्रीमद् राजचंद्र

३. प्रातःकालनी भावनानां पदो

तीन भुवन चूडा रतन, सम श्री जिनके पाय;
नमत पाईए आप पद, सब विधि बंध नशाय.

आस्त्रव भाव अभावतें, भये स्वभाव स्वरूप;
नमो सहज आनंदमय, अचलित अमल अनुप.

करॊं अभाव भवभाव सब, सहज भाव निज पाय;
जय अपुनर्भव भावमय, भये परम शिवराय.

कर्म शांतिके अर्थी जिन, नमो शांति करतार;
प्रशमित दुरित समूह सब, महावीर जिन सार.

ज्ञान ध्यान वैराग्यमय, उत्तम जहां विचार;
ए भावे शुभ भावना, ते ऊतरे भव पार.

– त्रण मंत्रनी माळा –

सहजात्मस्वरूप परमगुरु.
आतमभावना भावतां जीव लहे केवळज्ञान रे.
परमगुरु निर्ग्रंथ सर्वज्ञदेव.

---

४. आत्मजागृतिनां पदो

अबद्धस्पृष्ट, अनन्य, नियत, अविशेष, असंयुक्त;
जल-कमळ, मृत्तिका, समुद्र, सुवर्ण, उदक उष्ण.

उष्ण उदक जेवो रे आ संसार छे,
तेमां एक तत्त्व मोटुं रे समजण सार छे.

शुद्धता विचारे ध्यावे, शुद्धतामें केलि करे;
शुद्धतामें स्थिर वहे, अमृतधारा वरसे.

एनुं स्वप्ने जो दर्शन पामे रे, तेनुं मन न चढे बीजे भामे रे;
थाय सद्‌गुरुनो लेश प्रसंग रे, तेने न गमे संसारीनो संग रे.
हसतां रमतां प्रगट हरि देखुं रे, मारुं जीव्युं सफळ तव लेखुं रे;
मुक्तानंदनो नाथ विहारी रे, संतो जीवनदोरी अमारी रे.

---

*५. स्वात्मवृत्तांत काव्य

धन्य रे दिवस आ अहो,
जागी रे शांति अपूर्व रे;
दश वर्षे रे धारा ऊलसी,
मट्यो उदयकर्मनो गर्व रे. धन्य० १

---

* आ नित्यक्रममां नथी परंतु तत्त्वज्ञानमांथी विविध पद आवां चिह्नवाळां स्थाने प्रसंगोपात्त उमेराय छे.

ओगणीससें ने एकत्रीसे,
आव्यो अपूर्व अनुसार रे;
ओगणीससें ने बेताळीसे,
अद्‌भुत वैराग्य धार रे. धन्य० २

ओगणीससें ने सुडताळीसे,
समकित शुद्ध प्रकाश्युं रे;
श्रुत अनुभव वधती दशा,
निज स्वरूप अवभास्युं रे. धन्य० ३

त्यां आव्यो रे उदय कारमो,
परिग्रह कार्य प्रपंच रे;
जेम जेम ते हडसेलीए,
तेम वधे न घटे एक रंच रे. धन्य० ४

वधतुं एम ज चालियुं,
हवे दीसे क्षीण कांई रे;
क्रमे करीने रे ते जशे,
एम भासे मनमांहीं रे. धन्य० ५

यथा हेतु जे चित्तनो,
सत्य धर्मनो उद्धार रे;
थशे अवश्य आ देहथी,
एम थयो निरधार रे. धन्य० ६

आवी अपूर्व वृत्ति अहो,
थशे अप्रमत्त योग रे;
केवळ लगभग भूमिका,
स्पर्शीने देह वियोग रे. धन्य० ७

अवश्य कर्मनो भोग छे,
भोगववो अवशेष रे;
तेथी देह एक ज धारींने,
जाशुं स्वरूप स्वदेश रे. धन्य० ८

—श्रीमद् राजचंद्र

---

(६)*

१. जड ने चैतन्य बन्ने द्रव्यनो स्वभाव भिन्न,
सुप्रतीतपणे बन्ने जेने समजाय छे;
स्वरूप चेतन निज, जड छे संबंध मात्र,
अथवा ते ज्ञेय पण परद्रव्यमांय छे;
एवो अनुभवनो प्रकाश उल्लासित थयो,
जडथी उदासी तेने आत्मवृत्ति थाय छे;
कायानी विसारी माया, स्वरूपे समाया एवा,
निर्ग्रंथनो पंथ भव-अन्तनो उपाय छे.

२. देह जीव एकरूपे भासे छे अज्ञान वडे,
क्रियानी प्रवृत्ति पण तेथी तेम थाय छे;
जीवनी उत्पत्ति अने रोग, शोक, दुःख, मृत्यु,
देहनो स्वभाव जीव पदमां जणाय छे;
एवो जे अनादि एकरूपनो मिथ्यात्वभाव,
ज्ञानीनां वचन वडे दूर थई जाय छे;
भासे जड चैतन्यनो प्रगट स्वभाव भिन्न,
बन्ने द्रव्य निज निज रूपे स्थित थाय छे.

मुंबई, सं० १९५६ —श्रीमद् राजचंद्र

महत्तत्त्व महनीयमहः, महाधाम गुणधाम;
चिदानंद परमातमा, वंदो रमता राम.

---

७. श्री सद्‌गुरुभक्तिरहस्य

(भक्तिना वीश दोहरा)

हे प्रभु ! हे प्रभु ! शुं कहुं, दीनानाथ दयाळ;
हुं तो दोष अनंतनुं, भाजन छुं करुणाळ. १
शुद्ध भाव मुजमां नथी, नथी सर्व तुजरूप;
नथॉ लघुता के दीनता, शुं कहुं परमस्वरूप ? २
नथॉ आज्ञा गुरुदेवनी, अचळ करी उरमांहीं;
आप तणो विश्वास दृढ, ने परमादर नाहीं. ३
जोग नथी सत्संगनो, नथॉ सत्सेवा जोग;
केवळ अर्पणता नथी, नथॉ आश्रय अनुयोग. ४
'हुं पामर शुं करॉ शकुं?' एवो नथी विवेक;
चरण शरण धीरज नथी, मरण सुधीनी छेक. ५
अचिंत्य तुज माहात्म्यनो, नथी प्रफुल्लित भाव;
अंश न एके स्नेहनो, न मळे परम प्रभाव. ६
अचळरूप आसक्ति नहि, नहीं विरहनो ताप;
कथा अलभ तुज प्रेमनी, नहि तेनो परिताप. ७
भक्तिमार्ग प्रवेश नहि, नहीं भजन दृढ भान;
समज नहीं निज धर्मनी, नहि शुभ देशे स्थान. ८
काळदोष कळिथी थयो, नहि मर्यादा धर्म;
तोय नहीं व्याकुळता, जुओ प्रभु मुज कर्म. ९

सेवाने प्रतिकूल जे, ते बंधन नथी त्याग;
देहेंद्रिय माने नहीं, करे बाह्य पर राग. १०

तुज वियोग स्फुरतो नथी, वचन नयन यम नाहीं;
नहि उदास अनभक्तथी, तेम गृहादिक मांहीं. ११

अहंभावथी रहित नहि, स्वधर्म संचय नाहीं;
नथी निवृत्ति निर्मळपणे, अन्य धर्मनी कांई. १२

एम अनंत प्रकारथी, साधन रहित हुंय;
नहीं एक सद्गुण पण, मुख बतावुं शुंय? १३

केवळ करुणा-मूर्ति छो, दीनबंधु दीननाथ;
पापी परम अनाथ छुं, ग्रहो प्रभुजी हाथ. १४

अनंत काळथी आथड्यो, विना भान भगवान;
सेव्या नहि गुरु संतने, मूक्युं नहि अभिमान. १५

संत चरण आश्रय विना, साधन कर्यां अनेक;
पार न तेथी पामियो, ऊग्यो न अंश विवेक. १६

सहु साधन बंधन थयां, रह्यो न कोई उपाय;
सत्साधन समज्यो नहीं, त्यां बंधन शुं जाय? १७

प्रभु प्रभु लय लागी नहीं, पड्यो न सद्गुरु पाय;
दीठा नहि निज दोष तो, तरीए कोण उपाय? १८

अधमाधम अधिको पतित, सकळ जगतमां हुंय;
ए निश्चय आव्या विना, साधन करशे शुंय? १९

पडी पडी तुज पदपंकजे, फरी फरी मागुं ए ज;
सद्गुरु संत स्वरूप तुज, ए दृढता करी दे ज. २०

राळज, सं० १९४७ —श्रीमद् राजचंद्र

८. आलोचना पाठ

(दोहा)

वंदो पांचों परमगुरु, चौवीसौं जिनराज;
कहूँ शुद्ध आलोचना, शुद्ध करनके काज. १

सखी छंद (१४ मात्रा)

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी;
तिनकी अब निवृत्ति काजा, तुम शरन लही जिनराजा. २

इक बे ते चउ इन्द्री वा, मनरहित सहित जे जीवा;
तिनकी नहीं करुना धारी, निरदई व्है घात विचारी. ३

समरंभ समारंभ आरंभ, मन वच तन कीने प्रारंभ;
कृत कारित मोदन करिकैं, क्रोधादि चतुष्टय धरिकैं. ४

शत आठ जु इम भेदनतैं, अघ कीने परछेदनतैं;
तिनकी कहूँ कोलो कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी. ५

विपरीत एकांत विनयके, संशय अज्ञान कुनयके;
वश होय घोर अघ कीने, वचतैं नहि जात कहीने. ६

कुगुरुनकी सेव जु कीनी, केवल अदयाकर भीनी;
या विधि मिथ्यात भ्रमायो, चहुंगतिमधि दोष उपायो. ७

हिंसा पुनि झूठ जु चोरी, परवनिता सों दृग जोरी;
आरंभ परिग्रह भीनो, पन पाप जु या विधि कीनो. ८

सपरस रसना घ्रानको, चख कान विषय सेवनको;
बहु करम किये मन माने, कछु न्याय अन्याय न जाने. ९

फल पंच उदंबर खाये, मधु मांस मद्य चित्त चाहे;
नहि अष्ट मूल गुणधारी, विसन जु सेये दुःखकारी. १०

दुईबीस अभख जिन गाये, सो भी निशदिन भुंजाये;
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यों त्यों कर उदर भरायो. ११

अनंतान जु बंधी जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो;
संज्वलन चौकरि गुनिये, सब भेद जु षोडश मुनिये. १२

परिहास अरति रति शोग, भय ग्लानि तिवेद संजोग;
पनवीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम. १३

निद्रावश शयन कराई, सुपने मधि दोष लगाई;
फिर जागी विषयवन धायो, नानाविध विषफल खायो. १४

किये आहार निहार विहारा, इनमें नहि जतन विचारा;
बिन देखी धरी उठाई, बिन शोधी भोजन खाई. १५

तब ही परमाद सतायो, बहुविध विकलप उपजायो;
कछु सुधि बुधि नाहि रही है, मिथ्यामति छाय गई है. १६

मरजादा तुम ढिग लीनी, ताहूमें दोष जु कीनी;
भिन भिन अब कैसे कहिये, तुम ज्ञानविषैं सब पईये. १७

हा ! हा ! मैं दुठ अपराधी, त्रस जीवन राशि विराधी;
थावरकी जतन न कीनी, उरमें करुना नहि लीनी. १८

पृथिवी बहु खोद कराई, महलादिक जागां चिनाई;
बिन गाल्यो पुनि जल ढोल्यो, पंखातैं पवन विलोल्यो. १९

हा ! हा ! मैं अदयाचारी, बहु हरित जु काय विदारी;
या मधि जीवनके खंदा, हम खाये धरी आनंदा. २०

हा ! मैं परमाद बसाई, बिन देखे अगनि जलाई;
ता मध्य जीव जे आये, ते हू परलोक सिधाये. २१
विंधो अन्न राति पिसायो, ईंधन बिनसोधि जलायो;
झाडू ले जागां बुहारी, चिंटी आदिक जीव विदारी. २२
जल छानि जीवानी कीनी, सोहू पुनि डारी जु दीनी;
नहि जल थानक पहुँचाई, किरिया बिन पाप उपाई. २३
जल मल मोरिनमें गिरायो, कृमिकुल बहु घात करायो;
नदियनि बिच चीर धुवाये, कोसनके जीव मराये. २४
अन्नादिक शोध कराई, तामैं जु जीव निसराई;
तिनका नहि जतन कराया, गरियारे धूप डराया. २५
पुनि द्रव्य कमावन काजे, बहु आरंभ हिंसा साजे;
किये तिसनावश भारी, करुना नहि रंच विचारी. २६
इत्यादिक पाप अनंता, हम कीने श्री भगवंता;
संतति चिरकाल उपाई, वानीतैं कहिय न जाई. २७
ताको जु उदय जब आयो, नानाविध मोहि सतायो;
फल भुंजत जिय दुःख पावे, वचतैं कैसे करि गावै. २८
तुम जानत केवलज्ञानी, दुःख दूर करो शिवथानी;
हम तौ तुम शरन लही है, जिन तारन बिरुद सही है. २९
जो गांवपति इक होवै, सो भी दुखिया दुःख खोवै;
तुम तीन भुवनके स्वामी, दुःख मेटो अंतरजामी. ३०
द्रौपदीको चीर बढायो, सीता प्रति कमल रचायो;
अंजनसे किये अकामी, दुःख मेटो अंतरजामी. ३१

मेरे अवगुण न चितारो, प्रभु अपनो बिरुद निहारो;
सब दोषरहित करौं स्वामी, दुःख मेटहु अंतरजामी. ३२

इन्द्रादिक पदवी न चाहूँ, विषयनिमें नाहि लुभाऊँ;
रागादिक दोष हरीजे, परमातम निजपद दीजे. ३३

(दोहा)

दोषरहित जिनदेवजी, निजपद दीज्यो मोय;
सब जीवनकैं सुख बढै, आनंद मंगल होय. ३४

अनुभव माणिक पारखी, जौहरी आप जिनंद;
येही वर मोहि दीजिये, चरन शरन आनंद. ३५

(आलोचना पाठ समाप्त)

---

९. सामायिक-पाठ (छ आवश्यक कर्म)

१. प्रतिक्रमण कर्म

काल अनंत भ्रम्यो जगमें सहिये दुःख भारी,
जन्म मरण नित किये पापको व्है अधिकारी;
कोडि भवांतर मांहि मिलन दुर्लभ सामायिक,
धन्य आज मैं भयो जोग मिलियो सुखदायक. १

हे सर्वज्ञ जिनेश! किये जे पाप जु मैं अब,
ते सब मन वच काय योगकी गुप्ति बिना लभ;
आप समीप हजूरमांहि मैं खडो खडो सब,
दोष कहूँ सो सुनो करो नठ दुःख देहि जब. २

क्रोध मान मद लोभ मोह मायावश प्रानी,
दुःखसहित जे किये दया तिनकी नहि आनी;
बिना प्रयोजन एक इन्द्री बि ति चउ पंचेंद्रिय,
आप प्रसादहि मिटै दोष जो लग्यो मोहि जिय. ३

आपसमें इक ठौर थापि करि जे दुःख दीने,
पेलि दिये पगतलें दाबि करि प्राण हरीने;
आप जगतके जीव जिते तिन सबके नायक,
अरज करूँ मैं सुनो, दोष मेटो दुःखदायक. ४

अंजन आदिक चोर महा घनघोर पापमय,
तिनके जे अपराध भये ते क्षमा क्षमा किय;
मेरे जे अब दोष भये ते क्षमहु दयानिधि,
यह पडिकोणो कियो आदि षट् कर्ममांहि विधि. ५

२. प्रत्याख्यान कर्म

जो प्रमाद वश होय विराधे जीव घनेरे,
तिनको जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे;
सो सब झूठो होहु जगतपतिके परसादै,
जा प्रसादतैं मिले सर्व सुख, दुःख न लाधैं. ६

मैं पापी निर्लज्ज दयाकरि हीन महाशठ,
किये पाप अति घोर पापमति होय चित्त दुठ;
निंदूँ हूँ मैं बारबार निज जियको गरहूँ,
सब विधि धर्म उपाय पाय फिरि पापहि करहूँ. ७

दुर्लभ है नरजन्म तथा श्रावककुल भारी,
सत्संगति-संयोग धर्म जिन श्रद्धा धारी;

जिन वचनामृत धार समावर्तै जिनवानी,
तो हू जीव संहारे धिक् धिक् धिक् हम जानी. ८

इन्द्रियलंपट होय खोय निज ज्ञान जमा सब,
अज्ञानी जिम करै तिसी विधि हिंसक व्है अब;
गमनागमन करंतो जीव विराधे भोले,
ते सब दोष किये निंदूँ अब मन वच तोले. ९

आलोचन विधि थकी दोष लागे जु घनेरे,
ते सब दोष विनाश होउ तुमतैं जिन मेरे;
बारबार इस भाँति मोह मद दोष कुटिलता,
ईर्षादिकतैं भये निंदिये जे भयभीता. १०

३. सामायिक कर्म

सब जीवनमें मेरे समताभाव जग्यो है,
सब जिय मो सम समता राखो भाव लग्यो है;
आर्त्त रौद्र द्वय ध्यान छांडि करिहूँ सामायिक,
संयम मो कब शुद्ध होय यह भाव बधायिक. ११

पृथ्वी जल अर अग्नि वायु चउ काय वनस्पति,
पंचहि थावर मांहिं तथा त्रसजीव बसैं जित;
बे इन्द्रिय तिय चउ पंचेन्द्रियमांहिं जीव सब,
तिनसैं क्षमा कराऊँ मुझपर क्षमा करो अब. १२

इस अवसरमें मेरे सब सम कंचन अरु तृण,
महल मसान समान शत्रु अरु मित्र हु सम गण;
जन्मन मरन समान जान हम समता कीनी,
सामायिकका काल जितै यह भाव नवीनी. १३

मेरो है इक आतम तामैं ममत जु कीनो,
और सबै मम भिन्न जानि समतारस भीनो;
मात पिता सुत बंधु मित्र तिय आदि सबै यह,
मौतैं न्यारे जानि यथारथ रूप कर्यो गह. १४

मैं अनादि जगजालमांहिं फँसि रूप न जाण्यो,
एकेंद्रिय दे आदि जंतुको प्राण हराण्यो;
ते अब जीवसमूह सुनो मेरी यह अरजी,
भवभवको अपराध क्षमा कीज्यो करी मरजी. १५

४. स्तवन कर्म

नमौं रिषभ जिनदेव अजित जिन जीति कर्मको,
संभव भवदुःख हरन करन अभिनंद शर्मको;
सुमति सुमतिदातार तार भवसिंधु पार कर,
पद्मप्रभ पद्माभ भानि भवभीति प्रीति धर. १६

श्री सुपार्श्व कृतपाश नाश भव जास शुद्धकर,
श्री चंद्रप्रभ चंद्रकांति सम देहकांति धर;
पुष्पदंत दमि दोषकोष भवि पोष रोष हर,
शीतल शीतलकरन हरन भवताप दोष हर. १७

श्रेयरूप जिनश्रेय धेय नित सेय भव्यजन,
वासुपूज्य शत पूज्य वासवादिक भवभय हन;
विमल विमलमति देन अंतगत है अनंत जिन,
धर्म शर्म शिवकरन शांति जिन शांति विधायिन. १८

कुंथु कुंथुमुख जीवपाल अरनाथ जालहर,
मल्लि मल्लसम मोहमल्ल मारन प्रचारधर;

मुनिसुव्रत व्रतकरन नमत सुरसंघहि नमिजिन,
नेमिनाथ जिन नेमि धर्मरथमांहि ज्ञानधन. १९

पार्श्वनाथ जिन पार्श्व उपल सम मोक्षरमापति,
वर्द्धमान जिन नमौं वमौं भवदुःख कर्मकृत;
या विधि मैं जिनसंघरूप चउवीस संख्यधर,
स्तऊँ नमूँ हूँ बारबार वंदूँ शिवसुखकर. २०

५. वंदना कर्म

वंदूँ मैं जिनवीर धीर महावीर सुसन्मति,
वर्द्धमान अतिवीर वंदिहौं मन वच तन कृत;
त्रिशला तनुज महेश धीश विद्यापति वंदूँ,
वंदूँ नित प्रति कनकरूपतनु पाप निकंदूँ. २१

सिद्धारथ नृपनंद द्वंद दुःख दोष मिटावन,
दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल जगजीव उद्धारन;
कुंडलपुर करि जन्म जगत जिय आनंदकारन,
वर्ष बहत्तरि आयु पाय सबही दुःख-टारन. २२

सप्त हस्त तनु तुंग भंग कृत जन्ममरनभय,
बाल ब्रह्ममय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय;
दे उपदेश उद्धारि तारि भवसिंधु जीवघन,
आप बसे शिवमांहि ताहि बंदौं मनवचतन. २३

जाके वंदन थकी दोष दुःख दूरहि जावे,
जाके वंदन थकी मुक्ति तिय सन्मुख आवे;
जाके वंदन थकी वंद्य होवैं सुरगनके,
ऐसे वीर जिनेश वंदिहौं क्रम युग तिनके. २४

सामायिक षट् कर्ममांहि वंदन यह पंचम,
वंदे वीर जिनेंद्र इन्द्र शत वंद्य वंद्य मम;

जन्ममरण भय हरो करो अघशांति शांतिमय,
मैं अघकोश सुपोष दोषको दोष विनाशय. २५

६. कायोत्सर्ग कर्म

कायोत्सर्ग विधान करूँ अंतिम सुखदाई,
काय त्यजनमय होय काय सबको दुःखदाई;
पूरव दक्षिण नमूँ दिशा पश्चिम उत्तर मैं,
जिनगृह वंदन करूँ हरूँ भव पाप तिमिर मैं. २६

शिरोनति मैं करूँ नमूँ मस्तक कर धरिकैं,
आवर्तादिक क्रिया करूँ मनवच मद हरिकैं;
तीनलोक जिनभवनमांहि जिन हैं जु अकृत्रिम,
कृत्रिम हैं द्वय अर्द्ध द्वीपमांहि वंदौं जिम. २७

आठकोडिपरि छप्पन लाख जु सहस सत्याणुं,
च्यारि शतकपरि असी एकजिनमंदिर जाणुं;
व्यंतर ज्योतिषीमांहि संख्यरहिते जिनमंदिर,
जिनगृह वंदन करूँ हरहु मम पाप संघकर. २८

सामायिक सम नाहिं और कोउ वैर मिटायक,
सामायिक सम नाहिं और कोउ मैत्री दायक;
श्रावक अणुव्रत आदि अंत सप्तम गुणथानक,
यह आवश्यक किये होय निश्चय दुःखहानक. २९

जे भवि आतमकाजकरण उद्यमके धारी,
ते सब काज विहाय करो सामायिक सारी;
राग दोष मद मोह क्रोध लोभादिक जे सब,
बुध 'महाचंद्र' बिलाय जाय तातैं कीज्यौ अब. ३०

(सामायिकपाठ समाप्त)

१०. मेरी भावना

सद्‌गुरु श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठपद,—सेवाथी शुद्ध ज्ञान थशे;
अवर उपासन कोटि करो पण, श्रीहरिथी नहि हेत थशे.
(ए देशी)

जिसने रागद्वेषकामादिक जीते, सब जग जान लिया,
सब जीवोंको मोक्षमार्गका निःस्पृह हो, उपदेश दिया;
बुद्ध वीर जिन हरि हर ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो,
भक्तिभावसें प्रेरित हो यह, चित्त उसीमें लीन रहो. १

विषयोंकी आशा नहि जिनके, साम्यभाव धन रखते हैं,
निज परके हित साधनमें जो, निशदिन तत्पर रहते हैं;
स्वार्थ त्यागकी कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं,
ऐसे ज्ञानी साधु जगतके, दुःख समूहको हरते हैं. २

रहे सदा सत्संग उन्हींका, ध्यान उन्हींका नित्य रहे,
उनही जैसी चर्यामें यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे;
नहीं सताऊँ किसी जीवको, झूठ कभी नहि कहा करूँ,
परधन वनिता पर न लुभाऊँ, संतोषामृत पिया करूँ. ३

अहंकारका भाव न रक्खूँ, नहीं किसी पर क्रोध करूँ,
देख दूसरोंकी बढतीको, कभी न ईर्षा-भाव धरूँ;
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल सत्य व्यवहार करूँ,
बने जहाँ तक इस जीवनमें, औरोंका उपकार करूँ. ४

मैत्रीभाव जगतमें मेरा, सब जीवोंसे नित्य रहे,
दीन-दुःखी जीवो पर मेरे, उरसे करुणा स्रोत बहे;
दुर्जन-क्रूर-कुमार्गरतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे,
साम्यभाव रक्खूँ मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे. ५

गुणीजनोंको देख हृदयमें, मेरे प्रेम उमड आवे,
बने जहाँ तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे;
होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे,
गुण-ग्रहणका भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे. ६

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,
लाखों वर्षों तक जीऊँ या, मृत्यु आज ही आ जावे;
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे,
तो भी न्यायमार्गसें मेरा, कभी न पद डिगने पावे. ७

होकर सुखमें मग्न न फूले, दुःखमें कभी न घबरावे,
पर्वत नदी स्मशान भयानक, अटवीसे नहि भय खावे;
रहे अडोल अकंप निरन्तर, यह मन दृढतर बन जावे,
इष्टवियोग-अनिष्टयोगमें, सहनशीलता दिखलावे. ८

सुखी रहें सब जीव जगतके, कोई कभी न घबरावे,
वैर पाप-अभिमान छोड जग, नित्य नये मंगल गावे;
घर घर चर्चा रहे धर्मकी, दुष्कृत दुष्कर हो जावे,
ज्ञानचरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्मफल सब पावे. ९

ईति-भीति व्यापे नहि जगमें, वृष्टि समयपर हुआ करे,
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजाका किया करे;
रोग-मरी-दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्तिसे जिया करे,
परम अहिंसा-धर्म जगतमें, फैल सर्व हित किया करे. १०

फैले प्रेम परस्पर जगमें, मोह दूर पर रहा करे,
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहि, कोई मुखसे कहा करे;
बनकर सब 'युग-वीर' हृदयसे, देशोन्नतिरत रहा करे,
वस्तु स्वरूप विचार खुशीसे, सब दुःख-संकट सहा करे. ११

११. कैवल्यबीज शुं ?

(त्रोटकछंद)

यम नियम संजम आप कियो,
पुनि त्याग बिराग अथाग लह्यो;
वनवास लियो मुख मौन रह्यो,
दृढ आसन पद्म लगाय दियो. १

मन पौन निरोध स्वबोध कियो,
हठजोग प्रयोग सु तार भयो;
जप भेद जपे तप त्यौंहि तपे,
उरसेंहि उदासी लही सबपें. २

सब शास्त्रनके नय धारि हिये,
मत मंडन खंडन भेद लिये;
वह साधन बार अनंत कियो,
तदपि कछु हाथ हजु न पर्यो. ३

अब क्यौं न बिचारत है मनसें,
कछु और रहा उन साधनसें ?
बिन सद्गुरु कोय न भेद लहे,
मुख आगल हैं कह बात कहे ? ४

करुना हम पावत हे तुमकी,
वह बात रही सुगुरु गमकी;
पलमें प्रगटे मुख आगलसें,
जब सद्गुरुचर्न सुप्रेम बसें. ५

तनसें, मनसें, धनसें, सबसें,
गुरुदेवकी आन स्व-आत्म बसें;

तब कारज सिद्ध बने अपनो,
रस अमृत पावहि प्रेम घनो. ६

वह सत्य सुधा दरशावहिंगे,
चतुरांगुल हे दृगसे मिलहे;
रस देव निरंजन को पिवही,
गहि जोग जुगोजुग सो जीॅवही. ७

पर प्रेम प्रवाह बढे प्रभुसें,
सब आगमभेद सुउ̅र बसें;
वह केवलको बीॅज ग्यानि कहे,
निजको अनुभौ बतलाई दिये. ८

राळज, सं० १९४७ —श्रीमद् राजचंद्र

---

१२. क्षमापना

हे भगवान! हुं बहु भूली गयो, में तमारां अमूल्य वचनने लक्षमां लीधां नहीं. तमारां कहेलां अनुपम तत्त्वनो में विचार कर्यो नहीं. तमारां प्रणीत करेलां उत्तम शीलने सेव्युं नहीं. तमारां कहेलां दया, शांति, क्षमा अने पवित्रता में ओळख्यां नहीं. हे भगवन्! हुं भूल्यो, आथड्यो, रझळ्यो अने अनंत संसारनी विटम्बनामां पड्यो छुं. हुं पापी छुं. हुं बहु मदोन्मत्त अने कर्मरजथी करीने मलिन छुं. हे परमात्मा! तमारां कहेलां तत्त्व विना मारो मोक्ष नथी. हुं निरंतर प्रपंचमां पड्यो छुं. अज्ञानथी अंध थयो छुं. मारामां विवेकशक्ति नथी अने हुं मूढ छुं, हुं निराश्रित छुं, अनाथ छुं. नीरागी परमात्मा! हुं हवे तमारुं,

तमारा धर्मनुं अने तमारा मुनिनुं शरण ग्रहुं छुं. मारा अपराध क्षय थई हुं ते सर्व पापथी मुक्त थउं ए मारी अभिलाषा छे. आगळ करेलां पापोनो हुं हवे पश्चात्ताप करुं छुं. जेम जेम हुं सूक्ष्म विचारथी ऊंडो ऊतरुं छुं तेम तेम तमारा तत्त्वना चमत्कारो मारा स्वरूपनो प्रकाश करे छे. तमे नीरागी, निर्विकारी, सच्चिदानंदस्वरूप, सहजानंदी, अनंतज्ञानी, अनंतदर्शी अने त्रैलोक्यप्रकाशक छो. हुं मात्र मारा हितने अर्थे तमारी साक्षीए क्षमा चाहुं छुं. एक पळ पण तमारां कहेलां तत्त्वनी शंका न थाय, तमारा कहेला रस्तामां अहोरात्र हुं रहुं, ए ज मारी आकांक्षा अने वृत्ति थाओ! हे सर्वज्ञ भगवान! तमने हुं विशेष शुं कहुं? तमाराथी कंई अजाण्युं नथी. मात्र पश्चात्तापथी हुं कर्मजन्य पापनी क्षमा इच्छुं छुं.

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः

सं० १९४१ —श्रीमद् राजचंद्र

१३. छ पदनो पत्र

अनन्य शरणना आपनार एवा श्री सद्‌गुरुदेवने अत्यंत भक्तिथी नमस्कार

शुद्ध आत्मस्वरूपने पाम्या छे एवा ज्ञानीपुरुषोए नीचे कह्यां छे ते छ पदने सम्यग्दर्शनना निवासनां सर्वोत्कृष्ट स्थानक कह्यां छे.

प्रथम पद : 'आत्मा छे'. जेम घटपट आदि पदार्थो छे, तेम आत्मा पण छे. अमुक गुण होवाने लीधे जेम घटपट आदि होवानुं प्रमाण छे; तेम स्वपरप्रकाशक एवी चैतन्यसत्तानो प्रत्यक्ष गुण

जेने विषे छे एवो आत्मा होवानुं प्रमाण छे.

बीजुं पद : 'आत्मा नित्य छे'. घटपट आदि पदार्थो अमुक काळवर्ती छे. आत्मा त्रिकाळवर्ती छे. घटपटादि संयोगे करी पदार्थ छे. आत्मा स्वभावे करीने पदार्थ छे; केमके तेनी उत्पत्ति माटे कोई पण संयोगो अनुभवयोग्य थता नथी. कोई पण संयोगी द्रव्यथी चेतनसत्ता प्रगट थवा योग्य नथी, माटे अनुत्पन्न छे. असंयोगी होवाथी अविनाशी छे, केमके जेनी कोई संयोगथी उत्पत्ति न होय, तेनो कोईने विषे लय पण होय नहीं.

त्रीजुं पद : 'आत्मा कर्त्ता छे'. सर्व पदार्थ अर्थक्रिया संपन्न छे. कंई ने कंई परिणामक्रिया सहित ज सर्व पदार्थ जोवामां आवे छे. आत्मा पण क्रियासंपन्न छे. क्रियासंपन्न छे, माटे कर्त्ता छे. ते कर्त्तापणुं त्रिविध श्री जिने विवेच्युं छे; परमार्थथी स्वभावपरिणतिए निजस्वरूपनो कर्त्ता छे. अनुपचरित (अनुभवमां आववायोग्य, विशेष संबंध सहित) व्यवहारथी ते आत्मा द्रव्यकर्मनो कर्त्ता छे. उपचारथी घर, नगर आदिनो कर्त्ता छे.

चोथुं पद : 'आत्मा भोक्ता छे'. जे जे कंई क्रिया छे ते ते सर्व सफळ छे, निरर्थक नथी. जे कंई पण करवामां आवे तेनुं फळ भोगववामां आवे एवो प्रत्यक्ष अनुभव छे. विष खाधाथी विषनुं फळ; साकर खावाथी साकरनुं फळ; अग्निस्पर्शथी ते अग्निस्पर्शनुं फळ, हिमने स्पर्श करवाथी हिमस्पर्शनुं जेम फळ थया विना रहेतुं नथी, तेम कषायादि के अकषायादि जे कंई पण परिणामे आत्मा प्रवर्ते तेनुं फळ पण थवा योग्य ज छे, अने ते थाय छे. ते

क्रियानो आत्मा कर्त्ता होवाथी भोक्ता छे.

पांचमुं पद : 'मोक्षपद छे'. जे अनुपचरित व्यवहारथी जीवने कर्मनुं कर्त्तापणुं निरूपण कर्युं, कर्त्तापणुं होवाथी भोक्तापणुं निरूपण कर्युं, ते कर्मनुं टळवापणुं पण छे; केमके प्रत्यक्ष कषायादिनुं तीव्रपणुं होय पण तेना अनभ्यासथी, तेना अपरिचयथी, तेने उपशम करवाथी, तेनुं मंदपणुं देखाय छे, ते क्षीण थवा योग्य देखाय छे, क्षीण थई शके छे. ते ते बंधभाव क्षीण थई शकवा योग्य होवाथी तेथी रहित एवो जे शुद्ध आत्मस्वभाव ते रूप मोक्षपद छे.

छट्ठुं पद : ते 'मोक्षनो उपाय छे'. जो कदी कर्मबंध मात्र थया करे एम ज होय, तो तेनी निवृत्ति कोई काळे संभवे नहीं; पण कर्मबंधथी विपरीत स्वभाववाळां एवां ज्ञान, दर्शन, समाधि, वैराग्य, भक्त्यादि साधन प्रत्यक्ष छे; जे साधनना बळे कर्मबंध शिथिल थाय छे, उपशम पामे छे, क्षीण थाय छे. माटे ते ज्ञान, दर्शन, संयमादि मोक्षपदना उपाय छे.

श्री ज्ञानीपुरुषोए सम्यक्दर्शनना मुख्य निवासभूत कह्यां एवां आ छ पद अत्रे संक्षेपमां जणाव्यां छे. समीपमुक्तिगामी जीवने सहज विचारमां ते सप्रमाण थवा योग्य छे, परम निश्चयरूप जणावा योग्य छे, तेनो सर्व विभागे विस्तार थई तेना आत्मामां विवेक थवा योग्य छे. आ छ पद अत्यंत संदेहरहित छे, एम परमपुरुषे निरूपण कर्युं छे. ए छ पदनो विवेक जीवने स्वस्वरूप समजवाने अर्थे कह्यो छे. अनादि स्वप्नदशाने लीधे उत्पन्न थयेलो एवो जीवनो अहंभाव, ममत्वभाव ते निवृत्त थवाने अर्थे आ छ

पदनी ज्ञानीपुरुषोए देशना प्रकाशी छे. ते स्वप्नदशाथी रहित मात्र पोतानुं स्वरूप छे, एम जो जीव परिणाम करे, तो सहज मात्रमां ते जागृत थई सम्यक्‌दर्शनने प्राप्त थाय; सम्यक्‌दर्शनने प्राप्त थई स्वस्वभावरूप मोक्षने पामे. कोई विनाशी, अशुद्ध अने अन्य एवा भावने विषे तेने हर्ष, शोक, संयोग, उत्पन्न न थाय. ते विचारे स्वस्वरूपने विषे ज शुद्धपणुं, संपूर्णपणुं, अविनाशीपणुं, अत्यंत आनंदपणुं, अंतररहित तेना अनुभवमां आवे छे. सर्व विभाव-पर्यायमां मात्र पोताने अध्यासथी ऐक्यता थई छे, तेथी केवळ पोतानुं भिन्नपणुं ज छे, एम स्पष्ट—प्रत्यक्ष—अत्यंत प्रत्यक्ष—अपरोक्ष तेने अनुभव थाय छे. विनाशी अथवा अन्य पदार्थना संयोगने विषे तेने इष्ट-अनिष्टपणुं प्राप्त थतुं नथी. जन्म, जरा, मरण, रोगादि बाधारहित संपूर्ण माहात्म्यनुं ठेकाणुं एवुं निजस्वरूप जाणी, वेदी ते कृतार्थ थाय छे. जे जे पुरुषोने ए छ पद सप्रमाण एवां परम पुरुषनां वचने आत्मानो निश्चय थयो छे, ते ते पुरुषो सर्व स्वरूपने पाम्या छे; आधि, व्याधि, उपाधि, सर्व संगथी रहित थया छे, थाय छे अने भाविकाळमां पण तेम ज थशे.

जे सत्पुरुषोए जन्म, जरा, मरणनो नाश करवावाळो, स्वस्वरूपमां सहज अवस्थान थवानो उपदेश कह्यो छे, ते सत्पुरुषोने अत्यंत भक्तिथी नमस्कार छे. तेनी निष्कारण करुणाने नित्य प्रत्ये निरंतर स्तववामां पण आत्मस्वभाव प्रगटे छे, एवा सर्व सत्पुरुषो, तेनां चरणारविंद सदाय हृदयने विषे स्थापन रहो!

जे छ पदथी सिद्ध छे एवुं आत्मस्वरूप ते जेनां वचनने अंगीकार कर्ये सहजमां प्रगटे छे, जे आत्मस्वरूप प्रगटवाथी सर्व

काळ जीव संपूर्ण आनंदने प्राप्त थई निर्भय थाय छे, ते वचनना कहेनार एवा सत्पुरुषना गुणनी व्याख्या करवाने अशक्ति छे, केमके जेनो प्रत्युपकार न थई शके एवो परमात्मभाव ते जाणे कंई पण इच्छ्या विना मात्र निष्कारण करुणाशीलताथी आप्यो, एम छतां पण जेणे अन्य जीवने विषे आ मारो शिष्य छे, अथवा भक्तिनो कर्त्ता छे, माटे मारो छे, एम कदी जोयुं नथी, एवा जे सत्पुरुष तेने अत्यंत भक्तिए फरी फरी नमस्कार हो !

जे सत्पुरुषोए सद्‌गुरुनी भक्ति निरूपण करी छे, ते भक्ति मात्र शिष्यना कल्याणने अर्थे कही छे. जे भक्तिने प्राप्त थवाथी सद्‌गुरुना आत्मानी चेष्टाने विषे वृत्ति रहे, अपूर्व गुण दृष्टिगोचर थई अन्य स्वच्छंद मटे, अने सहेजे आत्मबोध थाय एम जाणीने जे भक्तिनुं निरूपण कर्युं छे, ते भक्तिने अने ते सत्पुरुषोने फरी फरी त्रिकाळ नमस्कार हो !

जो कदी प्रगटपणे वर्तमानमां केवळज्ञाननी उत्पत्ति थई नथी, पण जेना वचनना विचारयोगे शक्तिपणे केवळज्ञान छे एम स्पष्ट जाण्युं छे, श्रद्धापणे केवळज्ञान थयुं छे, विचारदशाए केवळज्ञान थयुं छे, इच्छादशाए केवळज्ञान थयुं छे, मुख्य नयना हेतुथी केवळज्ञान वर्ते छे, ते केवळज्ञान सर्व अव्याबाध सुखनुं प्रगट करनार, जेना योगे सहज मात्रमां जीव पामवा योग्य थयो, ते सत्पुरुषना उपकारने सर्वोत्कृष्ट भक्तिए नमस्कार हो ! नमस्कार हो !!

मुंबई, सं० १९५० —श्रीमद् राजचंद्र

१४

ॐ

वीतरागनो कहेलो परम शांत रसमय धर्म पूर्ण सत्य छे, एवो निश्चय राखवो. जीवना अनधिकारीपणाने लीधे तथा सत्पुरुषना योग विना समजातुं नथी; तोपण तेना जेवुं जीवने संसाररोग मटाडवाने बीजुं कोई पूर्ण हितकारी औषध नथी, एवुं वारंवार चिंतवन करवुं.

आ परम तत्त्व छे, तेनो मने सदाय निश्चय रहो; ए यथार्थ स्वरूप मारा हृदयने विषे प्रकाश करो, अने जन्ममरणादि बंधनथी अत्यंत निवृत्ति थाओ ! निवृत्ति थाओ ! !

हे जीव ! आ क्लेशरूप संसार थकी, विराम पाम, विराम पाम; कांईक विचार, प्रमाद छोडी जागृत था ! जागृत था ! ! नहीं तो रत्नचिंतामणि जेवो आ मनुष्यदेह निष्फळ जशे.

हे जीव ! हवे तारे सत्पुरुषनी आज्ञा निश्चय उपासवा योग्य छे.

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः

—श्रीमद् राजचंद्र

हे काम ! हे मान ! हे संगउदय !
हे वचनवर्गणा ! हे मोह ! हे मोहदया !
हे शिथिलता ! तमे शा माटे अंतराय करो छो ?
परम अनुग्रह करीने हवे अनुकूल थाओ ! अनुकूल थाओ !

—श्रीमद् राजचंद्र

---

१५. प्रातःकालनी स्तुति

महादेव्याः कुक्षिरत्नं, [१]शब्दजीतवरात्मजम्;
राजचंद्रमहं वंदे, तत्त्वलोचनदायकम्. १

जय गुरुदेव ! सहजात्मस्वरूप, परमगुरु, शुद्धचैतन्यस्वामी.

ॐकारं बिंदुसंयुक्तं, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः
कामदं मोक्षदं चैव, ॐकाराय नमोनमः २

मंगलमय मंगलकरण, वीतराग विज्ञान;
नमो ताहि जाते भये, अरिहंतादि महान. ३

विश्वभाव व्यापि तदपि, एक विमल चिद्रूप;
ज्ञानानंद महेश्वरा, जयवंता जिनभूप. ४

महत्तत्त्व महनीय महः महाधाम गुणधाम;
चिदानंद परमातमा, वंदो रमता राम. ५

तीन भुवन चूडारतन, सम श्री जिनके पाय;
नमत पाईए आप पद, सब विधि बंध नशाय. ६

नमुं भक्तिभावे, ऋषभ जिन शांति अघ हरो,
तथा नेमि पार्श्व, प्रभु मम सदा मंगल करो;
महावीरस्वामी, भुवनपति कापो कुमतिने,
जिना शेषा जे ते, सकल मुज आपो सुमतिने. ७

अर्हंतो भगवंत इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धिस्थिताः
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः
श्रीसिद्धान्तसुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः
पंचै ते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वंतु वो मंगलम्. ८

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणा–
मुद्योतकं दलितपापतमोवितानम्

१. पाठान्तर : शब्दजीतरवात्मजम्

सम्यक्प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा–
वालंबनं भवजले पततां जनानाम्. ९

यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्वबोधा–
दुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः
स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैः
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्. १०

दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पापनाशनम्;
दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम्. ११

दर्शनाद् दुरितध्वंसि, वंदनाद् वांच्छितप्रदः
पूजनात् पूरकः श्रीणां, जिनः साक्षात् सुरद्रुमः १२

प्रभुदर्शन सुखसंपदा, प्रभुदर्शन नवनिधि;
प्रभुदर्शनसें पामीए, सकल मनोरथ-सिद्धि. १३

जीवडा जिनवर पूजीए, पूजानां फळ होय;
राज नमे प्रजा नमे, आण न लोपे कोय. १४

कुंभे बांध्युं जळ रहे, जळ विण कुंभ न होय;
(त्यम) ज्ञाने बांध्युं मन रहे, (सद्)गुरु विण ज्ञान न होय. १५

गुरु दीवो, गुरु देवता, गुरु विण घोर अंधार;
जे गुरु वाणी वेगळा, रडवडीआ संसार. १६

तनकर मनकर वचनकर, देत न काहु दुःख;
कर्म रोग पातिक झरे, निरखत सद्गुरुमुख. १७

दरखतसें फल गिर पड्या, बूझी न मनकी प्यास;
गुरु मेली गोविंद भजे, मिटे न गर्भावास. १८

भावे जिनवर पूजीए, भावे दीजे दान;
भावे भावना भाविये, भावे केवळ ज्ञान. १९

त्वं माता त्वं पिता चैव, त्वं गुरुस्त्वं बांधवः
त्वमेकः शरणं स्वामिन्, जीवितं जीवितेश्वरः २०

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव भ्राता च सखा त्वमेव;
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव. २१

यत्स्वर्गावतरोत्सवे यदभवज्जन्माभिषेकोत्सवे
यद्दीक्षाग्रहणोत्सवे यदखिलज्ञानप्रकाशोत्सवे
यन्निर्वाणगमोत्सवे जिनपतेः पूजाद्भुतं तद्भवैः
संगीतस्तुतिमंगलैः प्रसरतां मे सुप्रभातोत्सवः २२

---

१६. चैत्यवंदन सूत्रो

(विधि सहित)

श्री नवकारमंत्र

नमो अरिहंताणं १
नमो सिद्धाणं २
नमो आयरियाणं ३
नमो उवज्झायाणं ४
नमो लोए सव्वसाहूणं ५
एसो पंच नमुक्कारो ६
सव्व पावप्पणासणो ७
मंगलाणं च सव्वेसिं ८
पढमं हवई मंगलं ९

श्री प्रणिपात अर्थात् खमासमण सूत्र

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि ॥

इरियावही सूत्र

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् इरियावहियं
पडिक्कमामि ॥ इच्छं ॥ इच्छामि पडिक्कमिउं १
इरियावहियाए विराहणाए २
गमणागमणे ३
पाणक्कमणे, बीयक्कमणे, हरियक्कमणे
ओसा उत्तिंग पणग-दग-मट्टी-मक्कडासंताणा संकमणे ४
जे मे जीवा विराहिया, ५
एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया ६
अभिहया, वत्तिया, लेसिया, संघाइया, संघट्टिया,
परियाविया, किलामिया, उद्दविया, ठाणाओ ठाणं
संकामिया, जीवियाओ ववरोविया,
तस्स मिच्छा मि दुक्कडं. ७

तस्स उत्तरी सूत्र

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं, विसोहीकरणेणं, विसल्लीकरणेणं, पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए,
ठामि काउस्सग्गं. १

अन्नत्थ ऊससिएण सूत्र

अन्नत्थ ऊससिएणं नीससिएणं खासिएणं,
छीएणं, जंभाईएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं,
भमलीए, पित्तमुच्छाए. १
सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं,
सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं. २

एवमाइएहिं आगारेहिं, अभग्गो अविराहिओ,
हुज्ज मे काउस्सग्गो; ३
जाव अरिहंताणं, भगवंताणं, नमुक्कारेणं न पारेमि ४
ताव कायं, ठाणेणं, मोणेणं, झाणेणं, अप्पाणं वोसिरामि. ५

(एक लोगस्स अथवा चार नवकारनो काउसग्ग करवो, पछी ''नमो अरिहंताणं'' कही काउसग्ग पारी प्रगट लोगस्स नीचे प्रमाणे कहेवो.)

लोगस्स सूत्र

लोगस्स उज्जोअगरे, धम्मतित्थयरे जिणे;
अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसं पि केवली. १

उसभमजिअं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च;
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे. २

सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअल-सिज्जंस-वासुपूज्जं च;
विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि. ३

कुंथुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च;
वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च. ४

एवं मए अभिथुआ, विहुयरयमला पहीणजरमरणा;
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु. ५

कित्तिय वंदिय महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिध्धा;
आरुग्ग-बोहिलाभं, समाहिवरमुत्तमं दिंतु. ६

चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा;
सागरवरगंभीरा, सिध्धा सिध्धिं मम दिसंतु. ७

(पछी त्रण खमासमण दई बेसी डाबो ढींचण ऊभो राखी जमणो ढींचण नीचे राखीने बेसवुं अने नीचे प्रमाणे कहेवुं.)

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! चैत्यवंदन करुं ?।। इच्छं ।।

चैत्यवंदनो

(१)

सकलकुशलवल्ली पुष्करावर्तमेघो,
दुरिततिमिरभानुः कल्पवृक्षोपमानः
भवजलनिधिपोतः सर्वसंपत्तिहेतुः
स भवतु सततं वः श्रेयसे शांतिनाथः
श्रेयसे पार्श्वनाथः

(२)

परम कृपाळु देव प्रति, विनय विनंति एह;
त्रय तत्त्व त्रण रत्न मुज, आपो अविचल स्नेह. १

तत्त्वोपदेष्टा तुम तणा, मार्ग तणे अनुसार;
लक्ष लक्षण रहो सदा, खरेखरो एक तार. २

मिथ्या तमने फेडवा, चंद्र सूर्य तुम ज्ञान;
दर्शननी सुविशुद्धिथी, भाव चरण मल हान. ३

इच्छा वर्ते अंतरे, निश्चय दृढ संकल्प;
मरण समाधि संपजो, न रहो कांई कुविकल्प. ४

कामित दायकपद शरण, मन स्थिर कर प्रभु-ध्यान;
नाम स्मरण गुरु राजनुं, प्रगट कल्याण निदान. ५

भुवन जन हितकर सदा, कृपाळु कृपा निधान;
पावन करता पतितने, स्थिर गुणनुं दई दान. ६

सर्वज्ञ सद्गुरु प्रति, फरी फरी अरज ए नेक;
लक्ष रहो प्रभु स्वरूपमां, हो **रत्नत्रय** एक. ७

(३)

पंच परमेष्ठीगुण चैत्यवंदन

बार गुण अरिहंत देव, प्रणमीजे भावे;
सिद्ध आठ गुण समरतां, दुःख दोहग जावे. १

आचारज गुण छत्रीस, पंचवीश उवज्झाय;
सत्तावीश गुण साधुना, जपतां शिव सुख थाय. २

अष्टोत्तर सय गुण मली, इम समरो नवकार;
धीर विमल पंडित तणो, नय प्रणमे नित सार. ३

(४)

जगचिंतामणि चैत्यवंदन सूत्र

जगचिंतामणि ! जगनाह ! जगगुरु ! जगरक्खण !
जगबंधव ! जगसत्थवाह ! जगभावविअक्खण !
अट्ठावय-संठविय-रूव ! कम्मट्ठविणासण !
चउवीसं पि जिणवरा ! जयंतु अप्पडिहय-सासण ! १

कम्मभूमिहिं कम्मभूमिहिं पढमसंघयणि,
उक्कोसय सत्तरिसय, जिणवराण विहरंत लब्भइ,
नवकोडीहिं केवलीण, कोडिसहस्सनव साहु गम्मइ,
संपइ जिणवर वीस मुणि, बिहुं कोडिहिं वरनाणि,
समणह कोडिसहस्सदुइ, थूणिज्जइ निच्च विहाणि. २

जयउ सामिय ! जयउ सामिय ! रिसह ! सत्तुंजि,
उज्जिंते पहु नेमिजिण ! जयउ वीर ! सच्चउरमंडण !
भरुअच्छहिं मुणिसुव्वय ! महुरि पास ! दुहदुरिअखंडण;
अवर विदेहिं तित्थयरा, चिहुं दिसि विदिसि जिं के वि;
तीआणागयसंपइअ, वंदुं जिण सव्वे वि. ३

सत्ताणवई सहस्सा, लक्खा छप्पन्न अट्ठकोडीओ;
बत्तीसय बासियाइं, तिअलोए चेइए वंदे. ४

पन्नरस कोडिसयाइं, कोडि बायाल लक्ख अडवन्ना;
छत्तीस सहस असीईं, सासयबिंबाइं पणमामि. ५

जं किंचि सूत्र

जं किचि नाम तित्थं, सग्गे पायालि माळुसे लोए,
जाइं जिणबिंबाइं, ताइं सव्वाइं वंदामि. १

नमुत्थुणं वा शक्रस्तव सूत्र

नमुत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं; १
आइगराणं, तित्थयराणं, सयंसंबुद्धाणं; २
पुरिसुत्तमाणं, पुरिस-सीहाणं, पुरिसवरपुंडरीआणं,
पुरिसवरगंधहत्थीणं; ३
लोगुत्तमाणं, लोगनाहाणं, लोगहिआणं,
लोगपइवाणं, लोगपज्जोअगराणं; ४
अभयदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं,
सरणदयाणं, जीवदयाणं, बोहिदयाणं, ५
धम्मदयाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मनायगाणं,
धम्मसारहीणं, धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं,
दीवो ताणं सरण गइ पइट्ठा, ६
अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं, वियट्टछउमाणं, ७
जिणाणं जावयाणं, तिन्नाणं तारयाणं,
बुद्धाणं बोहयाणं, मुत्ताणं मोअगाणं; ८

सव्वन्नूणं सव्वदरिसीणं, सिवमयलमरुय-
मणंतमक्खयमव्वाबाहमपुणराविति्ति सिद्धिगइनामधेयं,
ठाणं संपत्ताणं, नमो जिणाणं, जिअ-भयाणं; ९
जे अ अइआ सिद्धा, जे अ भविस्संति णागए काले,
संपइ अ वट्टमाणा, सव्वे तिविहेण वंदामि. १०

जावंति चेइयाइं सूत्र

जावंति चेइयाइं, उड्ढे अ अहे अ तिरिअलोए अ,
सव्वाइं ताइं वंदे, इह संतो तत्थ संताइं. १

इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि ॥

जावंत के वि साहु सूत्र

जावंत के वि साहू, भरहेरवय महाविदेहे अ;
सव्वेसिं तेसिं पणओ, तिविहेण तिदंड विरयाणं.१

पंचपरमेष्ठी नमस्कार सूत्र

नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः

उपसर्गहर स्तवन

उवसग्गहरं पासं, पासं वंदामि कम्मघणमुक्कं;
विसहर विसनिन्नासं, मंगलकल्लाणआवासं. १
विसहर फुलिंगमंतं, कंठे धारेइ जो सया मणुओ;
तस्स गहरोगमारी, दुट्ठजरा जंति उवसामं. २

चिट्ठउ दूरे मंतो, तुज्झ पणामो वि बहुफलो होइ;
नरतिरिएसु वि जीवा, पावंति न दुःखदोगच्चं. ३

तुह सम्मत्ते लध्धे, चिंतामणि कप्पपायवब्भहिए;
पावंति अविग्घेणं, जीवा अयरामरं ठाणं. ४

इअ संथुओ महायस! भत्तिभरनिब्भरेण हिअएण;
ता देव! दिज्ज बोहिं, भवे भवे पासजिणचंद! ५

(पछी आश्रममां रोज एक भक्तिनो छंद तथा तीर्थंकर भगवानना चार-चार स्तवनो अनुक्रमे बोलाय छे, जे पुष्ट ८९ थी शरू थाय छे.)

जयवीयराय सूत्र

जय वीयराय! जगगुरु! होउ ममं तुह पभावओ भयवं;
भवनिव्वेओ मग्गाणुसारिआ इट्ठफलसिध्धि.१

लोगविरुध्धच्चाओ, गुरुजणपूआ परत्थकरणं च;
सुहगुरुजोगो तव्वयणसेवणा आभवमखंडा.२

वारिज्जइ जइ वि नियाणबंधणं वीयराय! तुह समये;
तह वि मम हुज्ज सेवा, भवे भवे तुम्ह चलणाणं.३

दुक्ख-खओ कम्म-खओ समाहिमरणं च बोहिलाभो अ,
संपज्जउ मह एअं, तुह नाह! पणाम करणेणं.४

सर्व मंगलमांगल्यं, सर्वकल्याणकारणं;
प्रधानं सर्व धर्माणां, जैनं जयति शासनं. ५

(पछी ऊभा थई नीचे प्रमाणे कहेवुं)

अरिहंत चेइयाणं सूत्र

अरिहंत चेइयाणं, करेमि काउस्सग्गं १

वंदणवत्तियाए, पूअणवत्तियाए, सक्कारवत्तियाए,
सम्माणवत्तियाए, बोहिलाभवत्तियाए, निरुवसग्गवत्तियाए, २

सद्धाए, मेहाए, धिइए, धारणाए, अणुप्पेहाए,
वड्ढमाणीए, ठामि काउस्सग्गं. ३

अन्नत्थ ऊससिएणं सूत्र

अन्नत्थ ऊससिएणं नीससिएणं खासिएणं,
छीएणं, जंभाईएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं
भमलीए, पित्तमुच्छाए. १

सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं,
सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं; २

एवमाइएहिं आगारेहिं, अभग्गो, अविराहिओ,
हुज्ज मे काउस्सग्गो; ३

जाव अरिहंताणं, भगवंताणं, नमुक्कारेणं न पारेमि ४

ताव कायं, ठाणेणं, मोणेणं, झाणेणं, अप्पाणं वोसिरामि. ५

(पछी एक नवकारनो काउसग्ग करी "नमोऽर्हत्‌सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः" कही स्तुति बोलवी.)

कल्लाणकंदं स्तुति

कल्लाणकंदं पढमं जिणिंदं, संतिं तओ नेमिजिणं मुणिंदं;
पासं पयासं सुगुणिक्कठाणं, भत्तिइ वंदे सिरिवद्धमाणं.१

---

१७. वंदन तथा प्रणिपातस्तुति

अहो ! अहो ! श्री सद्गुरु, करुणासिंधु अपार;
आ पामर पर प्रभु कर्यो, अहो ! अहो ! उपकार.

शुं प्रभु चरण कने धरुं, आत्माथी सौ हीन;
ते तो प्रभुए आपियो, वर्तुं चरणाधीन.

आ देहादि आजथी, वर्तो प्रभु आधीन;
दास, दास, हुं दास छुं, तेह प्रभुनो दीन.

षट् स्थानक समजावीने, भिन्न बताव्यो आप;
म्यान थकी तरवारवत्, ए उपकार अमाप.

जे स्वरूप समज्या विना, पाम्यो दुःख अनंत;
समजाव्युं ते पद नमुं, श्री सद्गुरु भगवंत.

परम पुरुष प्रभु सद्गुरु, परम ज्ञान सुखधाम;
जेणे आप्युं भान निज, तेने सदा प्रणाम.

देह छतां जेनी दशा, वर्ते देहातीत;
ते ज्ञानीना चरणमां, हो वंदन अगणित.

हे परमकृपाळु देव ! जन्म, जरा, मरणादि सर्व दुःखोनो अत्यंत क्षय करनारो एवो वीतराग पुरुषनो मूळधर्म (मार्ग) आप श्रीमदे अनंत कृपा करी मने आप्यो, ते अनंत उपकारनो प्रतिउपकार वाळवा हुं सर्वथा असमर्थ छुं; वळी आप श्रीमत् कंई पण लेवाने सर्वथा निःस्पृह छो; जेथी हुं मन, वचन, कायानी एकाग्रताथी आपना चरणारविंदमां नमस्कार करुं छुं. आपनी परम भक्ति अने वीतराग पुरुषना मूळधर्मनी उपासना मारा हृदयने विषे भवपर्यंत अखंड जागृत रहो एटलुं मागुं छुं ते सफळ थाओ.

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः

१८. श्री सद्‌गुरु उपकार-महिमा

प्रथम नमुं गुरुराजने, जेणे आप्युं ज्ञान;
ज्ञाने वीरने ओळख्या, टळ्युं देहअभिमान.१

ते कारण गुरुराजने, प्रणमुं वारंवार;
कृपा करी मुज उपरे, राखो चरण मोझार.२

पंचम काळे तुं मळ्यो, आत्मरत्न-दातार;
कारज सार्यां माहरां, भव्य जिव हितकार.३

अहो ! उपकार तुमारडो, संभारुं दिनरात;
आवे नयणे नीर बहु, सांभळतां अवदात.४

अनंतकाळ हुं आथड्यो, न मळ्या गुरु शुद्ध संत;
दुषम काळे तुं मळ्यो, राज नाम भगवंत.५

राज राज सौ को कहे, विरला जाणे भेद;
जे जन जाणे भेद ते, ते करशे भव छेद.६

अपूर्व वाणी ताहरी, अमृत सरखी सार;
वळी तुज मुद्रा अपूर्व छे, गुणगण रत्न भंडार.७

तुज मुद्रा तुज वाणीने, आदरे सम्यक्‌वंत;
नहि बीजानो आशरो, ए गुह्य जाणे संत.८

बाह्य चरण सुसंतनां, टाळे जननां पाप;
अंतर चारित्र गुरुराजनुं, भांगे भव संताप.९

---

१९. श्री सद्‌गुरुस्तुति

सद्‌गुरु पदमें समात है, अर्हंतादि पद सर्व;
तातैं सद्‌गुरु चरणकूं, उपासो तजीं गर्व.

सद्‌गुरुचरणं अशरणशरणं, भ्रम-आतपहर रवि-शशिकिरणं;
जयवंत युगलपद जयकरणं, मम सद्‌गुरुचरण सदा शरणं. १

पद सकलकुशलवल्ली सम ध्यावो, पुष्कर संवर्तमेघ भावो;
सुरगो सम पंचामृत-झरणं—मम० २
पद कल्प-कुंभ कामित दाता, चित्रावली चिंतामणि ख्याता;
पद संजीविनी हरे जरमरणं—मम० ३
पद मंगल कमला-आवासं, हरे दासनां आशपाशत्रासं;
चंदन चरणं चित्तवृत्तिठरणं—मम० ४
दुस्तर भव तरण काज साजं, पद सफरी जहाज अथवा पाजं,
मही महीधरवत् अभराभरणं—मम० ५
संसार कांतार पार करवा, पद सार्थवाह सम गुण गरवा;
आश्रित शरणापन्न उद्धरणं—मम० ६
श्रीमद् सद्‌गुरुपद पुनितं, मुमुक्षु-जनमन अमित वित्तं;
गंगाजलवत् मनमल-हरणं—मम० ७
पदकमल अमल मम दिलकमलं, संस्थापित रहो अखंड अचलं;
रत्नत्रय हरे सर्वावरणं—मम० ८

अनंत चोवीशी जिन नमुं, सिद्ध अनंता क्रोड,
जे मुनिवर मुक्ते गया, वंदुं बे कर जोड.

२०. प्रभु—उपकार

कौन उतारे पार, प्रभु बिन, कौन उतारे पार ?
भवोदधि अगम अपार, प्रभु बिन, कौन उतारे पार ?
कृपा तिहारीतें हम पायो, नाम मंत्र आधार.प्रभु०
नीको तुम उपदेश दियो हे, सब सारनको सार.प्रभु०
हलके व्है चाले सें निकसे, बूडे जे शिरभार.प्रभु०
उपकारीको नहि वीसरीए, येहि धर्म-अधिकार.प्रभु०
धर्मपाल प्रभु, तु मेरे तारक, क्यूं भूलुं उपकार.प्रभु०

(मध्याह्न पहेलांनी भक्तिनो क्रम : समय ९—११॥)

मंगळाचरण तथा जिनेश्वरनी वाणी : पृष्ठ १—२

वीश दोहरा—यमनियम—क्षमापना : पृष्ठ ६—१९—२०

२१. जिनेन्द्र पंचकल्याणक

(कविवर रूपचंद्रजी पांडे कृत)

(मंगलगीत या पंचमंगल)

जनम्या श्री गुरुराज जगतहित कारणे,
करवा अम उद्धार वारी जाउं वारणे. (ए देशी)

पणविवि[1] पंच परमगुरु, [2]गुरु जिनशासनो,
सकलसिद्धिदातार, सु विघनविनासनो;
सारद अरु गुरु गौतम, सुमतिप्रकाशनो,
मंगलकर चउसंघहि, पापपणासनो.

पापहि पणासन गुणहि गरुवा, दोष अष्टादश-[3]रहिउ,
धरि ध्यान करम विनासि केवल,—ज्ञान अविचलजिनलहिउ;
प्रभु पंचकल्याणक-विराजित, सकल सुर नर ध्यावहीं,
त्रैलोकनाथ सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं. १

१. गर्भकल्याणक :—

जाके गरभकल्याणक, [4]धनपति आइयो,
अवधिग्यान-परवान[5], सुइन्द्र पठाइयो,
रचि नव बारह जोजन, [6]नयरि सुहावनी,
कनक-[7]रयणमणिमंडित मंदिर अति बनी.

अति बनी पौरि पगार परिखा, सुवन उपवन सोहए,
नर नारी सुंदर चतुरभेख सु, देख जनमन मोहए,

---

१. प्रणमामि-अर्थात् नमस्कार करुं छुं. २. महान=मोटा ३. रहित ४.कुबेर ५. अवधिज्ञानथी जाणीने. ६. नगरी ७. रत्न.

तहँ जनकगृह छह मास प्रथमहि, रतनधारा बरसियो,
पुनि रुचिकवासिनि जननि-सेवा, करहि सब विधि हरसियो. २

[१]सुरकुंजरसम कुंजर, [२]धवल [३]धुरंधरो,
केसरि [४]केसरसोभित, नखसिखसुंदरो;
कमला कलस-न्हवन, [५]दुईदाम सुहावनी,
रविससिमंडल मधुर, [६]मीनजुग पावनी.

पावनी कनक घट जुगम पूरन, कमलकलित[७] सरोवरो,
कल्लोलमालाकुलित[८] सागर, सिंहपीठ[९] मनोहरो;
रमणीक[१०]अमरविमान [११]फणिपति-भवन भुवि छवि छाजए,
रुचि रतनरासि दिपंत दहन[१२] सु, तेजपुंज विराजीऐ. ३

ये सखी सोरह सुपने, सूती [१३]सयनहीं,
देखे माय मनोहर, [१४]पच्छिम-रयनहीं;
उठि प्रभात पिय पूछियो, अवधि प्रकासियो,
त्रिभुवनपति [१५]सुत होसी, फल तिहँ भासियो.

भासियो फल तिहि चिंति[१६] दंपति, परम आनंदित भए,
छहमासपरि नवमास पुनि तहँ, रयन दिन सुखसौं गए;
गर्भावतार महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं,
भणि[१७] 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं. ४

---

१. ऐरावत हाथीना समान. २. सफेद. ३. बळद. ४. जेनी गर्दन पर केसर (अयाल) शोभित छे. ५. बे माळा. ६. बे माछली. ७. कमलो सहित. ८. लहेरोथी ऊछळतो. ९. सिंहासन. १०. देवोनुं विमान. ११. धरणेन्द्रनुं भुवन. १२. जलती आग. १३. शय्या पर. १४. पाछली रातमां. १५. पुत्र थशे. १६. विचार करी. १७. 'जन' पाठ पण छे.

२. जन्मकल्याणकः–

मति-[1]सुत-अवधिविराजित, जिन जब जनमियो,
तिहुँलोक भयो छोभित, सुरगन भरमियो;
कल्पवासीघर घंट, अनाहद बज्जिया,
जोतिसि-घर [2]हरिनाद, सहज गलगज्जिया.

गज्जिया सहज हि संख [3]भावन-भुवन सबद सुहावने,
विंतरनिलय[4] पटु पटह बज्जहि, कहत महिमा क्यौं बने;
कंपित सुरासन अवधि बल जिन-जनम निहचै जानियो,
धनराज[5] तब गजराज माया,–मयी निरमयो[6] आनियो. ५

जोजन लाख गयंद, [7]वदन-सौ निरमए,
वदन वदन वसु दंत, दंत सर [8]संठए;
सर सर [9]सौ-पनवीस, [10]कमलिनी छाजहीं,
कमलिनी कमलिनी कमल, पचीस विराजहीं.

राज हि कमलिनी कमल [11]ठोतर सौ मनोहर दल बने,
दल-दलहिं[12] अपछर नटई नवरस, हावभाव सुहावने;
मणि कनककिंकणि वर विचित्र, सु अमरमंडप सोहए,
गर घंट चँवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहए. ६

तिहि [13]करि हरि चढि आयउ, [14]सुरपरिवारियो,
पुरहि प्रदच्छन दे त्रय, जिन [15]जयकारियो;

---

१. श्रुतज्ञान. २. सिंहनाद. ३. भवनवासी देवोना घर पर. ४. व्यंतर देवोना घर पर. ५. कुबेर. ६. बनावी. ७. एकसो मुख. ८. संस्थित कर्युं=बनाव्युं. ९. एकसो पचीस. १०. कमलोनी वेलो. ११. अष्टोत्तरशत=एकसो आठ. १२. पान पान पर. १३. हाथी पर. १४. सुपरिवारतः=देवोना परिवार सहित. १५. जयकारित=जिनेंद्र भगवानने जय जय करता.

गुप्त जाय [१]जिन-जननिहिं, सुखनिद्रा रची,
मायामयी सिसु राखि तौ, [२]जिन [३]आन्यो [४]सची.

आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृपति न [५]हूजिये,
तब परमहरषित [६]हृदयहरना, [७]सहस लोचन [८]पूजिये;
पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इंद्र, उछंग धरि प्रभु लीनऊ,
इसान इंद्र सु चंद्र छवि, सिर छत्र प्रभुके दीनऊ. ७

सनतकुमार महेन्द्र, चमर दुइ ढारहीं,
सेस [९]सक्र जयकार, सबद उच्चारहीं;
उच्छवसहित चतुरविध, सुर हरखित भए,
जोजन सहस निन्यानवै, गगन उलँघि गये.

लँघि गये सुरगिरि जहाँ पांडुक-वन विचित्र विराजही,
पांडुक शिला तहँ अर्धचंद्रसमान मणि छवि छाजही;
जोजन पचास विशाल [१०]दुगुणायाम, वसु ऊंची गनी,
वर अष्ट मंगल कनक कलसनि, सिंहपीठ सुहावनी. ८

रचि मणिमंडप सोभित, मध्य सिंहासनो,
थाप्यो पूरव-मुख तहाँ, प्रभु कमलासनो;
बाजहि ताल मृदंग, भेरि वीणा घने,
दुंदुभिप्रमुख[११] मधुरधुनि, अवर जु [१२]बाजने.

बाजनें बाजहिं सची सब मिलि, धवल मंगल गावहीं,
पुनि करहि नृत्य सुरांगना सब, देव कौतुक धावहीं;
भरि छीरसागर-जल जु हाथहि, हाथ सुरगन ल्यावहीं,
सौधर्म अरु इसानइंद्र सु कलस ले प्रभु [१३]न्यावहीं. ९

---

१. भगवाननी माताने. २. भगवानने. ३. लावी. ४. इंद्राणी. ५. थाय. ६. हृदयने हरवावालो—मनोहर. ७. हजार नेत्र. ८. पूर्ण कर्युं=बनाव्युं. ९. इंद्र. १०. बे गणी लांबी. ११. दुंदुभि आदि मीठा अवाजवाळा. १२. वाजां. १३. स्नान-अभिषेक करावता हता.

वदन[१] उदर अवगाह, कलसगत जानिए,
एक चार वसु जोजन, मान प्रमानिए;
[२]सहस-अठोतर कलसा, प्रभुके सिर ढरे,
पुनि सिंगार प्रमुख, आचार सबइ करे.

करि प्रगट प्रभु महिमामहोच्छव, [३]आनि पुनि मातहि दयो,
धनपतिहि सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहि गयो;
जनमाभिषेक महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं,
जन 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं. १०

३. **तपकल्याणक :—**

[४]श्रमजलरहित शरीर, सदा सब [५]मलरहिउ,
[६]छीर-वरन वर रुधिर, [७]प्रथमआकृति लहिउ;
[८]प्रथम सारसंहनन, सरूप विराजहीं,
सहज-सुगंध सुलच्छन,—मंडित छाजहीं.

छाजहि अतुल बल परम प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने,
दस सहज अतिशय सुभग मूरति, बाललील कहावने;
आबाल काल त्रिलोकपति मन, रुचित उचित जु नित नए,
[९]अमरोपनीत पुनीत अनुपम, सकल भोग विभोगए. ११

भव-तन-भोग-विरत्त[१०], कदाचित [११]चिंतए,
धन जोबन पिय पुत्त, [१२]कलत्त [१३]अनित्त ए;
कोउ न सरन मरनदिन, दुःख चहुँगति भर्यो,
सुख दुःख एकहि भोगत, जिय [१४]विधिवस पर्यो.

---

१. कलशोना मुख अने पेटनो विस्तार. २. एक हजार आठ. ३. लावीने. ४. पसीना रहित. ५. सर्व प्रकारना मलथी रहित. ६. दूधना रंग जेवुं रक्त. ७. समचतुरस्रसंस्थान. ८. वज्रवृषभनाराच संहनन. ९. देवो द्वारा लावेलुं. १०. संसार, शरीर अने भोगोथी विरक्त बनी. ११. चिंतन कर्युं. १२. स्त्री. १३. अनित्य. १४. कर्मोने वश.

पर्यो विधिवस [1]आन चेतन, आन जड जु [2]कलेवरो,
तन असुचि, परतैं[3] होय आस्रव, [4]परिहरेतैं संवरो;
निरजरा तपबल[5] होय, समकित विन सदा त्रिभुवन भम्यो,
दुर्लभ विवेक विना न कबहुं, परम धरमविषै रम्यो. १२

ये प्रभु बारह [6]पावन, भावन भाइया,
लौकांतिक वर देव, नियोगी आइया;
कुसुमांजलि दे चरन,– कमल सिर नाईयो,
स्वयंबुद्ध प्रभु [7]थुति करि, तिन समुझाईयो.

समुझाय प्रभुको गये [8]निजपद, पुनि महोच्छव हरि कियो,
रुचिरुचिर[9] चित्रविचित्र [10]सिबिका [11]कर [12]सुनंदनबन लियो;
तहँ पंचमुट्ठी लोच कीनो, प्रथम सिद्धनि [13]नुति करी,
मंडिय महाव्रत पंच दुद्धर, सकल परिगह परिहरी.१३

मणिमयभाजन[14] केश, [15]परिठ्ठिय सुरपती,
छीर-समुद्र-जल खिपकरि, गयो [16]अमरावती;
तप संजमबल प्रभुको, मनपरजय भयो,
मौनसहित तप करत, काल कछु तहँ गयो.

गयो कछु तहँ काल तपबल, रिद्धि वसु विधि सिद्धिया,
जसु [17]धर्मध्यानबलेन [18]खयगय, सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया;
खिपि [19]सातयेंगुण जतन विन तहँ, तीनप्रकृतिजु बुधि बढिउ,
करि करण[20] तीन प्रथम सुकलबल, खिपकसेनी प्रभु चढिउ. १४

---

१. अन्य. २. शरीर. ३. पर अर्थात् पुद्‌गलादि परपदार्थोमां रागद्वेष थवाथी आस्रव थाय छे. ४. त्यागवाथी संवर होय छे. ५. तपथी निर्जरा होय छे. ६. पवित्र. ७. स्तुति. ८. पोताना स्थाने. ९. पोतानी रुचिने प्रिय. १०. सिबिका=पालखी. ११. बनावी. १२. अतिशय आनन्ददायक वनमां. १३. नमस्कार. १४. रत्नोना पात्रमां. १५. स्थापन करीने. १६. स्वर्गपुरीमां. १७. धर्मध्यानना बलथी. १८. क्षय गई. १९. सातमा गुणस्थानमां. २०. अधःकरण, अपूर्वकरण अने अनिवृत्तिकरण ए त्रण.

प्रकृति छत्तीस नवैं गुण,-थान विनासिया,
दसवैं सूच्छमलोभ,—प्रकृति तहँ नासिया;
सुकल ध्यान पद दूजौ, पुनि प्रभु पूरियो,
[1]बारहवैं-गुण सोरह, प्रकृति जु चूरियो.

चूरियो त्रेसठि प्रकृति इहविध, घातिया करमनितनी,
तप कियो ध्यान प्रयंत बारह,—विध त्रिलोकसिरोमनी;
[2]निःक्रमणकल्याणक सु महिमा, सुनत सब सुख पावहीं,
जन 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं. १५

४. **ज्ञानकल्याणक :—**

तेरहवैं गुणथान, सयोगी जिनेसुरो,
अनंतचतुष्टयमंडित, भयो परमेसुरो;
समवसरन तब धनपति, बहुविध [3]निरमयो,
आगमजुगतिप्रमाण, गगनतल परिठयो.

परिठयो चित्रविचित्र मणिमय, सभामंडप सोहए,
तिहि मध्य बारह बने कोठे, बनक सुरनर मोहए;
मुनि कल्पवासिनि अरजिका पुनि, ज्योति-भौम-भुवन-तिया,
पुनि, भवन व्यंतर नभग सुर नर, पसुनि कोठे बैठिया. १६

मध्यप्रदेश तीन, मणिपीठ तहाँ बने,
गंधकुटी सिंहासन कमल सुहावने;
तीन छत्र सिर सोहत, त्रिभुवन मोहए,
अंतरिच्छ कमलासन, प्रभुतन सोहए.

सोहए चौसठि चमर ढरत, असोकतरु तल छाजए,
पुनि दिव्यधुनि प्रतिसबद जुत तहँ, देव दुंदुभि बाजए;

---

१. बारमा गुणस्थानमां. २. तपकल्याणकनी ३. निर्माण कर्युं=बनाव्युं.

सुरपुहपवृष्टि सुप्रभामंडल, कोटि रवि छबि छाजए,
इमि अष्ट अनुपम प्रातिहारज, वर विभूति विराजए. १७

दुइसै जोजन मान, [१]सुभिच्छ चहुं दिसी,
गगनगमन अरु प्राणी,–वध नहि [२]अहनिसी;
निरुपसर्ग निरहार, सदा जगदीस ए,
[३]आनन चार चहुं दिसि सोभित दीसए.

दीसय असेस विसेस विद्या, विभव वर ईसुरपनो,
छाया विवर्जित शुद्ध फटिक समान तन प्रभुको बनो;
नहि नयन पलक पतन कदाचित, केस नख सम छाजहीं,
ये घातियाछ्यजनित अतिसय, दस विचित्र विराजहीं. १८

सकल अरथमय मागधि-भाषा जानिये,
सकल जीवगत मैत्री-भाव बखानिये;
सकल रितुज फल फूल, वनस्पति मन हरै,
दरपनसम मनि अवनी, पवनगति अनुसरै.

अनुसरैं परमानन्द सबकौ, नारी नर जे सेवता,
जोजन प्रमाण धरा सुमार्जहि, जहां [४]मारुतदेवता;
पुनि करहिं मेघकुमार, गंधोदक सुवृष्टि सुहावनी,
पदकमलतर सुर खिपई कमलसु, धरणि ससिसोभा बनी. १९

अमल गगन तल अरु दिसि तहँ अनुहारहीं,
चतुरनिकाय देवगण, जय जयकारहीं;
धर्म चक्र चले आगे, रवि जहँ लाजहीं,
पुनि [५]भृंगार-प्रमुख वसु, मंगल राजहीं.

राजहीं चौदह [६]चारु अतिसय, देवरचित सुहावने,
जिनराज केवलज्ञान महिमा, अवर कहत कहा बने;

---

१. सुभिक्ष=सुकाल. २. रातदिन, निरंतर. ३. मुख. ४. वायुकुमारना देव. ५. झारी आदि आठ मंगल द्रव्य. ६. सुंदर.

तब इन्द्र आन कियो महोच्छव, सभा सोभित अति बनी,
धर्मोपदेस दियो तहां, [1]उच्छरिय वाणी जिनतणी. २०

छुधा तृषा अरु राग, द्वेष असुहावने,
जनम जरा अरु मरण, त्रिदोष भयावने;
रोग सोग भय विस्मय, अरु निद्रा घणी,
खेद स्वेद मद मोह, अरति चिन्ता गणी.

गणिये अठारह दोष तिनकरि, रहित देव निरंजनो,
नव परम केवललब्धिमंडित, सिवरमनि-मनरंजनो;
श्री ज्ञानकल्याणक सुमहिमा सुनत सब सुख पावहीं,
जन 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं. २१

५. निर्वाणकल्याणक :–

केवलदृष्टि चराचर, देख्यो [2]जारिसो,
भव्यनि प्रति उपदेस्यो, जिनवर [3]तारिसो;
भवभयभीत महाजन, सरणै आइया,
रत्नत्रयलच्छन, सिव पंथनि लाइया.

लाइया पंथ जु भव्य पुनि प्रभु, तृतिय सुकल जु पूरियो,
तजि तेरहें गुणथान जोग, अजोगपथ पग धारियो;
पुनि चौदहें चौथे सुकलबल, बहत्तर तेरह हती,
इमि घाति वसु विधि कर्म पहुँच्यो, समयमें पंचमगति. २२

लोकसिखर तनुवात,-वलयमहँ संठियो,
धर्मद्रव्यविन गमन न, जिहि आगैं कियो;
[4]मयनरहित [5]मूषोदर, [6]अंबर [7]जारिसो,
[8]किमपि [9]हीन निज तनुतैं, भयोप्रभु [10]तारिसो.

---

१. खरी. २. यादृशः=जेवुं.३. तादृशः=तेवुं. ४. मीणरहित. ५. भुषकयंत्रना उदरमां.
६. आकाश. ७. जेवुं. ८. किंचित्. ९. कम-न्यून. १०. तेवुं.

तारिसो पर्जय नित्य अविचल, अर्थपरिजय छनछयी,
निश्चयनयेन[1] अनंतगुण, विवहार नय वसुगुणमयी;
वस्तु स्वभाव विभावविरहित, शुद्ध परिणति परिणयो,
चिद्रूप परमानंदमंदिर, सिद्ध परमातम भयो. २३

तनुपरमाणु [2]दामिनि पर, सब खिर गये,
रहे सेस नखकेस,–रूप जे परिणये;
तब हरि प्रमुख चतुरविध, सुरगण सुभ सच्यो,
मायामयी नखकेसरहित, जिनतनु रच्यो.

रचि अगर चंदनप्रमुख [3]परिमल, द्रव्य जिन जयकारियो,
पदपतित[4] अगनिकुमार मुकुटानल, सुविधि संस्कारियो;
निर्वाणकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं,
जन 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं. २४

में मतिहीन भगतिवस, भावन भाइया,
मंगलगीत प्रबंध सु, जिनगुण गाइया;
जो नर सुनहिं बखानहिं, सुर धरि गावहीं,
मनवांछित फल सो नर निहचै पावहीं.

पावहीं आठौ सिद्धि नव निधि, मन प्रतीत जु लावहीं,
भ्रमभाव छूटई सकल मनके, जिन स्वरूप लखावहीं;
पुनि हरहिं पातक टरहिं विघन, सु होहि मंगल नित नये,
भणि 'रूपचंद' त्रिलोकपति जिन,–देव चउसंघहि जये. २५

(श्री मंगल गीत समाप्त)

---

१. निश्चयनयथी. २. 'दामनिवत' एवो पाठ पण छे. ३. सुगंधित. ४. चरणोमां नमस्कार करवा पडेला अग्निकुमार देवोना मुकुटनी अग्निथी भगवानना शरीरनो अंत्यसंस्कार कर्यो.

२२. आठ योग दृष्टिनी सज्झाय

(श्रीमद् यशोविजयजी उपाध्याय कृत)

(ढाळ पहेली)

प्रथम मित्रादृष्टि-विचार

(चतुर सनेही मोहना—ए देशी)

शिव सुख कारण उपदिशी, योग तणी अड दिठ्ठी रे,
ते गुण थुणी जिनवीरनो, करशुं धर्मनी पुठ्ठी रे.
वीर जिनेसर देशना. १

सघन अघन दिन रयणीमां, बालविकल ने अनेरा रे,
अर्थ जुए जेम जुजुआ, तेम ओघ नजरना फेरा रे. वी० २

दर्शन जे थयां जुजुआ, ते ओघ नजरने फेरे रे,
भेद थिरादिक दृष्टिमां, समकित दृष्टिने हेरे रे. वी० ३

दर्शन सकलना नय ग्रहे, आप रहे निज भावे रे,
हित करी जनने संजीवनी, चारो तेह चरावे रे. वी० ४

दृष्टि थिरादिक चारमां, मुगति प्रयाण न भाजे रे,
रयणी शयन जेम श्रम हरे, सुरनर सुख तेम छाजे रे. वी० ५

एह प्रसंगथी में कह्युं, प्रथम दृष्टि हवे कहीए रे,
जिहां मित्रा तिहां बोध जे, ते तृण अगनिसो लहीए रे. वी० ६

व्रत पण यम इहां संपजे, खेद नहीं शुभ काजे रे;
द्वेष नहीं वळी अवरशुं, एह गुण अंग विराजे रे. वी० ७

योगनां बीज इहां ग्रहे, जिनवर शुद्ध प्रणामो रे,
भावाचारज सेवना, भवउद्वेग सुठामो रे. वी० ८

द्रव्य अभिग्रह पाळवा, औषध प्रमुखने दाने रे,
आदर आगम आसरी, लिखनादिक बहुमाने रे. वी० ९

लेखन पूजन आपवुं, श्रुत वाचना उद्‌ग्राहो रे;
भाव विस्तार सज्झायथी, चिंतन भावन चाहो रे. वी० १०

बीज कथा भली सांभळी, रोमांचित हुवे देह रे,
एह अवंचक योगथी, लहीए धरम सनेह रे. वी० ११

सद्‌गुरु योगे वंदन क्रिया, तेहथी फळ होय जेहो रे,
योग क्रिया फळ भेदथी, त्रिविध अवंचक एहो रे. वी० १२

चाहे चकोर ते चंद्रने, मधुकर मालती भोगी रे,
तेम भवि सहजगुणे होये, उत्तम निमित्त संयोगी रे. वी० १३

एह अवंचक योग ते, प्रगटे चरमावर्त्ते रे,
साधुने सिद्धदशा समुं, बीजनुं चित्त प्रवर्त्ते रे. वी० १४

करण अपूर्वना निकटथी, जे पहेलुं गुणठाणु रे,
मुख्यपणे ते इहां होये, सुयश विलासनुं टाणुं रे. वी० १५

(ढाळ बीजी)

बीजी तारादृष्टि-विचार

(मनमोहन मेरे—ए देशी)

दर्शन तारा दृष्टिमां, मनमोहन मेरे, गोमय अग्नि समान, म०
शौच संतोष ने तप भलुं, म० सज्झाय ईश्वर ध्यान. म० १

नियम पंच इहां संपजे, म० नहीं किरिया उद्वेग, म०
जिज्ञासा गुणतत्त्वनी, म० पण नहीं निजहठ टेग, म० २

एह दृष्टि होय वरततां, म० योग कथा बहु प्रेम, म०
अनुचित तेह न आचरे, म० वाळ्यो वळे जेम हेम. म० ३

विनय अधिक गुणीनो करे, म० देखे निज गुण हाण, म०
त्रास धरे भवभय थकी, म० भव माने दुःखखाण. म० ४

शास्त्र घणां मति थोडली, म० शिष्ट कहे ते प्रमाण, म०
सुयश लहे ए भावथी, म० न करे जूठ डफाण. म० ५

(ढाळ त्रीजी)

त्रीजी बलादृष्टि-विचार

(प्रथम गोवाल तणे भवे जीरे—ए देशी)

त्रीजी दृष्टि बला कहीजी, काष्ठ अग्नि सम बोध,
क्षेप नहीं आसन सधेजी, श्रवण समीहा शोध रे.
जिनजी, धन धन तुज उपदेश. १

तरुण सुखी स्त्री परिवर्योजी, जेम चाहे सुरगीत,
सांभळवा तेम तत्त्वनेजी ए दृष्टि सुविनीत रे. जि० २

सरी ए बोध प्रवाहनीजी, ए विण श्रुत थल कूप,
श्रवण समीहा ते किसीजी, शयित सुणे जेम भूप रे. जि० ३

मन रीझे तन उल्लसेजी, रीझे बुझे एक तान,
ते इच्छा विण गुणकथाजी, बहेरा आगळ गान रे. जि० ४

विघन इहां प्राये नहींजी, धर्म हेतुमां कोय,
अनाचार परिहारथीजी, सुयश महोदय होय रे. जि० ५

(ढाळ चोथी)

चोथी दीप्तादृष्टि-विचार

(झांझरिया मुनिवर, धन धन तुम अवतार—ए देशी)

योग दृष्टि चोथी कहीजी, दीप्ता तिहां न उत्थान,
प्राणायाम ते भावथीजी, दीपप्रभा सम ज्ञान.
मनमोहन जिनजी, मीठी ताहरी वाण. १

बाह्य भाव रेचक इहांजी, पूरक अंतर भाव,
कुंभक थिरता गुणे करीजी, प्राणायाम स्वभाव. म० २

धर्म अर्थे इहां प्राणनेजी,—छांडे पण नहीं धर्म,
प्राण अर्थे संकट पडेजी, जुओ ए दृष्टिनो मर्म. म० ३

तत्त्वश्रवण मधुरोदकेजी, इहां होये बीज प्ररोह,
खार उदक सम भव त्यजेजी, गुरुभक्ति अद्रोह. म० ४

सूक्ष्मबोध तोपण इहांजी, समकित विण नवि होय,
वेद्य संवेद्य पदे कह्योजी, ते न अवेद्ये जोय. म० ५

वेद्य बंध शिव हेतु छेजी, संवेदन तस नाण,
नयनिक्षेपे अति भलुंजी, वेद्य संवेद्य प्रमाण. म० ६

ते पद ग्रंथि विभेदथीजी, छेहली पाप प्रवृत्ति,
तप्तलोह पद धृति समीजी, तिहां होय अंते निवृत्ति. म० ७

एह थकी विपरीत छेजी, पद ते अवेद्य संवेद्य,
भवाभिनंदी जीवनेजी, ते होय वज्र अभेद्य. म० ८

लोभी कृपण दयामणोजी, मायी मच्छर ठाण,
भवाभिनंदी भय भर्योजी, अफल आरंभ अयाण. म० ९

एवा अवगुणवंतनुंजी, पद छे अवेद्य कठोर,
साधु संग आगमतणोजी, [१]ते जीत्यो धुरंधोर. म० १०

ते जीते सहेजे टळेजी, विषम कुतर्क प्रकार,
दूर निकट हाथी हणेजी, जेम ए बठर विचार. म० ११

हुं पाम्यो संशय नहींजी, मूरख करे ए विचार,
आळसुआ गुरु शिष्यनोजी, ते तो वचन प्रकार. म० १२

१. पाठांतर—ते जीते धरी जोर

धीजे ते पतिआववुंजी, आपमते अनुमान,
आगम ने अनुमानथीजी, साचु लहे सुज्ञान. म० १३

नहीं सर्वज्ञ जुजुआजी, तेहना जे वळी दास,
भक्ति देवनी पण कहीजी, चित्र अचित्र प्रकाश. म० १४

देव संसारी अनेक छेजी, तेहनी भक्ति विचित्र,
एक राग पर द्वेषथीजी, एक मुक्तिनी अचित्र. म० १५

इंद्रियार्थगत बुध्धि छेजी, ज्ञान छे आगम हेत,
असंमोह शुभ कृति गुणेजी, तेणे फल भेद संकेत. म० १६

आदर किरिया रति घणीजी, विघन टळे मिले लच्छि,
जिज्ञासा बुध्ध सेवनाजी, शुभकृति चिह्न प्रत्यच्छि. म० १७

बुध्धि क्रिया भवफल दियेजी, ज्ञानक्रिया शिव अंग,
असंमोह किरिआ दियेजी, शीघ्र मुक्ति फल चंग. म० १८

पुद्‍गल रचना कारमीजी, तिहां जस चित्त न लीन,
एक मार्ग ते शिव तणोजी, भेद लहे जगदीन. म० १९

शिष्य भणी जिन देशनाजी, कहे जन परिणति भिन्न,
कहे मुनिनी नय देशनाजी, परमार्थथी अभिन्न. म० २०

शब्द भेद झघडो किस्योजी, परमारथ जो एक,
कहो गंगा कहो सुरनदीजी, वस्तु फरे नहीं छेक. म० २१

धर्म क्षमादिक पण मटेजी, प्रगटे धर्म संन्यास,
तो झघडा मोटा तणोजी, मुनिने कवण अभ्यास. म० २२

अभिनिवेश सघळो त्यजीजी, चार लही जेणे दृष्टि,
ते लेशे हवे पंचमीजी, सुयश अमृत घनवृष्टि. म० २३

(ढाळ पांचमी)

पांचमी स्थिरादृष्टि-विचार

(धन धन संप्रति साचो राजा—ए देशी)

दृष्टि थिरामांहे दर्शन नित्ये, रत्नप्रभा सम जाणो रे,
भ्रांति नहि वळी बोध ते सूक्ष्म, प्रत्याहार वखाणो रे. १

ए गुण वीर(राज) तणो न विसारुं, संभारुं दिनरात रे,
पशु टाली सुररूप करे जे, समकितने अवदात रे. ए० २

बाल धूलि घर लीला सरखी, भव चेष्टा इहां भासे रे,
रिध्धि सिध्धि सवि घटमां पेसे, अष्ट महा सिध्धि पासे रे. ए० ३

विषय विकारे न इंद्रिय जोडे, ते इहां प्रत्याहारो रे,
केवळ ज्योति ते तत्त्व प्रकाशे, शेष उपाय असारो रे. ए० ४

शीतळ चंदनथी पण उपन्यो, अग्नि दहे जेम वनने रे,
धर्मजनित पण भोग इहां तेम, लागे अनिष्ट ते मनने रे. ए० ५

अंशे होय इहां अविनाशी, पुद्‌गल जाल तमासी रे,
चिदानंदघन सुयश विलासी, केम होय जगनो आशी रे. ए० ६

(ढाळ छठ्ठी)

छठ्ठी कांतादृष्टि-विचार

(भोलीडा हंसा रे विषय न राचीए—ए देशी)

अचपल रोगरहित निष्ठुर नहि, अल्प होय दोय नीति,
गंध ते सारो रे कांति प्रसन्नता, सुस्वर प्रथम प्रवृत्ति.
धन धन शासन श्री जिनवरतणुं.-१

धीर प्रभावी रे आगले योगथी, मित्रादिक युत चित्त,
लाभ इष्टनो रे द्वंद्व अधृष्यता, जन प्रियता होय नित्य. ध० २

नाश दोषनो रे तृप्ति परम लहे, समता उचित संयोग,
नाश वैरनो रे बुध्धि शतंभरा, ए निष्पन्नह योग. ध० ३

चिह्न योगनां रे जे परग्रंथमां, योगाचारय दिठ्ठ,
पंचम दृष्टि थकी ते जोडीए, एहवा तेह गरिठ्ठ. ध० ४

छठ्ठी दिठ्ठी रे हवे कांता कहुं, तिहां ताराभ्र प्रकाश,
तत्त्व मीमांसा रे दृढ होये धारणा, नहीं अन्य श्रुतवास. ध० ५

मन महिलानुं रे वाहला उपरे, बीजां काम करंत,
तेम श्रुतधर्मे रे मन दृढ धरे, ज्ञानाक्षेपकवंत. ध० ६

एहवे ज्ञाने रे विघन निवारणे, भोग नहीं भवहेत,
नवि गुणदोष न विषयस्वरूपथी, मन गुण-अवगुण खेत. ध० ७

माया पाणी रे जाणी तेहने, लंघी जाय अडोल,
साचुं जाणी रे ते बीतो रहे, न चले डामाडोल. ध० ८

भोगतत्त्वने रे एम भय नवि टळे, जूठा जाणे रे भोग,
ते ए दृष्टि रे भवसायर तरे, लहे वळी सुयश संयोग. ध० ९

(ढाळ सातमी)

सातमी प्रभादृष्टि-विचार

(ए छिंडी किहां राखी—ए देशी)

अर्क प्रभा सम बोधप्रभामां, ध्यान प्रिया ए दिठ्ठी,
तत्त्व तणी प्रतिपत्ति इहां वळी, रोग नहीं सुख पुठ्ठी रे.
भविका, वीर वचन चित्त धरीए. १

सघळुं परवश ते दुःख लक्षण, निजवश ते सुख लहीए,
ए दृष्टे आतम गुण प्रगटे, कहो सुख ते कुण कहीए रे ? भ० २

नागर सुख पामर नवि जाणे, वल्लभ सुख न कुमारी,
अनुभव विण तेम ध्यानतणुं सुख, कोण जाणे नरनारी रे. भ० ३

एह दृष्टिमां निर्मळ बोधे, ध्यान सदा होय साचुं,
दूषण रहित निरंतर ज्योति, रत्न ते दीपे जाचुं रे. भ० ४

विषभाग क्षय, शांतवाहिता, शिवमारग ध्रुवनाम,
कहे असंग क्रिया इहां योगी, विमल सुयश परिणाम रे. भ० ५

(ढाळ आठमी)

आठमी परादृष्टि-विचार

राज समर तुं, राज समर तुं, राज हृदयमां राखीने,
माथा उपर मरण भमे छे, काळ रह्यो छे ताकीने. —ए देशी

दृष्टि आठमी सार समाधि, नाम परा तस जाणुंजी,
आप स्वभावे प्रवृत्ति पूरण, शशिसम बोध वखाणुंजी;
निरतिचार पद एहमां योगी, कहिये नहीं अतिचारीजी,
आरोहे आरूढे गिरिने, तेम एहनी गति न्यारीजी. १

चंदन गंध समान क्षमा इहां, वासकने न गवेषेजी,
आसंगे वर्जित वळी एहमां, किरिया निजगुण लेखेजी;
शिक्षाथी जेम रतन नियोजन, दृष्टि भिन्न तेम एहोजी,
तास नियोगे करण अपूरव, लहे मुनि केवल गेहोजी. २

क्षीण दोष सर्वज्ञ महामुनि, सर्व लब्धि फल भोगीजी,
पर उपगार करी शिव सुख ते, पामे योग अयोगीजी;

सर्व शत्रुक्षय सर्व व्याधिलय, पूरण सर्व [१]समीहाजी,
सर्व अरथ योगे सुख तेहथी, अनंतगुण निरीहाजी. ३

उपसंहार

ए अडदिट्ठी कही संक्षेपे, योग शास्त्र संकेतेजी,
कुलयोगी ने प्रवृत्तचक्र जे, तेह तणे हित हेतेजी;
योगी कुले जाया तस धर्मे, अनुगत ते कुलयोगीजी,
अद्वेषी गुरुदेवद्विज-प्रिय, दयावंत उपयोगीजी. ४

शुश्रूषादिक अडगुण संपूरण, प्रवृत्तचक्र ते कहियेजी,
यमद्वय लाभी परदुग अर्थी, आद्य अवंचक लहियेजी;
चार अहिंसादिक यम इच्छा, प्रवृत्ति थिर सिद्धिनामेजी,
शुद्ध रुचे पाले अतिचारह, टाळे फल परिणामेजी. ५

कुलयोगी ने प्रवृत्तचक्रने, श्रवण शुद्धि पक्षपातजी,
योगदृष्टि ग्रंथे हित होवे, तेणे कही ए वातजी;
शुद्ध भाव ने सूनी किरिया, बेहुमां अंतर केतोजी,
जलहलतो सूरज ने खजुओ, तास तेजमां तेतोजी. ६

गुह्य भाव ए तेहने कहिये, जेहसुं अंतर भांजेजी,
जेहसुं चित्त पटंतर होवे, तेहसुं गुह्य न छाजेजी;
योग्य अयोग्य विभाग अलहतो, करशे मोटी वातोजी,
खमशे ते पंडित परषदमां, मुष्टिप्रहार ने लातोजी. ७

सभा त्रण श्रोता गुण अवगुण, नंदी सूत्रे दीसेजी,
ते जाणी ए ग्रन्थ योग्यने, देजो सुगुण जगीशेजी;
लोक पूरजो निज निज इच्छा-योग भाव गुण रयणेजी,
श्री नयविजय विबुध पयसेवक, वाचक यशने वयणेजी. ८

---

१. वांच्छा.

*२३. छूटक पदो

“सुखकी सहेली हे, अकेली उदासीनता,”
अध्यात्मनी जननी, ते उदासीनता.

लघु वयथी अद्‌भुत थयो, तत्त्वज्ञाननो बोध,
ए ज सूचवे एम के, गति आगति कां शोध? १
जे संस्कार थवो घटे, अति अभ्यासे कांय,
विना परिश्रम ते थयो, भवशंका शी त्यांय? २
जेम जेम मति अल्पता, अने मोह उद्योत,
तेम तेम भवशंकना, अपात्र अंतर ज्योत. ३
करी कल्पना दृढ करे, नाना नास्ति विचार,
पण अस्ति ते सूचवे, ए ज खरो निर्धार. ४
आ भव वण भव छे नहीं, ए ज तर्क अनुकूळ,
विचारतां पामी गया, आत्मधर्मनुं मूळ. ५

सं० १९४५ —श्रीमद् राजचंद्र

(२)

भिन्न भिन्न मत देखीए, भेद दृष्टिनो एह,
एक तत्त्वना मूळमां, व्याप्या मानो तेह. १
तेह तत्त्वरूप वृक्षनुं, आत्मधर्म छे मूळ,
स्वभावनी सिद्धि करे, धर्म ते ज अनुकूळ. २
प्रथम आत्मसिद्धि थवा, करीए ज्ञान विचार,
अनुभवी गुरुने सेविये, बुधजननो निर्धार. ३
क्षण क्षण जे अस्थिरता, अने विभाविक मोह,
ते जेनामांथी गया, ते अनुभवी गुरु जोय. ४
बाह्य तेम अभ्यंतरे, ग्रंथ ग्रंथि नहि होय,
परम पुरुष तेने कहो, सरळ दृष्टिथी जोय. ५

सं० १९४५ —श्रीमद् राजचंद्र

(मध्याह्न पछीनी भक्तिनो क्रम : समय २ थी ४।)

मंगळाचरण तथा जिनेश्वरनी वाणी : पृष्ठ १-२
वीश दोहरा—यमनियम—क्षमापना : पृष्ठ ६-१९-२०

२४. गुणस्थान आरोहण क्रम

१ अपूर्व अवसर एवो क्यारे आवशे?
क्यारे थईशुं बाह्यांतर निर्ग्रंथ जो?
सर्व संबंधनुं बंधन तीक्ष्ण छेदीने,
विचरशुं कव महत् पुरुषने पंथ जो? अपूर्व०

२ सर्व भावथी औदासीन्यवृत्ति करी,
मात्र देह ते संयमहेतु होय जो;
अन्य कारणे अन्य कशुं कल्पे नहीं,
देहे पण किंचित् मूर्छा नव जोय जो. अपूर्व०

३ दर्शनमोह व्यतीत थई ऊपज्यो बोध जे,
देह भिन्न केवल चैतन्यनुं ज्ञान जो;
तेथी प्रक्षीण चारित्रमोह विलोकिये,
वर्ते एवुं शुद्धस्वरूपनुं ध्यान जो. अपूर्व०

४ आत्मस्थिरता त्रण संक्षिप्त योगनी,
मुख्यपणे तो वर्ते देहपर्यंत जो;
घोर परीषह के उपसर्ग भये करी,
आवी शके नहि ते स्थिरतानो अंत जो. अपूर्व०

५ संयमना हेतुथी योगप्रवर्त्तना,
स्वरूपलक्षे जिनआज्ञा आधीन जो;
ते पण क्षण क्षण घटती जाती स्थितिमां,
अंते थाये निजस्वरूपमां लीन जो. अपूर्व०

६ पंच विषयमां रागद्वेष विरहितता,
पंच प्रमादे न मळे मननो क्षोभ जो;
द्रव्य, क्षेत्र ने काळ, भाव प्रतिबंध वण,
विचरवुं उदयाधीन पण वीतलोभ जो. अपूर्व०

७ क्रोध प्रत्ये तो वर्ते क्रोधस्वभावता,
मान प्रत्ये तो दीनपणानुं मान जो;
माया प्रत्ये माया साक्षी भावनी,
लोभ प्रत्ये नहीं लोभ समान जो. अपूर्व०

८ बहु उपसर्गकर्ता प्रत्ये पण क्रोध नहीं,
वंदे चक्री तथापि न मळे मान जो;
देह जाय पण माया थाय न रोममां,
लोभ नहीं छो प्रबळ सिद्धि निदान जो. अपूर्व०

९ नग्नभाव, मुंडभाव सह अस्नानता,
अदंतधोवन आदि परम प्रसिद्ध जो;
केश, रोम, नख के अंगे शृंगार नहीं,
द्रव्यभाव संयममय निर्ग्रंथ सिद्ध जो. अपूर्व०

१० शत्रु मित्र प्रत्ये वर्ते समदर्शिता,
मान अमाने वर्ते ते ज स्वभाव जो;
जीवित के मरणे नहि न्यूनाधिकता,
भव मोक्षे पण शुद्ध वर्ते समभाव जो. अपूर्व०

११ एकाकी विचरतो वळी स्मशानमां,
वळी पर्वतमां वाघ सिंह संयोग जो;
अडोल आसन, ने मनमां नहीं क्षोभता,
परम मित्रनो जाणे पाम्या योग जो. अपूर्व०

१२ घोर तपश्चर्यामां पण मनने ताप नहीं,
सरस अन्ने नहीं मनने प्रसन्नभाव जो;
रजकण के रिद्धि वैमानिक देवनी,
सर्वे मान्यां पुद्गल एक स्वभाव जो. अपूर्व०

१३ एम पराजय करीने चारित्रमोहनो,
आवुं त्यां ज्यां करण अपूर्व भाव जो;
श्रेणी क्षपकतणी करीने आरूढता,
अनन्य चिंतन अतिशय शुद्ध स्वभाव जो. अपूर्व०

१४ मोह स्वयंभूरमण समुद्र तरी करी,
स्थिति त्यां ज्यां क्षीणमोह गुणस्थान जो;
अंत समय त्यां पूर्णस्वररूप वीतराग थई,
प्रगटावुं निज केवळज्ञान निधान जो. अपूर्व०

१५ चार कर्म घनघाती ते व्यवच्छेद ज्यां,
भवनां बीजतणो आत्यंतिक नाश जो;
सर्व भाव ज्ञाता द्रष्टा सह शुद्धता,
कृतकृत्य प्रभु वीर्य अनंत प्रकाश जो. अपूर्व०

१६ वेदनीयादि चार कर्म वर्त्ते जहां,
बळी सींदरीवत् आकृति मात्र जो;
ते देहायुष आधीन जेनी स्थिति छे,
आयुष पूर्णे, मटिये दैहिक पात्र जो. अपूर्व०

१७ मन, वचन, काया ने कर्मनी वर्गणा,
छूटे जहां सकळ पुद्गल संबंध जो;
एवुं अयोगी गुणस्थानक त्यां वर्ततुं,
महाभाग्य सुखदायक पूर्ण अबंध जो. अपूर्व०

१८ एक परमाणुमात्रनी मळे न स्पर्शता,
पूर्ण कलंक रहित अडोल स्वरूप जो;
शुद्ध निरंजन चैतन्यमूर्ति अनन्यमय,
अगुरुलघु, अमूर्त्त सहजपदरूप जो. अपूर्व॰

१९ पूर्वप्रयोगादि कारणना योगथी,
ऊर्ध्वगमन सिद्धालय प्राप्त सुस्थित जो;
सादि अनंत अनंत समाधिसुखमां,
अनंत दर्शन, ज्ञान अनंत सहित जो. अपूर्व॰

२० जे पद श्री सर्वज्ञे दीठुं ज्ञानमां,
कही शक्या नहीं पण ते श्री भगवान जो;
तेह स्वरूपने अन्य वाणी ते शुं कहे ?
अनुभवगोचर मात्र रह्युं ते ज्ञान जो. अपूर्व॰

२१ एह परमपद प्राप्तिनुं कर्युं ध्यान में,
गजा वगर ने हाल मनोरथरूप जो;
तोपण निश्चय राजचंद्र मनने रह्यो,
प्रभुआज्ञाए थाशुं ते ज स्वरूप जो. अपूर्व॰

—श्रीमद् राजचंद्र

---

२५. मूळमार्ग रहस्य

मूळ मारग सांभळो जिननो रे, करी वृत्ति अखंड सन्मुख, मू॰
नो'य पूजादिनी जो कामना रे, नो'य व्हालुं अंतर भवदुःख. मू॰ १

करी जोजो वचननी तुलना रे, जोजो शोधीने जिनसिद्धांत, मू॰
मात्र कहेवुं परमारथ हेतुथी रे, कोई पामे मुमुक्षु वात. मू॰ २

ज्ञान, दर्शन, चारित्रनी शुद्धता रे, एकपणे अने अविरुद्ध, मू॰
जिन मारग ते परमार्थथी रे, एम कह्युं सिद्धांते बुध. मू॰ ३

लिंग अने भेदो जे व्रतना रे, द्रव्य देश काळादि भेद, मू०
पण ज्ञानादिनी जे शुद्धता रे, ते तो त्रणे काळे अभेद. मू० ४

हवे ज्ञान दर्शनादि शब्दनो रे, संक्षेपे सुणो परमार्थ, मू०
तेने जोतां विचारी विशेषथी रे, समजाशे उत्तम आत्मार्थ. मू० ५

छे देहादिथी भिन्न आतमा रे, उपयोगी सदा अविनाश, मू०
एम जाणे सद्गुरु उपदेशथी रे, कह्युं ज्ञान तेनुं नाम खास. मू० ६

जे ज्ञाने करीने जाणियुं रे, तेनी वर्ते छे शुद्ध प्रतीत, मू०
कह्युं भगवंते दर्शन तेहने रे, जेनुं बीजुं नाम समकित. मू० ७

जेम आवी प्रतीति जीवनी रे, जाण्यो सर्वेथी भिन्न असंग, मू०
तेवो स्थिर स्वभाव ते ऊपजे रे, नाम चारित्र ते अणलिंग. मू० ८

ते त्रणे अभेद परिणामथी रे, ज्यारे वर्ते ते आत्मारूप, मू०
तेह मारग जिननो पामियो रे, किंवा पाम्यो ते निजस्वरूप. मू० ९

एवां मूळ ज्ञानादि पामवा रे, अने जवा अनादि बंध; मू०
उपदेश सद्गुरुनो पामवो रे, टाळी स्वच्छंद ने प्रतिबंध. मू० १०

एम देव जिनंदे भाखियुं रे, मोक्षमारगनुं शुद्ध स्वरूप; मू०
भव्य जनोना हितने कारणे रे, संक्षेपे कह्युं स्वरूप. मू० ११

आणंद, सं० १९५२ —श्रीमद् राजचंद्र

(सायंकाळनी भक्तिनो क्रम : समय ६)

२६. सायंकाळनी स्तुति तथा देववंदन

महादेव्याः कुक्षिरत्नं शब्दजीतवरात्मजम्;
राजचंद्रमहं वंदे तत्त्वलोचनदायकम्. १

जय गुरुदेव ! सहजात्मस्वरूप परमगुरु शुद्ध चैतन्य स्वामी.

पाठान्तरः शब्दजीतरवात्मजम्

ॐकारं बिंदुसंयुक्तं नित्यं ध्यायंति योगिनः
कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमोनमः २

मंगलमय मंगलकरण, वीतराग विज्ञान;
नमो ताहि जाते भये, अरिहंतादि महान. ३

विश्वभाव व्यापि तदपि, एक विमल चिद्रूप;
ज्ञानानंद महेश्वरा, जयवंता जिनभूप. ४

महत्तत्त्व महनीय महः महाधाम गुणधाम;
चिदानंद परमातमा, वंदो रमता राम. ५

तीनभुवन चूडारतन,-सम श्री जिनके पाय;
नमत पाईए आप पद, सब विधि बंध नशाय. ६

दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पापनाशनम्;
दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम्. ७

दर्शनाद् दुरितध्वंसि, वंदनाद् वांछितप्रदः
पूजनात् पूरकः श्रीणां, जिनः साक्षात् सुरद्रुमः ८

प्रभुदर्शन सुखसंपदा, प्रभुदर्शन नवनिधि;
प्रभुदर्शनसें पामिये, सकल मनोरथ-सिद्धि. ९

ब्रह्मानंदं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिम्,
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादि लक्ष्यम्;
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वदा साक्षीभूतम्,
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि. १०

आनन्दमानन्दकरं प्रसन्नं ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपम्,
योगीन्द्रमीड्यं भवरोगवैद्यं श्रीमद् गुरुं नित्यमहं नमामि, ११

श्रीमद् परब्रह्मगुरुं वदामि श्रीमद् परब्रह्मगुरुं नमामि,
श्रीमद् परब्रह्मगुरुं भजामि श्रीमद् परब्रह्मगुरुं स्मरामि. १२

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः १३

ध्यानमूलं गुरुमूर्तिः पूजामूलं गुरुपदम्,
मंत्रमूलं गुरुवाक्यं मोक्षमूलं गुरुकृपा. १४

अखंडमंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्,
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः १५

अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानांजनशलाकया,
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः १६

ध्यानधूपं मनःपुष्पं पंचेन्द्रिय हुताशनम्,
क्षमाजाप संतोषपूजा पूज्यो देवो निरंजनः १७

देवेषू देवोऽस्तु निरंजनो मे, गुरुर्गुरुष्वस्तु दमी शमी मे;
धर्मेषु धर्मोऽस्तु दया परो मे, त्रीण्येव तत्त्वानि भवे भवे मे, १८

परात्परगुरवे नमः परंपराचार्य गुरवे नमः
परमगुरवे नमः साक्षात् प्रत्यक्षसद्गुरवे नमोनमः १९

अहो ! अहो ! श्री सद्गुरु, करुणासिंधु अपार;
आ पामर पर प्रभु कर्यो, अहो ! अहो ! उपकार. २०

शुं प्रभुचरण कने धरुं, आत्माथी सौ हीन;
ते तो प्रभुए आपियो, वर्तुं चरणाधीन. २१

आ देहादि आजथी, वर्तो प्रभु आधीन;
दास, दास हुं दास छुं, आप प्रभुनो दीन. २२

षट् स्थानक समजावींने, भिन्न बताव्यो आप;
म्यानथकी तरवारवत्, ए उपकार अमाप. २३

जे स्वरूप समज्या विना, पाम्यो दुःख अनंत;
समजाव्युं ते पद नमु, श्री सद्गुरु भगवंत. २४

नमस्कार

जय जय गुरुदेव ! सहजात्मस्वरूप परमगुरु शुद्ध चैतन्य स्वामी अंतरजामी भगवान, इच्छामि खमासमणो वंदिउ जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि.

परम पुरुष प्रभु सद्‌गुरु, परमज्ञान सुखधाम;
जेणे आप्युं भान निज, तेने सदा प्रणाम. २५

नमस्कार

जय जय गुरुदेव ! ....मत्थएण वंदामि.

देह छतां जेनी दशा, वर्ते देहातीत;
ते ज्ञानीना चरणमां, हो वंदन अगणित. २६

नमस्कार

जय जय गुरुदेव !...........मत्थएण वंदामि.

नमोऽस्तु नमोऽस्तु. नमोऽस्तु, शरणं, शरणं, शरणं, त्रिकालशरणं, भवोभव शरणं, सद्‌गुरु शरणं, सदा सर्वदा, त्रिविध त्रिविध भाववंदन हो, विनयवंदन हो, समयात्मक वंदन हो. ॐ नमोऽस्तु जय गुरुदेव शांति; परम तारु, परम सज्जन, परम हेतु, परम दयाळ, परम मयाळ, परम कृपाळ, वाणीसुरसाळ, अति सुकुमाळ, जीवदया प्रतिपाळ, कर्मशत्रुना काळ, 'मा हणो मा हणो' शब्दना करनार, आपके चरणकमलमें मेरा मस्तक, आपके चरणकमल मेरे हृदयकमलमें अखंडपणे संस्थापित रहें, संस्थापित रहें; सत्पुरुषोंका सत्स्वरूप, मेरे चित्तस्मृतिके पटपर टंकोत्कीर्णवत् सदोदित, जयवंत रहें, जयवंत रहें.

आनंदमानन्दकरं प्रसन्नं ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपम्,
योगीन्द्रमीड्यं भवरोगवैद्यं श्रीमद् गुरुं नित्यमहं नमामि.

२७. आरती (१)

जय जय आरती सद्‌गुरुराया,
श्रीमद् राजचंद्र नमुं (तुज) पाया. जय० १

पहेली आरती मिथ्या टाळे,
सम्यग्‌ज्ञान प्रकाश निहाळे. जय० २

बीजी आरती बीज उगाडे,
द्वंद्वातीतपणाने पमाडे. जय० ३

त्रीजी आरती त्रिकरण शुद्धि,
थाये सहेजे निर्मळ बुद्धि. जय० ४

चोथी आरती अनंत चतुष्टय,
परिणामे आपे पद अव्यय. जय० ५

पंचमी आरती पंच संवरथी,
शुद्ध स्वभाव सहज लहे अरथी. जय० ६

श्रीमद् सद्‌गुरुराज कृपाए,
सत्य मुमुक्षुपणुं प्रगटाये. जय० ७

आरती (२)

जय देव जय देव, जय पंच परमपद स्वामी,
प्रभु पंच परम पद स्वामी;
मोहादिक हण्याथी (२) अनंत गुणधामी. जयदेव० १

लोकालोकप्रकाशक, सूर्य प्रगट ज्ञानी; प्रभु०
आरती करी जीव पामे (२) शिवपद सुखखाणी. जयदेव० २
पहेली आरती प्रभुनी, जिज्ञासु करता; प्रभु०
निज पद लक्ष लही ते (२) मिथ्यामति हरता. जयदेव० ३

बीजी आरती प्रभुनी, समकिती करता; प्रभु॰
प्रभु सम निज चिद्रूपने (२) अंतर अनुभवता. जयदेव॰ ४

त्रीजी आरती प्रभुनी, शांत सुधा झरता; प्रभु॰
रत्नत्रय उज्ज्वलथी (२) धर्मध्यान धरता. जयदेव॰ ५

चोथी आरती प्रभुनी, श्रेणी क्षपक चडता;प्रभु॰
शुक्ल ध्यान वर योगे (२) मोह शत्रु हणता. जयदेव॰ ६

पंचमी आरती प्रभुनी, केवलश्री वरता; प्रभु॰
धन्य धन्य सहजात्मा (२) सिद्धिसदन वसता. जयदेव॰ ७

शुद्ध चिदात्मनी आरती, आत्मार्थी करता; प्रभु॰
श्री गुरुराज-कृपाथी (२) भवजलधि तरता. जयदेव॰ ८

---

२८. मंगल दीवो (१)

दीवो रे दीवो प्रभु मंगलिक दीवो,
श्रीमद् सद्गुरु शाश्वत जीवो. दीवो॰ १

सम्यग्दर्शन नयन अजवाळे,
केवल ज्ञान प्रकाश निहाळे. दीवो॰ २

भवभ्रमतिमिरनुं मूळ नसावे,
मोह पतंगनी भस्म बनावे. दीवो॰ ३

पात्र मुमुक्षु न नीचे राखे,
तपवे नहि ए अचरिज दाखे. दीवो॰ ४

कलिमल सब उत्पत्ति जाये,
श्रीमद् सद्गुरु सदाय वराये. दीवो॰ ५

श्रोता वक्ता भक्त सकलमें,
शिवकर वृद्धि करे मंगलमें. दीवो॰ ६

श्रीमद् सेवक भाव प्रभावे,
सेवक सेव्य अभेद स्वभावे, दीवो० ७

मंगल दीवो (२)

दीवो रे दीवो प्रभु मंगलिक दीवो,
ज्ञान दीवो प्रभु तुज चिरंजीवो. दीवो० १

निश्चय दीवे प्रगटे दीवो,
प्रगटावो भवि दिलमां दीवो. दीवो० २

प्रगट दीवो ज्ञानी परमात्मा,
तेने अर्पण हो निज आत्मा. दीवो० ३

बहिरातमता तजी प्रभु शरणे,
बनो अंतरात्मा प्रभु स्मरणे. दीवो० ४

परमातमता निशदिन भावे,
आतम अर्पणता तो थावे. दीवो० ५

आत्मभावना सतत अभ्यासे,
निज सहजात्मस्वरूप प्रकाशे. दीवो० ६

आत्मदृष्टि दीवो जलहलतो,
प्रगट्यो उरमां जन्म सफळ तो. दीवो० ७

श्रीमद् सद्गुरु राजकृपाथी,
स्वरूपसिद्धि साधे मोक्षार्थी. दीवो० ८

(रात्रिनी भक्तिनो क्रम : समय ७॥-९॥)

वंदन तथा प्रणिपात स्तुति : पृष्ठ ३८
मंगळाचरण तथा जिनेश्वरनी वाणी : पृष्ठ १-२
वीश दोहरा—यमनियम : पृष्ठ ६-१९

२९. भक्तिनो उपदेश

(तोटक छंद)

शुभ शीतळतामय छांय रही, मनवांछित ज्यां फळपंक्ति कही;
जिनभक्ति ग्रहो तरु कल्प अहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. १

निज आत्मस्वरूप मुदा प्रगटे, मनताप उताप तमाम मटे;
अति निर्जरता वणदाम ग्रहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. २

समभावी सदा परिणाम थशे, जड मंद अधोगति जन्म जशे;
शुभ मंगळ आ परिपूर्ण चहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. ३

शुभ भाव वडे मन शुद्ध करो, नवकार महापदने समरो;
नहि एह समान सुमंत्र कहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. ४

करशो क्षय केवळ राग कथा, धरशो शुभ तत्त्वस्वरूप यथा;
नृपचंद्र प्रपंच अनंत दहो, भजीने भगवंत भवंत लहो. ५

सं० १९४१ —श्रीमद् राजचंद्र

३०

बिना नयन पावे नहीं, बिना नयनकी बात;
सेवे सद्गुरुके चरन, सो पावे साक्षात्. १

बूझी चहत जो प्यासको, है बूझनकी रीत;
पावे नहि गुरुगम बिना, एही अनादि स्थित. २

एही नहि है कल्पना, एही नहीं विभंग;
कई नर पंचमकालमें, देखी वस्तु अभंग. ३

नहि दे तुं उपदेशकुं, प्रथम लेहि उपदेश;
सबसें न्यारा अगम है, वो ज्ञानीका देश. ४

जप, तप और व्रतादि सब, तहां लगी भ्रमरूप;
जहां लगी नहि संतकी, पाई कृपा अनूप. ५

पायाकी ए बात है, निज छंदनको छोड;
पिछे लाग सत्पुरुषके, तो सब बंधन तोड. ६

मुंबई, सं० १९४७ —श्रीमद् राजचंद्र

---

३१. अमूल्य तत्त्वविचार

(हरिगीत छंद)

बहु पुण्यकेरा पुंजथी, शुभ देह मानवनो मळ्यो,
तोये अरे! भवचक्रनो, आंटो नहीं एक्के टळ्यो;
सुख प्राप्त करतां सुख टळे छे, लेश ए लक्षे लहो,
क्षण क्षण भयंकर भावमरणे, कां अहो राची रहो? १

लक्ष्मी अने अधिकार वधतां, शुं वध्युं ते तो कहो?
शुं कुटुंब के परिवारथी, वधवापणुं ए नय ग्रहो;
वधवापणुं संसारनुं, नर देहने हारी जवो,
एनो विचार नहीं अहोहो! एक पळ तमने हवो!!! २

निर्दोष सुख निर्दोष आनंद, ल्यो गमे त्यांथी भले,
ए दिव्य शक्तिमान जेथी जंजीरेथी नीकळे;
परवस्तुमां नहि मूंझवो, एनी दया मुजने रही,
ए त्यागवा सिद्धांत के पश्चात्दुःख ते सुख नहीं. ३

हुं कोण छुं? क्यांथी थयो? शुं स्वरूप छे मारुं खरुं?
कोना संबंधे वळगणा छे? राखुं के ए परहरुं?

एना विचार विवेकपूर्वक, शांत भावे जो कर्या,
तो सर्व आत्मिक ज्ञाननां, सिद्धांततत्त्व अनुभव्यां. ४

ते प्राप्त करवा वचन कोनुं सत्य केवळ मानवुं ?
निर्दोष नरनुं कथन मानो 'तेह' जेणे अनुभव्युं;
रे ! आत्म तारो ! आत्म तारो ! शीघ्र एने ओळखो,
सर्वात्ममां समदृष्टि द्यो, आ वचनने हृदये लखो. ५

सं० १९४१ —श्रीमद् राजचंद्र

---

३२. ब्रह्मचर्य विषे सुभाषित

(दोहरा)

नीरखीने नवयौवना, लेश न विषयनिदान;
गणे काष्ठनी पूतळी, ते भगवान समान. १

आ सघळा संसारनी, रमणी नायकरूप;
ए त्यागी, त्याग्युं बधुं, केवळ शोकस्वरूप. २

एक विषयने जीततां, जीत्यो सौ संसार;
नृपति जीततां जीतिये, दळ, पुर ने अधिकार. ३

विषयरूप अंकुरथी, टळे ज्ञान ने ध्यान;
लेश मदिरापानथी, छाके ज्यम अज्ञान. ४

जे नव वाड विशुद्धथी, धरे शियळ सुखदाई;
भव तेनो लव पछीं रहे, तत्त्ववचन ए भाई. ५

सुंदर शियळ सुरतरु, मन वाणी ने देह;
जे नरनारी सेवशे, अनुपम फळ ले तेह. ६

पात्र विना वस्तु न रहे, पात्रे आत्मिक ज्ञान;
पात्र थवा सेवो सदा, ब्रह्मचर्य मतिमान. ७

सं० १९४१ —श्रीमद् राजचंद्र

क्षमापना—छ पदनो पत्र, पृष्ठ २०-२१
वीतरागनो कहेलो....धर्म....पृष्ठ २६
मुखपाठ पत्रो, मोक्षमाळाना पाठ वगेरे......
त्रण मंत्रनी माळा

---

३३. श्री आत्मसिद्धि शास्त्र

जे स्वरूप समज्या विना, पाम्यो दुःख अनंत;
समजाव्युं ते पद नमुं, श्री सद्‌गुरु भगवंत. १

वर्तमान आ काळमां, मोक्षमार्ग बहु लोप;
विचारवा आत्मार्थीने, भाख्यो अत्र अगोप्य. २

कोई क्रियाजड थई रह्या, शुष्कज्ञानमां कोई;
माने मारग मोक्षनो, करुणा ऊपजे जोई. ३

बाह्य क्रियामां राचतां, अंतर्भेद न कांई;
ज्ञानमार्ग निषेधतां, तेह क्रियाजड आंइ. ४

बंध मोक्ष छे कल्पना, भाखे वाणी मांही;
वर्ते मोहावेशमां, शुष्कज्ञानी ते आंही. ५

वैराग्यादि सफळ तो, जो सह आतमज्ञान;
तेम ज आतमज्ञाननी, प्राप्तितणां निदान. ६

त्याग विराग न चित्तमां, थाय न तेने ज्ञान;
अटके त्याग विरागमां, तो भूले निज भान. ७

ज्यां ज्यां जे जे योग्य छे, तहां समजवुं तेह;
त्यां त्यां ते ते आचरे, आत्मार्थी जन एह. ८

सेवे सद्‌गुरुचरणने, त्यागी दई निजपक्ष;
पामे ते परमार्थने, निजपदनो ले लक्ष. ९

आत्मज्ञान समदर्शिता, विचरे उदय प्रयोग;
अपूर्व वाणी परमश्रुत, सद्गुरु लक्षण योग्य. १०

प्रत्यक्ष सद्गुरु सम नहीं, परोक्ष जिन उपकार;
एवो लक्ष थया विना, ऊँगे न आत्मविचार. ११

सद्गुरुना उपदेश वण, समजाय न जिनरूप;
समज्या वण उपकार शो ? समज्ये जिनस्वरूप. १२

आत्मादि अस्तित्वनां, जेह निरूपक शास्त्र;
प्रत्यक्ष सद्गुरु योग नहि, त्यां आधार सुपात्र. १३

अथवा सद्गुरुए कह्यां, जे अवगाहन काज;
ते ते नित्य विचारवां, करी मतांतर त्याज. १४

रोके जीव स्वच्छंद तो, पामे अवश्य मोक्ष;
पाम्या एम अनंत छे, भाख्युं जिन निर्दोष. १५

प्रत्यक्ष सद्गुरु-योगथी, स्वच्छंद ते रोकाय;
अन्य उपाय कर्या थकी, प्राये बमणो थाय. १६

स्वच्छंद मत आग्रह तजी, वर्ते सद्गुरु लक्ष;
समकित तेने भाखियुं, कारण गणी प्रत्यक्ष. १७

मानादिक शत्रु महा, निजछंदे न मराय;
जातां सद्गुरु शरणमां, अल्प प्रयासे जाय. १८

जे सद्गुरु उपदेशथी, पाम्यो केवळज्ञान;
गुरु रह्या छद्मस्थ पण, विनय करे भगवान. १९

एवो मार्ग विनय तणो, भाख्यो श्री वीतराग;
मूळ हेतु ए मार्गनो, समजे कोई सुभाग्य. २०

असद्‌गुरु ए विनयनो, लाभ लहे जो कांई;
महा मोहनीय कर्मथी, बूडे भवजळ मांही. २१

होय मुमुक्षु जीव ते, समजे एह विचार;
होय मतार्थी जीव ते, अवळो ले निर्धार. २२

होय मतार्थी तेहने, थाय न आतमलक्ष;
तेह मतार्थी लक्षणो, अहीं कह्यां निर्पक्ष. २३

मतार्थी–लक्षण

बाह्यत्याग पण ज्ञान नहि, ते माने गुरु सत्य;
अथवा निजकुळधर्मना, ते गुरुमां ज ममत्व. २४

जे जिनदेह प्रमाण ने, समवसरणादि सिद्धि;
वर्णन समजे जिननुं, रोकी रहे निज बुद्धि. २५

प्रत्यक्ष सद्‌गुरुयोगमां, वर्ते दृष्टि विमुख;
असद्‌गुरुने दृढ करे, निजमानार्थे मुख्य. २६

देवादि गति भंगमां, जे समजे श्रुतज्ञान;
माने निज मत वेषनो, आग्रह मुक्तिनिदान. २७

लह्युं स्वरूप न वृत्तिनुं, ग्रह्युं व्रत अभिमान;
ग्रहे नहीं परमार्थने, लेवा लौकिक मान. २८

अथवा निश्चयनय ग्रहे, मात्र शब्दनी मांय;
लोपे सद्‌व्यवहारने, साधन रहित थाय. २९

ज्ञानदशा पामे नहीं, साधनदशा न कांई;
पामे तेनो संग जे, ते बूडे भवमांही. ३०

ए पण जीव मतार्थमां, निजमानादि काज;
पामे नहि परमार्थने, अन्‌-अधिकारीमां ज. ३१

नहि कषाय उपशांतता, नहि अंतर वैराग्य;
सरळपणुं न मध्यस्थता, ए मतार्थी दुर्भाग्य. ३२

लक्षण कह्यां मतार्थीनां, मतार्थ जावा काज;
हवे कहुं आत्मार्थीनां, आत्म-अर्थ सुखसाज. ३३

आत्मार्थी-लक्षण

आत्मज्ञान त्यां मुनिपणुं, ते साचा गुरु होय;
बाकी कुळगुरु कल्पना, आत्मार्थी नहि जोय. ३४

प्रत्यक्ष सद्‌गुरु प्राप्तिनो, गणे परम उपकार;
त्रणे योग एकत्वथी, वर्ते आज्ञाधार. ३५

एक होय त्रण काळमां, परमारथनो पंथ;
प्रेरे ते परमार्थने, ते व्यवहार समंत. ३६

एम विचारी अंतरे, शोधे सद्‌गुरु योग;
काम एक आत्मार्थनुं, बीजो नहि मनरोग. ३७

कषायनी उपशांतता, मात्र मोक्ष अभिलाष;
भवे खेद प्राणीदया, त्यां आत्मार्थ निवास. ३८

दशा न एवी ज्यां सुधी, जीव लहे नहि जोग;
मोक्षमार्ग पामे नहीं, मटे न अंतर रोग. ३९

आवे ज्यां एवी दशा, सद्‌गुरुबोध सुहाय;
ते बोधे सुविचारणा, त्यां प्रगटे सुखदाय. ४०

ज्यां प्रगटे सुविचारणा, त्यां प्रगटे निजज्ञान;
जे ज्ञाने क्षय मोह थई, पामे पद निर्वाण. ४१

ऊपजे ते सुविचारणा, मोक्षमार्ग समजाय;
गुरुशिष्य संवादथी, भाखुं षट्‌पद आंही. ४२

षट्पदनामकथन

‘आत्मा छे’, ‘ते नित्य छे’, ‘छे कर्त्ता निजकर्म’;
‘छे भोक्ता’ वळी ‘मोक्ष छे’,‘मोक्ष उपाय सुधर्म’. ४३

षट्स्थानक संक्षेपमां, षट्दर्शन पण तेह;
समजावा परमार्थने, कह्यां ज्ञानीए एह. ४४

(१) शंका–शिष्य उवाच

नथी दृष्टिमां आवतो, नथी जणातुं रूप;
बीजो पण अनुभव नहीं, तेथी न जीवस्वरूप. ४५

अथवा देह ज आतमा, अथवा इन्द्रिय प्राण;
मिथ्या जुदो मानवो, नहीं जुदुं एंधाण. ४६

वळी जो आत्मा होय तो, जणाय ते नहि केम ?
जणाय जो ते होय तो, घट पट आदि जेम. ४७

माटे छे नहि आतमा, मिथ्या मोक्ष उपाय;
ए अंतर शंकातणो, समजावो सदुपाय. ४८

(१) समाधान–सद्गुरु उवाच

भास्यो देहाध्यासथी, आत्मा देह समान;
पण ते बन्ने भिन्न छे, प्रगट लक्षणे भान. ४९

भास्यो देहाध्यासथी, आत्मा देह समान;
पण ते बन्ने भिन्न छे, जेम असि ने म्यान. ५०

जे द्रष्टा छे दृष्टिनो, जे जाणे छे रूप;
अबाध्य अनुभव जे रहे, ते छे जीवस्वरूप. ५१

छे इन्द्रिय प्रत्येकने, निज निज विषयनुं ज्ञान;
पांच इन्द्रींना विषयनुं, पण आत्माने भान. ५२

देह न जाणे तेहने, जाणे न इन्द्री, प्राण;
आत्मानी सत्ता वडे, तेह प्रवर्ते जाण. ५३

सर्व अवस्थाने विषे, न्यारो सदा जणाय;
प्रगटरूप चैतन्यमय, ए एंधाण सदाय. ५४

घट, पट आदि जाण तुं, तेथी तेने मान;
जाणनार ते मान नहि, कहीए केवुं ज्ञान? ५५

परम बुद्धि कृश देहमां, स्थूळ देह मति अल्प;
देह होय जो आतमा, घटे न आम विकल्प. ५६

जड चेतननो भिन्न छे, केवळ प्रगट स्वभाव;
एकपणुं पामे नहीं, त्रणे काळ द्वयभाव. ५७

आत्मानी शंका करे, आत्मा पोते आप;
शंकानो करनार ते, अचरज एह अमाप. ५८

(२) शंका–शिष्य उवाच

आत्माना अस्तित्वना, आपे कह्या प्रकार;
संभव तेनो थाय छे, अंतर कर्ये विचार. ५९

बीजी शंका थाय त्यां, आत्मा नहि अविनाश;
देहयोगथी ऊपजे, देहवियोगे नाश. ६०

अथवा वस्तु क्षणिक छे, क्षणे क्षणे पलटाय;
ए अनुभवथी पण नहीं, आत्मा नित्य जणाय. ६१

(२) समाधान—सद्‌गुरु उवाच

देह मात्र संयोग छे, वळी जड रूपी दृश्य;
चेतननां उत्पत्ति लय, कोना अनुभव वश्य? ६२

जेना अनुभव वश्य ए, उत्पन्न लयनुं ज्ञान;
ते तेथी जुदा विना, थाय न केमे भान. ६३

जे संयोगो देखिये, ते ते अनुभव दृश्य;
ऊपजे नहि संयोगथी, आत्मा नित्य प्रत्यक्ष. ६४

जडथी चेतन ऊपजे, चेतनथी जड थाय;
एवो अनुभव कोईने, क्यारे कदी न थाय. ६५

कोई संयोगोथी नहीं, जेनी उत्पत्ति थाय;
नाश न तेनो कोईमां, तेथी नित्य सदाय. ६६

क्रोधादि तरतम्यता, सर्पादिकनी मांय;
पूर्वजन्मसंस्कार ते, जीव नित्यता त्यांय. ६७

आत्मा द्रव्ये नित्य छे, पर्याये पलटाय;
बाळादि वय त्रण्यनुं, ज्ञान एकने थाय. ६८

अथवा ज्ञान क्षणिकनुं, जे जाणी वदनार;
वदनारो ते क्षणिक नहि, कर अनुभव निर्धार. ६९

क्यारे कोई वस्तुनो, केवळ होय न नाश;
चेतन पामे नाश तो, केमां भळे तपास. ७०

(३) शंका—शिष्य उवाच

कर्त्ता जीव न कर्मनो, कर्म ज कर्त्ता कर्म;
अथवा सहज स्वभाव कां, कर्म जीवनो धर्म. ७१

आत्मा सदा असंग ने, करे प्रकृति बंध;
अथवा ईश्वर प्रेरणा, तेथी जीव अबंध. ७२

माटे मोक्ष उपायनो, कोई न हेतु जणाय;
कर्मतणुं कर्त्तापणुं, कां नहि, कां नहि जाय. ७३

(३) समाधान—सद्गुरु उवाच

होय न चेतन प्रेरणा, कोण ग्रहे तो कर्म?
जडस्वभाव नहि प्रेरणा, जुओ विचारी धर्म. ७४

जो चेतन करतुं नथी, नथी थतां तो कर्म;
तेथी सहज स्वभाव नहि, तेमज नहि जीवधर्म. ७५

केवळ होत असंग जो, भासत तने न केम?
असंग छे परमार्थथी, पण निजभाने तेम. ७६

कर्त्ता ईश्वर कोई नहि, ईश्वर शुद्ध स्वभाव;
अथवा प्रेरक ते गण्ये, ईश्वर दोषप्रभाव. ७७

चेतन जो निजभानमां, कर्त्ता आप स्वभाव;
वर्ते नहि निजभानमां, कर्त्ता कर्म-प्रभाव. ७८

(४) शंका—शिष्य उवाच

जीव कर्म कर्त्ता कहो, पण भोक्ता नहि सोय;
शुं समजे जड कर्म के, फळ परिणामी होय? ७९

फळदाता ईश्वर गण्ये, भोक्तापणुं सधाय;
एम कह्ये ईश्वरतणुं, ईश्वरपणुं ज जाय. ८०

ईश्वर सिद्ध थया विना, जगत नियम नहि होय;
पछी शुभाशुभ कर्मनां, भोग्यस्थान नहि कोय. ८१

(४) समाधान–सद्‌गुरु उवाच

भावकर्म निजकल्पना, माटे चेतनरूप;
जीववीर्यनी स्फुरणा, ग्रहण करे जडधूप. ८२

झेर सुधा समजे नहीं, जीव खाय फळ थाय;
एम शुभाशुभ कर्मनुं, भोक्तापणुं जणाय. ८३

एक रांक ने एक नृप, ए आदि जे भेद;
कारण विना न कार्य ते, ते ज शुभाशुभ वेद्य. ८४

फळदाता ईश्वरतणी, एमां नथी जरूर;
कर्म स्वभावे परिणमे, थाय भोगथी दूर. ८५

ते ते भोग्य विशेषनां, स्थानक द्रव्य स्वभाव;
गहन वात छे शिष्य आ, कहीं संक्षेपे साव. ८६

(५) शंका–शिष्य उवाच

कर्त्ता भोक्ता जीव हो, पण तेनो नहि मोक्ष;
वीत्यो काळ अनंत पण, वर्तमान छे दोष. ८७

शुभ करे फळ भोगवे, देवादि गतिमांय;
अशुभ करे नरकादि फळ, कर्म रहित न क्यांय. ८८

(५) समाधान–सद्‌गुरु उवाच

जेम शुभाशुभ कर्मपद, जाण्यां सफळ प्रमाण;
तेम निवृत्ति सफळता, माटे मोक्ष सुजाण. ८९

वीत्यो काळ अनंत ते, कर्म शुभाशुभ भाव;
तेह शुभाशुभ छेदतां, ऊपजे मोक्ष स्वभाव. ९०

देहादिक संयोगनो, आत्यंतिक वियोग;
सिद्ध मोक्ष शाश्वत पदे, निज अनंत सुखभोग. ९१

(६) शंका–शिष्य उवाच

होय कदापि मोक्षपद, नहि अविरोध उपाय;
कर्मो काळ अनंतनां, शाथी छेद्यां जाय? ९२

अथवा मत दर्शन घणां, कहे उपाय अनेक;
तेमां मत साचो कयो, बने न एह विवेक. ९३

कई जातिमां मोक्ष छे, कया वेषमां मोक्ष;
एनो निश्चय ना बने, घणा भेद ए दोष. ९४

तेथी एम जणाय छे, मळे न मोक्ष उपाय;
जीवादि जाण्या तणो, शो उपकार ज थाय? ९५

पांचे उत्तरथी थयुं, समाधान सर्वांग;
समजुं मोक्ष उपाय तो, उदय उदय सद्भाग्य. ९६

(६) समाधान–सद्गुरु उवाच

पांचे उत्तरनी थई, आत्मा विषे प्रतीत;
थाशे मोक्षोपायनी, सहज प्रतीत ए रीत. ९७

कर्मभाव अज्ञान छे, मोक्षभाव निजवास;
अंधकार अज्ञान सम, नाशे ज्ञानप्रकाश. ९८

जे जे कारण बंधनां, तेह बंधनो पंथ;
ते कारण छेदक दशा, मोक्षपंथ भवअंत. ९९

राग, द्वेष, अज्ञान ए, मुख्य कर्मनी ग्रंथ;
थाय निवृत्ति जेहथी, ते ज मोक्षनो पंथ. १००

आत्मा सत् चैतन्यमय, सर्वाभास रहित;
जेथी केवळ पामिये, मोक्षपंथ ते रीत. १०१

कर्म अनंत प्रकारनां, तेमां मुख्ये आठ;
तेमां मुख्ये मोहनीय, हणाय ते कहुं पाठ. १०२

कर्म मोहनीय भेद बे, दर्शन चारित्र नाम;
हणे बोध वीतरागता, अचूक उपाय आम. १०३

कर्मबंध क्रोधादिथी, हणे क्षमादिक तेह;
प्रत्यक्ष अनुभव सर्वने, एमां शो संदेह? १०४

छोडी मत दर्शनतणो, आग्रह तेम विकल्प;
कह्यो मार्ग आ साधशे, जन्म तेहना अल्प. १०५

षट्पदनां षट्प्रश्न तें, पूछ्यां करी विचार;
ते पदनी सर्वांगता, मोक्षमार्ग निर्धार. १०६

जाति, वेषनो भेद नहि, कह्यो मार्ग जो होय;
साधे ते मुक्ति लहे, एमां भेद न कोय. १०७

कषायनी उपशांतता, मात्र मोक्षअभिलाष;
भवे खेद अंतर दया, ते कहिये जिज्ञास. १०८

ते जिज्ञासु जीवने, थाय सद्गुरु बोध;
तो पामे समकितने, वर्ते अंतर शोध. १०९

मत दर्शन आग्रह तजी, वर्ते सद्गुरु लक्ष;
लहे शुद्ध समकित ते, जेमां भेद न पक्ष. ११०

वर्ते निजस्वभावनो, अनुभव लक्ष प्रतीत;
वृत्ति वहे निजभावमां, परमार्थे समकित. १११

वर्धमान समकित थई, टाळे मिथ्याभास;
उदय थाय चारित्रनो, वीतरागपद वास. ११२

केवळ निजस्वभावनुं, अखंड वर्ते ज्ञान;
कहीए केवळज्ञान ते, देह छतां निर्वाण. ११३

कोटि वर्षनुं स्वप्न पण, जाग्रत थतां शमाय;
तेम विभाव अनादिनो, ज्ञान थतां दूॅर थाय. ११४

छूटे देहाध्यास तो, नहि कर्त्ता तुं कर्म;
नहि भोक्ता तुं तेहनो, ए ज धर्मनो मर्म. ११५

ए ज धर्मथी मोक्ष छे, तुं छो मोक्ष स्वरूप;
अनंत दर्शन ज्ञान तुं, अव्याबाध स्वरूप. ११६

शुद्ध बुद्ध चैतन्यघन, स्वयंज्योति सुखधाम;
बीजुं कहीॅए केटलुं? कर विचार तो पाम. ११७

निश्चय सर्वे ज्ञानीॅनो, आवी अत्र समाय;
धरी मौनता एम कही, सहजसमाधि मांय. ११८

शिष्य—बोधबीजप्राप्तिकथन

सद्‌गुरुना उपदेशथी, आव्युं अपूर्व भान;
निजपद निजमांही लह्युं, दूर थयुं अज्ञान. ११९

भास्युं निजस्वरूप ते, शुद्ध चेतनारूप;
अजर, अमर, अविनाशीॅ ने, देहातीत स्वरूप. १२०

कर्त्ता भोक्ता कर्मनो, विभाव वर्ते ज्यांय;
वृत्ति वही निजभावमां, थयो अकर्त्ता त्यांय. १२१

अथवा निजपरिणाम जे, शुद्ध चेतनारूप;
कर्त्ता भोक्ता तेहनो, निर्विकल्पस्वरूप. १२२

मोक्ष कह्यो निजशुद्धता, ते पामे ते पंथ;
समजाव्यो संक्षेपमां, सकळ मार्ग निर्ग्रंथ. १२३

अहो ! अहो ! श्री सद्‌गुरु, करुणासिंधु अपार;
आ पामर पर प्रभु कर्यो,अहो ! अहो ! उपकार. १२४

शुं प्रभुचरण कने धरुं, आत्माथी सौ हीन;
ते तो प्रभुए आपियो, वर्तुं. चरणाधीन. १२५

आ देहादि आजथी, वर्तो प्रभु आधीन;
दास, दास, हुं दास छुं, तेह प्रभुनो दीन. १२६

षट् स्थानक समजावीने, भिन्न बताव्यो आप;
म्यान थकी तरवारवत्, ए उपकार अमाप. १२७

उपसंहार

दर्शन षटे समाय छे, आ षट् स्थानक मांहि;
विचारतां विस्तारथी, संशय रहे न कांई. १२८

आत्मभ्रांति सम रोग नहि, सद्‌गुरु वैद्य सुजाण;
गुरु आज्ञा सम पथ्य नहि, औषध विचार ध्यान. १२९

जो इच्छो परमार्थ तो, करो सत्य पुरुषार्थ;
भवस्थिति आदि नाम लई, छेदो नहि आत्मार्थ. १३०

निश्चयवाणी सांभळी, साधन तजवां नो'य;
निश्चय राखी लक्षमां, साधन करवां सोय. १३१

नय निश्चय एकांतथी, आमां नथी कहेल;
एकांते व्यवहार नहि, बन्ने साथ रहेल. १३२

गच्छमतनी जे कल्पना, ते नहि सद्‌व्यवहार;
भान नहीं निजरूपनुं, ते निश्चय नहि सार. १३३

आगळ ज्ञानी थई गया, वर्तमानमां होय;
थाशे काळ भविष्यमां, मार्गभेद नहि कोय. १३४

सर्व जीव छे सिद्ध सम, जे समजे ते थाय;
सद्‌गुरुआज्ञा जिनदशा, निमित्त कारण मांय. १३५

उपादाननुं नाम लई, ए जे तजे निमित्त;
पामे नहि सिद्धत्वने, रहे भ्रांतिमां स्थित. १३६

मुखथी ज्ञान कथे अने, अंतर छूट्यो न मोह;
ते पामर प्राणी करे, मात्र ज्ञानीनो द्रोह. १३७

दया, शांति, समता, क्षमा, सत्य, त्याग, वैराग्य;
होय मुमुक्षु घट विषे, एह सदाय सुजाग्य. १३८

मोहभाव क्षय होय ज्यां, अथवा होय प्रशांत;
ते कहीए ज्ञानीदशा, बाकी कहीए भ्रांत. १३९

सकळ जगत ते एठवत्, अथवा स्वप्न समान;
ते कहीए ज्ञानीदशा, बाकी वाचाज्ञान. १४०

स्थानक पांच विचारीने, छठ्ठे वर्त्ते जेह;
पामे स्थानक पांचमुं, एमां नहि संदेह. १४१

देह छतां जेनी दशा, वर्ते देहातीत;
ते ज्ञानीनां चरणमां, हो वंदन अगणित. १४२

नडियाद, सं० १९५२ —श्रीमद् राजचंद्र

(श्री आत्मसिद्धिशास्त्रना पठन पछी प.उ. प. पू. प्रभुश्रीजीना ‘उपदेशामृत’मांथी १५ मिनिट तथा पू. श्री ब्रह्मचारीजीना ‘बोधामृत’मांथी १५ मिनिट नियमित वांचन थाय छे.)

३४. भक्तिना छंदो

(१)

सहजात्मस्वरूप, टाळो भवकूप, अखिल अनुपम बहुनामी;
प्रभु निष्कामी, अंतरजामी, अविचळधामी हे स्वामी !
जय जय जिनेंद्र, अखिल अजेन्द्र, जय जिनचंद्र हे देवा;
हुं शरण तमारे, आव्यो द्वारे, चढजो व्हारे करुं सेवा;
सुखशांतिदाता, प्रभु प्रख्याता, दिलना दाता हे स्वामी. स० १

जय मंगळकारी, बहु उपकारी, आश तमारी दिल धरीए;
अभयपद चहुं छुं, करगरी कहुं छुं शरणे रहुं छुं स्तुति करीए;
आ लक्ष चोरासी खाण ज खासी, जउं छुं त्रासी हे स्वामी. स० २

नव जोशो कदापि, दोषो तथापि, कुमति कापी हे भ्राता;
मुक्तिपद दाता, प्रमुख मनाता, सन्मति दाता हे त्राता;
कृतिओ नव जोशो अतिशय दोषो सघळा खोशो हे स्वामी. स० ३

हुं पामर प्राणीनुं दुःख जाणी, अंतर आणीने तारो;
घर धंधाघाणी शिर लई ताणी, भटक्यो खाणी भव खारो;
मने रस्ते चडावो, कदी न डगावो, चित्त रखावो दुःखवामी. स० ४

उत्तम गति आपो, सद्‌धर्म स्थापो, किल्विष कापो हाथ ग्रही;
प्रकाशे प्रतापो, अखिल अमापो, भवदुःख कापो नाथ सही;
अवनीमां तमारो सौथी सारो जे शुभ धारो सुखधामी. स० ५

---

(२)

जय जगतत्राता, जगतभ्राता, जन्म हर जगदीश्वरा,
सुख सर्व कारण, धर्मधारण, धीर वीर महेश्वरा;
अति कर्म कंदन, चित्त चंदन, चरण कमळे चित्त धरुं,
सहजात्मरूपी सेव्य गुरुने वंदना विधिए करुं. १

आनंदसागर-चंद्र, नागर-वृंद श्री सुखकंद छो;
भव फंद हारक, छंद धारक, सर्व सद्‌गुण चंद्र छो;
सुखकार छो भवपार नहि कंई सार चित्तमां हुं धरुं. स०२

विकराळ आ कळिकाळ केरी, फाळथी भय पामतो;
गुरु चरण केरा शरण आव्यो, चित्तमां विश्रामतो;
गुरु पूरण प्रेमी कर धरे शिर एम आशा आचरुं. स०३

करी कोप चार कषाय बांधे, बंध आशा पाशनो;
अति मार मारे मार तेमां, कामनी अभिलाषनो;
छो निर्विकारी पास राखो, भक्ति हुं दिलमां धरुं. स०४

निज धाम चंचळ, वित्त चंचळ, चित्त चंचळ सर्वथी;
हित मित्र ने सुकलत्र चंचळ, जाय शुं मुखथी कथी;
स्थिर एक सद्‌गुरु देव छो, ए टेक अंतर आदरुं. स०५

भव मंडपे करी प्रीत मायासेज सुंदर पाथरी;
त्यां नित्य सूतो गाढ निद्रा, मोहनी अति आचरी,
जाग्रत करी गुरु राजचंद्रे, बोधदान कर्युं शरू. स०६

जयकार श्री गुरुदेवनो, जन जगतमांही गजावजो;
शुभ भक्तना जे धर्म, ते अति प्रेम साथ बजावजो;
गुरु धर्मधारक, कर्मवारक, ध्यानमां नित्ये धरुं. स०७

---

(३)

दयाळु दीनानाथ अज्ञानहारी, खरा चित्तथी ध्यानमांही विहारी;
घणा शिष्यना आप संतापहारी, गुरु राजचंद्र ग्रहो बांह्य मारी. १

कर्यो क्रोध तो क्रोधने मारवाने, धर्यो लोभ तो ध्यानने धारवाने;
महा मोहहारी निजानंद धारी, गुरु राजचंद्र ग्रहो बांह्य मारी. २

सदा निर्विकारी महा ब्रह्मचारी, न पहोंचे स्तुतिमां मति कांई मारी;
निराधार आ बाल माटे विचारी, गुरु राजचंद्र ग्रहो बांह्य मारी. ३

कदी नाथ सामुं न जोशो अमारा, तथापि अमे छीए सदाये तमारा;
हवे आप ओ बाप ! तारो विचारी, गुरु राजचंद्र ग्रहो बांह्य मारी. ४

क्षमा, धैर्य, औदार्यना जन्मसिंधु ! सदा लोकथी दीनना आप बंधु;
न शक्ति कशा काममांही अमारी, गुरु राजचंद्र ग्रहो बांह्य मारी. ५

गुणी ज्ञानवंता विवेकी विचारो, मने आशरो एक भावे तमारो;
दयाळु हवे प्रार्थना ल्यो अमारी, गुरु राजचंद्र ग्रहो बांह्य मारी. ६

---

(४)

(जडबुद्धि जीव ! संत विना शुद्ध मारग कोण बतावे ? ए देशी)

अहो ! राजचंद्र देव, रात दिवस मने रहेजो रटण तमारुं.

तुमे पतितपावन छो स्वामी,
हुं तो लोभी लंपट ने कामी,
ते तो जाणो छो अंतरजामी. अहो ! राज० १

नथी जप तप साधन कांई कर्युं,
नथी चरणकमळमां चित्त धर्युं,
मन रेंट तणी पेरे जाय फर्युं. अहो ! राज० २

मने मोहकटक लाग्युं पूंठे,
नित्य घेरीने मुजने लूंटे,
तमे छोडावो प्रभु तो छूटे. अहो ! राज० ३

अहो ! भानु समान प्रगट मणि,
मारा अनंत दोष काढो धणी,
क्षण दृष्टि करो मुज रंक भणी. अहो ! राज० ४

प्रभु करुणासागर आप अहो !
मुज पामरनी प्रभु बांह्य ग्रहो,
तुम सेवा मुने सदाय रहो. अहो ! राज० ५

ज्ञान दर्शन चरण क्षायक जाणी,
प्रभु सहज स्वभाव प्रगट मणि,
आपो मने देव हो रंक गणी. अहो ! राज० ६

दिव्य ज्ञान कळा प्रभु अकळ अहो !
मुज पामरथी न कळाय अहो !
तुम मुद्रा देखी प्रतीत भयो. अहो ! राज० ७

तुमे मोक्षमार्ग उज्ज्वळ कियो,
कुळ मताग्रहादि छेद दियो,
अहो ! भव्यने कारण देह लियो. अहो ! राज० ८

अहो ! विषयकषाय अभाव कियो,
प्रभु सहज स्वभावे धर्म लियो,
निरउपाधिपद सहज ग्रह्यो. अहो ! राज० ९

परम शीतळ अनंत दया तुममें,
प्रभु स्याद्‌वादशैली तुम घटमें,
तुज चरणकमळ सेवा द्यो मुजने. अहो ! राज० १०

तुम ज्ञानकळा अखंड प्रगटी,
हुं पामर गुण शुं कहुं कथी ?
जैन शैली पामुं हुं तुम थकी. अहो ! राज० ११

प्रभु चार गतिमां हुं भटक्यो,
हवे स्वामी तुज चरणे आव्यो,
मुनदास गुलाम छे तुम जायो. अहो ! राज० १२

३५. स्तवनो

(१) श्री ऋषभदेव स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(राग मारु—करम परीक्षा करण कुंवर चल्यो रे—ए देशी)

ऋषभ जिनेश्वर प्रीतम माहरो रे, ओर न चाहुं रे कंत,
रीझ्यो साहेब संग न परिहरे रे, भांगे सादि अनंत.
ऋषभ० १

प्रीत सगाई रे जगमां सहु करे रे, प्रीत सगाई न कोय;
प्रीत सगाई रे निरुपाधिक कही रे, सोपाधिक धन खोय.
ऋषभ० २

कोई कंत कारण [1]काष्ठभक्षण करे रे, मिलशुं कंतने धाय;
ए मेळो नवि [2]कहिये संभवे रे, मेळो ठाम न ठाय.
ऋषभ० ३

कोई पतिरंजन अति घणुं तप करे रे, पतिरंजन तन ताप,
ए पतिरंजन में नवि चित्त धर्युं रे, रंजन [3]धातुमिलाप.
ऋषभ० ४

कोई कहे लीला रे अलख अलख तणी रे, लख पूरे मन आश.
दोषरहितने रे लीला नवि घटे रे, लीला दोष विलास.
ऋषभ० ५

चित्तप्रसन्ने रे पूजनफल कह्युं रे, पूजा अखंडित एह,
कपटरहित थई आतम अरपणा रे, आनंदघनपद रेह.
ऋषभ० ६

---

१. काष्ठमां बळी मरे. २. पाठांतर—कदीये. ३. प्रकृति, स्वभाव.

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(नींदरडी वेरण हुई रही—ए देशी)

ऋषभ जिणंदशुं प्रीतडी, किम कीजे हो कहो चतुर विचार;
प्रभुजी जई अलगा वस्या, तिहां किणे नवि हो को वचन उच्चार.
ऋषभ० १

कागळ पण पहोंचे नहीं, नवि पहोंचे हो तिहां को परधान;
जे पहोंचे ते तुम समो, नवि भाखे हो कोनुं [1]व्यवधान.
ऋषभ० २

प्रीति करे ते रागीआ, जिनवरजी हो तुमे तो वीतराग;
प्रीतडी जेह अरागीथी, भेळववी हो ते लोकोत्तर मार्ग.
ऋषभ० ३

प्रीति अनादिनी विष भरी, ते रीते हो करवा मुज भाव;
करवी [2]निर्विष प्रीतडी, किण भांते हो कहो बने बनाव.
ऋषभ० ४

प्रीति अनंती पर थकी, जे तोडे हो ते जोडे एह;
परमपुरुषथी[3] रागता, एकत्वता हो दाखी गुण-गेह.
ऋषभ० ५

प्रभुजीने अवलंबतां, निज प्रभुता हो प्रगटे गुणराश;
देवचंद्रनी सेवना, आपे मुज हो अविचळ सुखवास.
ऋषभ० ६

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(महाविदेह क्षेत्र सोहामणो—ए देशी)

जगजीवन जगवालहो, मरुदेवीनो नंद लाल रे;
मुख दीठे सुख ऊपजे, दर्शन अति ही आनंद लाल रे. ज० १

---

१. हकीकत. २. रागरूप विष रहित. ३. परमात्माथी

आंखडी अंबुजपांखडी, अष्टमी शशीसम भाल लाल रे;
वदन ते शारद चंदलो, वाणी अतिही रसाळ लाल रे. ज० २

लक्षण अंगे विराजतां, [१]अडहिय सहस उदार लाल रे;
रेखा कर चरणादिके, अभ्यंतर नहीं पार लाल रे. ज० ३

इंद्र, चंद्र रवि गिरि तणा, गुण[२] लई घडियुं अंग लाल रे;
भाग्य किहां थकी आवियुं, अचरिज एह उत्तंग लाल रे. ज० ४

गुण सघळा अंगे कर्या, दूर कर्या सवि दोष लाल रे;
वाचक यशविजये थुण्यो, देजो सुखनो पोष लाल रे. ज० ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

बाळपणे आपण ससनेही, रमता नव नव वेषे;
आज तुमे पाम्या प्रभुताई, अमे तो संसार-निवेषे.
हो प्रभुजी ! ओलंभडे मत खीजो. १

जो तुम ध्यातां शिवसुख लहीए, तो तुमने केई ध्यावे;
पण भवस्थिति परिपाक थया विण, कोई न मुक्ति जावे.
हो प्रभुजी ! ओ० २

सिद्धनिवास लहे भविसिद्धि,[३] तेमां शो पाड तमारो ?
तो उपकार तमारो लहीए, [४]अभव्यसिद्धने तारो.
हो प्रभुजी ! ओ० ३

नाणरयण पामी एकांते, थई बेठा [५]मेवासी;
ते मांहेलो एक अंश जो आपो, ते वाते साबाशी.
हो प्रभुजी ! ओ० ४

---

१. एकहजार आठ (१००८) २. रूप, सौम्यता, प्रताप अने धैर्य. ३. भव्य जीवो.
४. अभव्योने. ५. लूंटारा.

अक्षय पद देतां भविजनने, संकीर्णता नवि थाय;
शिवपद देवा जो समरथ छो, तो जश लेतां शुं जाय ?
हो प्रभुजी ! ओ॰ ५

सेवागुणरंज्या भविजनने, जो तुम करो वडभागी;
तो तमे स्वामी केम कहावो, निर्मम ने नीरागी.
हो प्रभुजी ! ओ॰ ६

नाभिनंदन जगवंदन प्यारो, जगगुरु जगजयकारी;
रूप विबुधनो मोहन पभणे, वृषभलंछन बलिहारी.
हो प्रभुजी ! ओ॰ ७

---

(२) श्री अजितनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(राग आशावरी—मारुं मन मोह्युं रे श्री विमलाचले रे—ए देशी)

पंथडो निहाळुं रे बीजा जिनतणो रे, अजित अजित गुणधाम;
जे तें जीत्या रे तेणे हुं जितियो रे, पुरुष किश्युं मुज नाम ?
पंथडो॰ १

चरम नयण करी मारग जोवतां रे, भूल्यो सयल संसार;
जेणे नयणे करी मारग जोईए रे, नयण ते दिव्य विचार.
पंथडो॰ २

पुरुष परंपर अनुभव जोवतां रे, अंधो अंध पलाय;
वस्तु विचारे रे जो आगमे करी रे, चरण धरण नहि ठाय.
पंथडो॰ ३

तर्क विचारे रे वाद परंपरा रे, पार न पहोंचे कोय;
अभिमत वस्तु वस्तुगते कहे रे, ते विरला जग जोय.
पंथडो॰ ४

वस्तु विचारे रे दिव्य नयनतणो रे, विरह पड्यो निरधार;
तरतम जोगे रे तरतम वासना रे, वासित बोध आधार.
पंथडो० ५

काळलब्धि[1] लही पंथ निहाळशुं रे, ए आशा [2]अवलंब;
ए जन जीवे रे जिनजी जाणजो रे, आनंदघन मत अंब.
पंथडो० ६

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(देखो गति दैवनी रे—ए देशी)

ज्ञानादिक गुणसंपदा रे, तुज अनंत अपार;
ते सांभळतां ऊपनी रे, रुचि तेणे पार उतार.
अजित जिन तारजो रे, तारजो दीनदयाळ. अ० १

जे जे कारण जेहनुं रे, सामग्री संयोग;
मळतां कारज नीपजे रे, कर्ता तणे प्रयोग. अ० २

कार्यसिद्धि कर्ता वशु रे, लही कारण संयोग;
निजपदकारक प्रभु मिल्या रे, होय [3]निमित्तह भोग. अ० ३

अजकुलगत केशरी लहे रे, निजपद सिंह निहाळ;
तिम प्रभुभक्ते भवि लहे रे, आतमशक्ति संभाळ. अ० ४

कारणपद कर्तापणे रे, करी आरोप अभेद;
निज पद अर्थी प्रभु थकी रे, करे अनेक उमेद. अ० ५

एहवा परमातम प्रभु रे, परमानंद स्वरूप;
स्याद्वाद सत्तारसी रे, अमल अखंड अनुप. अ० ६

---

१. भवस्थिति परिपाक, २. पाठांतर—अविलंब, ३. निमित्तना

आरोपित सुख-भ्रम टळ्यो रे, भास्यो अव्याबाध;
समर्युं अभिलाषीपणुं रे, कर्ता साधन साध्य. अ० ७

ग्राहकता स्वामित्वता रे, व्यापक भोक्ता भाव;
कारणता कारज दशा रे, सकल ग्रह्युं निजभाव. अ० ८

श्रद्धा भासन रमणता रे, दानादिक परिणाम;
सकल थया सत्तारसी रे, जिनवर-दरिसण पाम. अ० ९

तिणे निर्यामक माहणो रे, वैद्य गोप आधार;
देवचंद्र सुख सागरु रे, भाव धरम दातार. अ० १०

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(नींदरडी वेरण हुइ रही—ए देशी)

अजित जिणंदशुं प्रीतडी, मुज न गमे हो बीजानो संग के;
मालती फूले मोहीओ, किम बेसे हो बावळ तरु भृंग के.
अजित० १

गंगाजलमां जे रम्या, किम [१]छिल्लर हो रति पामे [२]मराळ के;
सरोवर जलधर जल विना, नवि चाहे हो जग चातकबाळ के.
अजित० २

कोकिल कलकूजित करे, पामी मंजरी हो पंजरी सहकार के;
ओछां तरुवर नवि गमे, गिरुआशुं हो होये गुणनो प्यार के.
अजित० ३

कमलिनी दिनकर-कर ग्रहे, वळी कुमुदिनी हो धरे चंद्रशुं प्रीतके;
गौरी[३] गिरीश, [४]गिरिधर[५] विना, नवि चाहे हो कमला[६] निज
चित्तके. अजित० ४

---

१. छीछरुं पाणी, २. हंस, ३. पार्वती, ४. शंकर, ५. हरि-विष्णु, लक्ष्मी

तिम प्रभुशुं मुज मन रम्युं, बीजाशुं हो नवि आवे दाय के;
श्री नयविजय सुगुरुतणो, वाचकजस हो नित नित गुण गाय के.
अजित० ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(मोतीडानी–देशी)

अजित अजित जिन अंतरजामी,
अरज करुं छुं प्रभु शिर नामी;
साहिबा ससनेही सुगुणजी,
वातलडी कहुं केही. १

आपण बाळपणाना स्वदेशी,
तो हवे केम थाओ छो विदेशी?
पुण्य अधिक तुमे हुवा जिणंदा,
आदि अनादि अमे तो बंदा. साहिबा० २

ताहरे आजे मणाई छे शानी?
तुंही ज लीलावंत, तुं ज्ञानी;
तुज विण अन्यने को नथी ध्याता,
तो जो तुं छे लोकविख्याता. साहिबा० ३

एकने आदर एकने अनादर,
एम केम घटे तुजने करुणाकर;
दक्षिण वाम नयन बिहुं सरखी,
कुण ओछुं कोण अधिकुं परखी. साहिबा० ४

स्वामिता मुजथी न राखो स्वामी,
शी सेवकमां जुओ छो खामी?

जे न लहे सन्मान स्वामीनो,
तो तेने कहे सहुको [१]कमीनो. साहिबा० ५

रूपातीत जो मुजथी थाशो,
ध्याशुं रूप करी ज्यां जाशो;
जड परमाणु अरूपी कहाये,
गहत संयोगे शुं रूपी न थाये. साहिबा० ६

धन तो ओळगे[२] किमपि न देवे,
जो दिनमणि कनकाचल सेवे;
एवुं जाणी तुजने सेवुं,
ताहरे हाथ छे फळनुं देवुं. साहिबा० ७

तुज पदपंकज मुज मन वळग्युं,
जाये किहां छंडीने अळगुं ?
मधुकर [३]मयगल यद्यपि राचे,
पण [४]सुने मुखे लाल नवि माचे. साहिबा० ८

तारक बिरुद कहावो छो मोटा,
तो मुजथी किम थाशो खोटा;
रूप विबुधनो मोहन भाखे,
अनुभवरस आनंदशुं चाखे. साहिबा० ९

---

(२)

ओळग अजितजिणंदनी, माहरे मन मानी;
मालती-मधुकरनी परे, बनी प्रीत अछानी,
वारी हुं जितशत्रुसुततणा, मुखडाने मटके. वारी० १

---

१. हलको, दुर्भागी, २. नमस्कार करवाथी ३. हाथी ४. कूतरीना.

अवर कोई जाचुं नहीं, विण स्वामी सुरंगा;
चातक जेम जलधर विना, नवि सेवे गंगा. वारी० २

ए गुण प्रभु किम वीसरे, सुणी अन्य प्रशंसा;
छिल्लर किणविध रति धरे, मानसरना हंसा. वारी० ३

शिव एक चंद्रकळा थकी, लही ईश्वरताई;
अनंत कळाधर में धर्यो, मुज अधिक पुण्याई. वारी० ४

तुं धन, तुं मन, तन तुंही, ससनेहा स्वामी;
मोहन कहे कवि रूपनो, जिन अंतरजामी. वारी० ५

(३) श्री संभवनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(राग सामग्री–रातडी रमीने किहांथी आविया रे–ए देशी)

संभवदेव ते धुर सेवो सवे रे, लही प्रभुसेवन भेद;
सेवन कारण पहेली भूमिका रे, अभय अद्वेष अखेद. सं० १

भय चंचलता हो जे परिणामनी रे, द्वेष अरोचक भाव;
खेद प्रवृत्ति हो करतां थाकिये रे, दोष अबोध लखाव. सं० २

चरमावर्त[1] हो चरमकरण[2] तथा रे, भवपरिणति परिपाक;
दोष टळे वळी दृष्टि खूले भली रे, प्राप्ति प्रवचन-वाक. सं० ३

परिचय पातिक-घातिक[3] साधुशुं रे, अकुशळ अपचय चेत;
ग्रंथ अध्यातम श्रवण मनन करी रे, परिशीलन नयहेत. सं० ४

कारणजोगे हो कारज नीपजे रे, एमां कोई न वाद;
पण कारण विण कारज साधिये रे, ए निज मत उन्माद. सं० ५

---

१. छेल्लुं पुद्गल परावर्तन २. अनिवृत्तिकरण ३. पापसंहारक

मुग्ध सुगम करी सेवन आदरे रे, सेवन अगम अनुप;
देजो कदाचित् सेवक याचना रे, आनंदघन रस रूप. सं० ६

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(धनरा ढोला—ए देशी)

श्री संभव जिनराजजी रे, ताहरुं अकल स्वरूप, जिनवर पूजो,
स्वपर-प्रकाशक दिनमणि रे, समता रसनो भूप; जिन०
पूजो पूजो रे भविकजन पूजो, प्रभु पूज्या परमानंद. जिन० पू० १

अविसंवादी निमित्त छो रे, जगतजंतु सुखकाज; जिन०
हेतु सत्य बहुमानथी रे, जिन सेव्यां शिवराज. जिन० पू० २

उपादान आतम सही रे, पुष्टालंबन देव; जिन०
उपादान कारणपणे रे, प्रगट करे प्रभु सेव. जिन० पू० ३

कार्य गुण कारणपणे रे, कारण कार्य अनुप; जिन०
सकल सिद्धता ताहरी रे, माहरे साधनरूप. जिन० पू० ४

एक वार प्रभुवंदना रे, आगम रीते थाय; जिन०
कारण सत्ये कार्यनी रे, सिद्धि प्रतीत कराय. जिन० पू० ५

प्रभुपणे प्रभु ओळखी रे, अमल विमल गुण गेह; जिन०
साध्यदृष्टि साधकपणे रे, वंदे धन्य नर तेह. जिन० पू० ६

जन्म कृतारथ तेहनो रे, दिवस सफल पण तास; जिन०
जगत शरण जिनचरणने रे, वंदे धरिय उल्लास. जिन० पू० ७

निज सत्ता निज भावथी रे, गुण अनंतनुं ठाण; जिन०
देवचंद्र जिनराजजी रे, शुद्ध सिद्ध सुखखाण. जिन० पू० ८

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(मन मधुकर मोही रह्यो—ए देशी)

संभव जिनवर विनति, अवधारो गुणज्ञातारे;
खामी नहि मुज खिजमते, कदीय होशो फलदाता रे. सं० १

कर जोडी ऊभो रहुं, रातदिवस तुम ध्यानो रे;
जो मनमां आणो नहीं, तो शुं कहीए छानो रे. सं० २

खोट खजाने को नहीं, दीजीए वांछित दानो रे;
करुणानजर प्रभुजी तणी, वाधे सेवक वानो रे. सं० ३

काळलब्धि मुज [1]मति गणो, भावलब्धि तुम हाथे रे;
लडथडतुं पण गजबच्चुं, गाजे [2]गयवर साथे रे. सं० ४

देशो तो तुम ही भला, बीजा तो नवि याचुं रे;
वाचक यश कहे सांईशुं, फळशे ए मुज साचुं रे. सं० ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(आघा आम पधारो पूज्य—ए देशी)

समकित दाता समकित आपो, मन मागे थई मीठुं;
छती वस्तु देतां शुं शोचो, मीठुं जे सहुए दीठुं.
प्यारा प्राण थकी छो राज, संभव जिनजी मुजने. १

एम मत जाणो जे आपे लहीए, ते लाध्युं शुं लेवुं;
पण परमारथ प्रीछी आपे, तेहिज कहीए देवुं. प्या० २

अर्थी हुं, तुं अर्थसमर्पक, इम मत करजो हांसुं;
प्रगट हतुं तुजने पण पहेलां, ए हांसानुं पासुं. प्या० ३

परम पुरुष तुमे प्रथम भजीने, पाम्या इम प्रभुताई;
तेणे रूपे तुमने अमे भजीए, तेणे तुम हाथ वडाई. प्या० ४

१. ना २. मोटो हाथी.

तमे स्वामी हुं सेवाकामी, मुजरे स्वामी निवाजे;
नहि तो हठ मांडी मागंतां, किणविध सेवकलाजे. प्या० ५

ज्योते ज्योति मिले मन प्रीछे, कुण लहेशे कुण भजशे;
साची भक्तिते हंसतणी परे, खीर-नीर[1] नय करशे. प्या० ६

ओलग कीधी ते लेखे आवी, चरणभेट प्रभु दीधी;
रूप विबुधनो मोहन पभणे, रसना पावन कीधी. प्या० ७

---

(४) श्री अभिनंदन स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(आज निहजो रे दीसे नाहलो—ए देशी)

अभिनंदनजिन ! दरिशण तरसीए, दरिशण दुर्लभ देव;
मत मत भेदे रे जो जई पूछीए, सहु थापे अहमेव. अ० १

सामान्ये करी दरिशण दोहिलुं, निर्णय सकल विशेष;
मदमें घेर्यो रे अंधो किम करे, रविशशीरूप विलेख. अ० २

हेतु विवादे हो चित्त धरी जोईए, अति दुर्गम नयवाद;
आगमवादे हो गुरुगम को नहीं, ए सबलो विषवाद. अ० ३

घाती डुंगर आडा अति घणा, तुज दरिशण जगनाथ !
धीठाई करी मारग संचरुं, सेंगू[2] कोई न साथ. अ० ४

दरिशण दरिशण रटतो जो फरुं, तो रणरोझ समान;
जेहने पिपासा हो अमृतपाननी, किम भांजे विषपान. अ० ५

तरस[3] न आवे हो मरणजीवनतणो, सीझे जो दरिशणकाज;
दरिशण दुर्लभ सुलभ कृपा थकी, आनंदघन महाराज.अ० ६

---

१. क्षीर-नीरनो न्याय करशे—एने जुदुं पाडशे. २. मार्गदर्शक भोमियो. ३. त्रास

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(ब्रह्मचर्य पद पूजिये—ए देशी)

क्युं जाणुं क्युं बनी आवशे, अभिनंदनरस रीति हो मित्त;
पुद्गल अनुभव त्यागथी, करवी जसु परतीत हो मित्त. क्युं० १

परमातम परमेश्वरु, वस्तुगते ते अलिप्त हो मित्त;
द्रव्ये द्रव्य मिले नहीं, भावे ते अन्य अव्याप्त हो मित्त. क्युं० २

शुद्ध स्वरूप सनातनो, निर्मल जे निःसंग हो मित्त;
आत्मविभूति परिणम्यो, न करे ते परसंग हो मित्त. क्युं० ३

पण जाणुं आगमबळे, मिलवुं तुम प्रभु साथ हो मित्त;
प्रभु तो स्वसंपत्तिमयी, शुद्ध स्वरूपनो नाथ हो मित्त. क्युं० ४

परपरिणामिकता अछे, जे तुज पुद्गल जोग हो मित्त;
जड[१] चल[२] जगनी ऍंठनो, न घटे तुजने भोग हो मित्त. क्युं० ५

शुद्ध निमित्ती प्रभु ग्रहो, करी अशुद्ध पर हेय हो मित्त;
आत्मालंबी गुणलयी, सहु साधकनो ध्येय हो मित्त. क्युं० ६

जिम जिनवर आलंबने, वधे सधे एकतान हो मित्त;
तिम तिम आत्मालंबनी, ग्रहे स्वरूप निदान हो मित्त. क्युं० ७

स्वस्वरूप एकत्वता, साधे पूर्णानंद हो मित्त;
रमे भोगवे आतमा, रत्नत्रयी गुणवृंद हो मित्त. क्युं० ८

अभिनंदन अवलंबने, परमानंद विलास हो मित्त;
देवचंद्र प्रभु-सेवना, करी अनुभव अभ्यास हो मित्त. क्युं० ९

---

१. स्थावर २. त्रस

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(सुणजो हो प्रभु—ए देशी)

दीठी हो प्रभु, दीठी जगगुरु तुज,
मूरति हो प्रभु, मूरति मोहन वेलडीजी;
मीठी हो प्रभु, मीठी ताहरी वाण,
लागे हो प्रभु, लागे जेसी सेलडीजी. १

जाणुं हो प्रभु, जाणुं जन्म [1]कयथ्थ,
जो हुं हो प्रभु, जो हुं तुम साथे मिल्योजी;
सुरमणि हो प्रभु, सुरमणि पाम्यो हथ्थ,
आंगणे हो प्रभु, आंगणे मुज सुरतरु फल्योजी. २

जाग्या हो प्रभु, जाग्या पुण्य अंकुर,
माग्या हो प्रभु, [2]मुहमाग्या पासा ढळ्याजी;
वूठ्या हो प्रभु, वूठ्या अमीरस मेह,
नाठा हो प्रभु, नाठा अशुभ शुभ दिन वळ्याजी. ३

भूख्यां हो प्रभु, भुख्यां मल्यां घृतपुर,
तरस्यां हो प्रभु, तरस्यां दिव्य उदकमिल्याजी;
थाक्यां हो प्रभु, थाक्यां मिल्यां [3]सुखपाल,
चाहतां हो प्रभु, चाहतां सज्जन हेजे हल्याजी. ४

दीवो हो प्रभु, दीवो निशा वन गेह,
साखी हो प्रभु, [4]साखी [5]थले जलनौका मळीजी;[6]
कलियुगे हो प्रभु, कलियुगे दुल्लहो मुज,
दरिशण हो प्रभु, दरिशण लह्युं आशा फळीजी५

१. कृतार्थ, २. मुख, मोंमाग्या, ३. पालखी, ४. आम्रवृक्ष, ५. मरु-भूमिमां, ६.पाठांतर—साथी हो प्रभु, साथी थले जल नौका मिलीजी.

वाचकहो प्रभु, वाचकयश तुम दास,
वीनवे हो प्रभु, वीनवे अभिनंदन सुणोजी;
कईयें[1] हो प्रभु, कईयें म देशो छेह,
देजो हो प्रभु, देजो सुख दरिशण तणोजी. ६

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(आछेलालनी देशी)

अकल कळा अविरुद्ध, ध्यान धरे प्रतिबुद्ध,
आछेलाल अभिनंदन जिनचंदनाजी;
रोमांचित थई देह, प्रगट्यो पूरण नेह,
आ० चंद्र ज्युं वन अरविंदनाजी. १

एक [2]खीण मन रंग, परमपुरुषने संग,
आ० प्राप्ति होवे सो पामीएजी;
सुगुण-सलूणी गोठ, जिम साकर भरी पोठ,
आ० विण दामे विवसाईएजी. २

स्वामी गुणमणि तुज, निवसो मनडे मुज,
आ० पण कंईये खटके नहींजी;
जिम रज नयणे विलग्ग, नीर झरे निरवग्ग,
आ० पण प्रतिबिंब रहे संसहीजी. ३

में जाच्या कंई लक्ष, तारक भोले प्रत्यक्ष,
आ० पण को साच नाव्यो वगेजी;
मुज बहुमैत्री देख, प्रभु कां मूको उवेख,
आ० आतुर[3] जन बहु ओलगेजी. ४

---

१. पाठांतर-कहीए, कदीये, २. क्षण, ३. दुःखी

जग जोतां जगनाथ, जिमतिम आव्या छो हाथ,
आ० पण हवे रखे कुमया[१] करोजी;
बीजा स्वारथी देव, तुं परमारथ हेव,
आ० पाम्यो हवे हुं पटंतरोजी. ५

तें तार्या कंई क्रोड, तो मुजथी शी होड,
आ० में एवडो शो [२]अलेहणोजी ?
मुज अरदास अनंत भवनी छे भगवंत,
आ० जाणने शुं कहेवुं घणुंजी. ६

सेवा-फळ द्यो आज, भोळवो कां महाराज,
आ० भूख न भांगे भामणेजी;
रूपविबुध सुपसाय, मोहन ए जिनराय,
आ० भूख्यो उमाहे घणोजी. ७

---

(५) श्री सुमतिनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

सुमतिचरणकज आतम अरपणा,
दरपण जिम अविकार, सुज्ञानी;
मतितरपण बहु सम्मत जाणीए,
परिसरपण सुविचार, सुज्ञानी. सुमति० १

त्रिविध सकल तनुधरगत आतमा,
बहिरातम [३]धुरि भेद, सुज्ञानी;
बीजो अंतर आतम तीसरो,
परमातम अविच्छेद, सुज्ञानी. सुमति० २

---

१. अवकृपा. २. मारुं एटलुं बधुं अलेणुं शुं केकरोडोने तार्या ने मने तारता नथी ?
३. प्रथम.

आतमबुध्धे हो कायादिके ग्रह्यो,
बहिरातम अघरूप, सुज्ञानी;
कायादिकनो हो साखीधर रह्यो,
अंतर आतमरूप, सुज्ञानी. सुमति० ३

ज्ञानानंदे हो पूरण पावनो,
वर्जित सकळ उपाधि, सुज्ञानी;
अतींद्रिय गुणगणमणि - आगरु,
एम परमातम साध, सुज्ञानी. सुमति० ४

बहिरातम तजी अंतर आतमा–
रूप थई थिर भाव, सुज्ञानी;
परमातमनुं हो आतम भाववुं,
आतम अर्पण-दाव, सुज्ञानी. सुमति० ५

आतम-अर्पण वस्तु विचारतां,
भरम टळे मतिदोष, सुज्ञानी;
परम पदारथ संपत्ति संपजे,
आनंदघन रस पोष, सुज्ञानी. सुमति० ६

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(देशी कडखानी)

अहो श्री सुमति जिन, शुध्धता ताहरी,
स्वगुण पर्याय परिणामरामी;
नित्यता एकता अस्तिता इतरयुत,
भोग्य भोगी थको प्रभु अकामी.अहो० १

ऊपजे व्यय लहे, तहवि तेहवो रहे,
गुण प्रमुख बहुलता तहवि पिंडी;

आत्मभावे रहे अपरता नवि ग्रहे,
लोकप्रदेशमित पण अखंडी. अहो० २

कार्य कारणपणे परिणमे तहवि ध्रुव,
कार्यभेदे करे पण अभेदी;
कर्तृता परिणमे नव्यता नवि रमे,
सकल वेत्ता थको पण अवेदी. अहो० ३

शुद्धता बुद्धता देव परमात्मता,
सहज निजभावभोगी अयोगी;
स्वपर उपयोगी तादात्म्य सत्तारसी,
शक्ति प्रयुंजतो न प्रयोगी. अहो० ४

वस्तु निज परिणते सर्व परिणामकी,
एटले कोई प्रभुता न पामे;
करे जाणे रमे अनुभवे ते प्रभु,
तत्त्व स्वामित्व शुचि तत्त्व धामे. अहो० ५

जीव नवि पुग्गली, नैव पुग्गल कदा,
पुग्गलाधार नहि तासरंगी;
परतणो ईश नहि अपर ऐश्वर्यता,
वस्तुधर्मे कदा न परसंगी. अहो० ६

संग्रहे नहीं, आपे नहीं परभणी,
नवि करे आदरे न पर राखे;
शुद्ध स्याद्वाद निज भाव भोगी जिके,
तेह परभावने केम चाखे! अहो० ७

ताहरी शुद्धता भास आश्चर्यथी,
ऊपजे रुचि तेणे तत्त्व ईहे;

तत्त्वरंगी थयो दोषथी ऊभग्यो,
दोष त्याग्ये ढले तत्त्व लीहे. अहो० ८

शुद्ध मार्गे वध्यो, साध्य साधन सध्यो,
स्वामी प्रतिछंदे सत्ता आराधे;
आत्मनिष्पत्ति तिम साधना नवि टके,
वस्तु उत्सर्ग आतम समाधे. अहो० ९

माहरी शुद्ध सत्तातणी पूर्णता,
तेहनो हेतु प्रभु तुंहि साचो;
देवचंद्रे स्तव्यो मुनिगणे अनुभव्यो,
तत्त्व भक्ते भविक सकळ राचो. अहो० १०

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(झांझरिया मुनिवर—ए देशी)

सुमतिनाथ गुणशुं मिलीजी, वाधे मुज मन प्रीति,
तेलबिंदु जिम विस्तरेजी, जलमांहे भली रीति,
सोभागी जिनशुं लाग्यो अविहड रंग.१

सज्जनशुं जे प्रीतडीजी, छानी ते न रखाय;
परिमल कस्तूरी तणोजी, महीमांहे महकाय. सो० २

आंगळीए नवि मेरु ढंकाये, छाबडिए रवि तेज;
अंजलिमां जिम गंग न माये, मुज मन तिम प्रभु हेज. सो० ३

हुओ छीपे नहि [१]अधर [२]अरुण जिम, खातां पान सुरंग;
पीवत भर भर प्रभुगुण प्याला, तिम मुज प्रेम अभंग. सो० ४

ढांकी [३]इक्षु [४]पराळशुंजी, न रहे लही विस्तार;
वाचक यश कहे प्रभुतणोजी, तिम मुज प्रेम प्रकार. सो० ५

---

१. नीचलो होठ. २. लाल. ३. शेरडी. ४. घासथी.

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(वारी हुं उदयपुर तणे—ए देशी)

प्रभुजीशुं बांधी प्रीतडी, ए तो जीवन जगदाधार सनेही;
साचो ते साहिब सांभरे, खीण मांहे कोटिक वार सनेही;
वारी हुं सुमति जिणंदने. १

प्रभु थोडाबोलो ने निपुण घणो, ए तो काज अनंत करनार सनेही;
ओलग जेहनी जेवडी, फळ तेहवो तस देनार. स०वा०२

प्रभु अति धीरो लाजे भर्यो, जिम सिंच्यो सुकृतमाळ सनेही;
एकण करुणानी लहेरमां, सुनिवाजे करे निहाल. स०वा०३

प्रभु भवस्थिति पाके भक्तने, कोई कहे कीनरे पसाय सनेही;
ऋतु विना कहो केम तरुवरे, फळ पाकीने सुंदर थाय ? स०वा०४

प्रभु अति भूख्यो पण शुं करे, कांई बिहुं हाथे न जमाय, सनेही;
दासतणी उतावळे, प्रभु किणविध रीझ्यो जाय ? स०वा०५

प्रभु-लखित होय तो लाभीए, मन मान्या तो महाराज सनेही;
फळ तो सेवाथी संपजे, विण खणेय न भांजे खाज. स०वा०६

प्रभु विसार्या नवि वीसरो, सामो अधिक होवे छे नेह सनेही;
मोहन कहे कवि रूपनो, मुज वहालो छे जिनवर एह. स०वा०७

---

(६) श्री पद्मप्रभ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(चांदलिया संदेशो कहेजे मारा कंथने रे—ए देशी)

पद्मप्रभ जिन, तुज-मुज आंतरु रे, किम भांजे भगवंत ?
कर्म विपाके हो कारण जोईने रे, कोई कहे मतिमंत. प०१

पयइ[1] ठिइ अणुभाग प्रदेशथी रे, मूल उत्तर बहु भेद;
घाती अघाती हो बंधोदय उदीरणा रे, सत्ता कर्म विच्छेद. प० २

कनकोपलवत् पयडिपुरुष[2] तणी रे, जोडी अनादि स्वभाव;
अन्य संजोगी जिहां लगे आतमा रे, संसारी कहेवाय. प० ३

कारणजोगे हो बंधे बंधने रे, कारण मुक्ति मुकाय;
आस्रव संवर नाम अनुक्रमे रे, हेय उपादेय सुणाय. प० ४

युंजनकरणे हो अंतर तुज पड्यो रे, गुणकरणे करी भंग;
ग्रंथ उक्ते करी पंडितजन कह्यो रे, अंतर भंग सुअंग. प० ५

तुज मुज अंतर अंतर भांजशे रे, वाजशे मंगल तूर;
जीवसरोवर अतिशय वाधशे रे, आनंदघन रसपूर. प० ६

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(हुं तुज आगळ शुं कहुं, केशरिया लाल—ए देशी)

श्री पद्मप्रभजिन गुणनिधि रे लाल जगतारकजगदीश रे वाल्हेसर;
जिन-उपगार थकी लहे रे लाल, भविजन सिद्धि [3]जगीश रे वा० १

तुज दरिशण मुज वालहुं रे लाल, दरिशण शुद्ध पवित्त रे वा०
दरिशण शब्दनये करे रे लाल, संग्रह एवंभूत रे वा० तु० २

बीजे वृक्ष अनंतता रे लाल, पसरे भूजल योग रे वा०
तिम मुज आतमसंपदा रे लाल, प्रगटे प्रभु संयोग रे वा० तु० ३

जगतजंतु कारज रुचि रे लाल, साधे उदये भाण रे वा०
चिदानंद सुविलासता रे लाल, वाधे जिनवर [4]झाण रे वा० तु० ४

लब्धि सिद्धि मंत्राक्षरे रे लाल, ऊपजे साधन संग रे वा०
सहज अध्यातम तत्त्वता रे लाल, प्रगटे तत्त्वीरंग रे वा० तु० ५

१.प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, २.कर्म प्रकृति अने जीव, ३.संपदा, ४.ध्यान

लोह धातु कंचन हुवे रे लाल, पारस फरसन पामी रे वा॰
प्रगटे अध्यातमदशा रे लाल, व्यक्त गुणी गुणग्राम रे वा॰तु॰६
आत्मसिध्धिकारज भणी रे लाल, सहज नियामक हेतु रे वा॰
नामादिक जिनराजनां रे लाल, भवसागरमांहे सेतु रे वा॰तु॰७
स्तंभन इंद्रिययोगनो रे लाल, रक्त वरण गुण राय रे वा॰
देवचंद्र वृंदे स्तव्यो रे लाल, आप अवर्ण अकाय रे वा॰तु॰८

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(सहज सलुणा हो साधुजी—ए देशी)

पद्मप्रभ जिन जई अलगा वस्या, जिहांथी नावे लेखोजी,
कागळ ने मसि जिहां नवि संपजे, न चले वाट विशेषोजी;
सुगुण सनेहा रे कदीय न वीसरे. १

इहांथी तिहां जई कोई आवे नहीं, जेह कहे संदेशोजी;
जेहनुं मिलवुं रे दोहिलुं तेहशुं, नेह ते आप किलेशोजी.सु॰२
वीतरागशुं रे राग ते एक पखो, कीजे कवण प्रकारोजी;
घोडो दोडे रे साहेब वाजमां[१], मन नाणे[२] असवारोजी.सु॰३
साची भक्ति रे भावन रस कह्यो, रस होय तिहां दोय रीझेजी;
होडाहोडे रे बिहु रसरीझथी, मनना मनोरथ सीझेजी.सु॰४
पण गुणवंता रे गोठे गाजिये, मोटा ते विश्रामजी;
वाचक यश कहे एह ज आशरे, सुख लहुं ठामोठामजी.सु॰५

---

१. लगाम अनुसार; पाठांतर-काजमां. २. न लावे

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

परम रस भीनो महारो, निपुण नगीनो महारो, साहिबो;
प्रभु मोरा पद्मप्रभु प्राणाधार हो.
ज्योतिरमा आलिंगीने, प्रभु मोरा अछक छक्यो दिनरात हो,
ओलग पण नवि सांभळे, प्रभु मोरा, तो शी दरिशण वात हो.प० नि० १

निरभय पद पाम्या पछे, प्र० जाणीए नवि होवे तेह हो;
ते नेह जाणे आगळे, प्र० अलगा ते निःसनेह हो.प० नि० २

पद लेतां तो लह्या विभु, प्र० पण निज निज द्रव्य कहाय हो;
अमे सुद्रव्य सुगुण घणुं, प्र० सहि तो तिणे शरमाय हो.प० नि० ३

तिहां रह्या करुणा नयनथी, प्र० जोतां शुं ओछुं थाय हो ?
जिहां तिहां जिनलावण्यता, प्र० देहलीदीपक न्याय हो.प० नि० ४

जो प्रभुता अमे पामता, प्र० कहेवुं न पडे तो एम हो;
जो देशो तो जाणुं अमे, प्र० दरिशण दरिद्रता केम हो ? प० नि० ५

हाथे तो नावी शक्यो, प्र० न करो कोईनो विश्वास हो;
पण भोळवीए जो भक्तिथी, प्र० कहेजो तो शाबाश हो.प० नि० ६

कमळलंछन कीधी मया, प्र० गुनाह करी बगसीस हो;
रूप विबुधनो मोहन भणी, प्र० पूरजो सकल जगीश हो.प० नि० ७

---

(७) श्री सुपार्श्वनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(राग सारंग तथा मल्हार, ललनानी देशी)

श्री सुपास जिन वंदीये, सुखसंपत्तिनो हेतु ललना;
शांत सुधारस जलनिधि, भवसागरमांहे सेतु ललना. श्री० १

सात महाभय टाळतो, सप्तम जिनवर देव; ल०
सावधान मनसा करी, धारो जिनपद सेव. ल०श्री०२

शिव शंकर जगदीश्वरु, चिदानंद भगवान; ल०
जिन अरिहा तीर्थंकरु, ज्योति स्वरूप असमान. ल०श्री०३

अलख निरंजन वच्छलु, सकळ जंतु विशराम; ल०
अभयदान दाता सदा, पूरण आतमराम. ल०श्री०४

वीतराग मद कल्पना, रति अरति भय शोग; ल०
निद्रा तंद्रा दुरंदशा, रहित अबाधित योग. ल०श्री०५

परम पुरुष परमातमा, परमेश्वर परधान; ल०
परम पदारथ परमेष्ठी, परमदेव परमान. ल०श्री०६

विधि विरंचि विश्वंभरु, हृषीकेश जगनाथ; ल०
अघहर अघमोचन धणी, मुक्तिपरमपद साथ. ल०श्री०७

एम अनेक अभिधा धरे, अनुभवगम्य विचार; ल०
जेह जाणे तेहने करे, आनंदघन अवतार. ल०श्री०८

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(हे सुंदर ! तप सरिखो जग को नहीं–ए देशी)

श्री सुपास आनंदमें, गुण अनंतनो कंद हो जिनजी,
ज्ञानानंदे पूरणो, पवित्र चारित्रानंद हो. जि०श्री०१

संरक्षण विण नाथ छो, द्रव्य विना धनवंत हो, जि०
कर्तापद किरिया विना, संत अजेय अनंत हो. जि०श्री०२

अगम अगोचर अमर तुं, अव्यय ऋद्धिसमूह हो, जि०
वर्ण गंध रस फरसविणु, निज भोक्ता गुणव्यूह हो. जि०श्री०३

अक्षय दान अचिंतना, लाभ अयत्ने भोग हो, जि०
वीर्य शक्ति अप्रयासता, शुद्ध स्वगुण उपभोग हो. जि०श्री०४

एकांतिक आत्यंतिको, सहज अकृत स्वाधीन हो, जि०
निरुपचरित निर्द्वंद्व सुख, अन्य अहेतुक [1]पीन हो. जि०श्री०५

एक प्रदेशे ताहरे, अव्याबाध समाय हो, जि०
तसु पर्याय अविभागता, सर्वाकाश न माय हो. जि०श्री०६

एम अनंत गुणनो धणी, गुणगणनो आनंद हो, जि०
भोग रमण आस्वादयुत, प्रभु तुं परमानंद हो. जि०श्री०७

अव्याबाध रुचि थई, साधे अव्याबाध हो, जि०
देवचंद्र पद ते लहे, परमानंद समाध हो. जि०श्री०८

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(लाछलदे मात मलार–ए देशी)

श्री सुपार्श्व जिनराज, तुं त्रिभुवनशिरताज;
आज हो छाजे रे ठकुराई, प्रभु तुज पद तणीजी. १
दिव्य ध्वनि सुर फूल, चामर छत्र अमूल;
आज हो राजे रे भामंडल, गाजे दुंदुभिजी. २
अतिशय सहजना[2] चार, कर्म खप्याथी अग्यार;
आज हो कीधा रे ओगणीशे, सुरगण भासुरेजी. ३
वाणी गुण पांत्रीश, प्रतिहारज जगदीश;
आज हो राजे रे दीवाजे, छाजे आठशुंजी. ४
सिंहासन अशोक, बेठा मोहे लोक;
आज हो स्वामी रे शिवगामी, वाचक यश थुण्योजी. ५

---

१. पृष्ट, २ .स्वाभाविक

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

वहाला मेह बपियडा, अहिकुल ने मृगकुलने,
तिम वळी नादे वाह्या हो राज;
मधुकरने नवमल्लिका, तिम मुजने घणी वहाली,
सातमा जिननी सेवा हो राज. १

अन्यउथ्थिक[1] सुर छे घणा, पण मुज मनडुं तेहथी,
नावे एकण रागे हो राज;
राच्यो हुं रूपातीतथी, कारण मनमान्यानुं,
शुं कांइ आपो हाथे हो राज. सा० २

मूळनी भक्ते रीझशे, नहि तो अवरनी रीते,
क्यारे पण नवि खीजे हो राज;
ओलंगडी मोंघी थशे, कंबल होवे भारी,
जिमजिम जलथी भींजे हो राज. सा० ३

मनथी निवाजस नहि करे, तो कर ग्रहीने लीजे,
आवशे ते लेखे हो राज;
मोटाने कहेवुं किश्युं, पगदोडी अनुचरनी,
अंतरजामी देखे हो राज. सा० ४

एहथी शुं अधिकोय छे, आवी मनडे वसीओ,
साचो सुगुण सनेही हो राज;
जे वश होशे आपने, तेहने माग्युं देतां,
अजर[2] रहे कहो केही हो राज. सा० ५

अति परचो[3] विरचे नहीं, नितनित नवलो नवलो,
प्रभुजी मुजथी भासे हो राज;

---

१. अन्यतीर्थी हरिहरादिक देवो, २. निर्धन, ३. परिचय

ए प्रभुता ए निपुणता, परमपुरुष जे जेहवी,
किहांथी कोई पासे हो राज. सा०६
भीनो परम महारसे, माहरो नाथ नगीनो,
तेहने ते कुण निंदे हो राज;
समकित दृढता कारणे, रूपविबुधनो मोहन,
स्वामी सुपासने वंदे हो राज. सा०७

---

(८) श्री चंद्रप्रभ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

देखण दे रे सखी, मुने देखण दे, चंद्रप्रभ मुखचंद, सखी०
उपशम रसनो कंद सखी० सेवे सुर नर इंद सखी०
गत कलिमल दुःख द्वंद्व. सखी मुने० १

सुहम निगोदे न देखियो स० बादर अतिहि विशेष; स०
पुढवी आउ न लेखियो स० तेउ वाउ न लेश. स० मु०२

वनस्पति अति घण दिहा स० दीठो नहींय दीदार; स०
बि ति चउरिंदी जल लीहा स० [1]गतसन्नि पण धार. स० मु०३

सुर तिरि निरय निवासमां स० मनुज अनारज साथ; स०
अपज्जता[2] प्रतिभासमां स० चतुर न चढियो हाथ. स० मु०४

एम अनेकथल जाणिये स० दरिशण विणु जिनदेव; स०
आगमथी मति आणिये स० कीजे निर्मल सेव; स० मु०५

निर्मल साधु भगति लही स० योग अवंचक होय; स०
किरिया अवंचक तिम सही स० फल अवंचकजोय. स० मु०६

प्रेरक अवसर जिनवरु स० मोहनीय क्षय जाय; स०
कामितपूरण सुरतरु स० आनंदघन प्रभु पाय. स० मु०७

---

१. गतसन्नि=असंज्ञी पंचेंद्रिय. २. अपर्याप्ता.

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(श्री श्रेयांस जिन अंतरजामी–ए देशी)

श्री चंद्रप्रभ जिनपद-सेवा, हेवाए जे हलियाजी;
आतमगुण अनुभवथी मलिया, ते भव-भयथी टलियाजी.श्री० १

द्रव्यसेव वंदन नमनादिक, अर्चन वळी गुणग्रामोजी;
भाव अभेद थवानी ईहा, परभावे निष्कामोजी.श्री० २

भावसेव अपवादे नैगम, प्रभुगुणने संकल्पेजी;
संग्रह सत्ता तुल्यारोपे, भेदाभेद विकल्पेजी.श्री० ३

व्यवहारे बहुमान ज्ञान निज, चरणे जिनगुण रमणाजी;
प्रभु गुण आलंबी परिणामे, ॠजुपद ध्यान समरणाजी.श्री० ४

शब्दे शुक्ल ध्यानारोहण, समभिरूढ गुण दशमेजी;
बीए शुक्ल अविकल्प एकत्वे, एवंभूत ते अममेजी.श्री० ५

उत्सर्गे समकित गुण प्रगट्यो, नैगम प्रभुता अंशेजी;
संग्रह आतम सत्तालंबी, मुनिपद भाव प्रशंसेजी.श्री० ६

ॠजुसूत्रे जे श्रेणी पदस्थे, आतम-शक्ति प्रकाशेजी;
यथाख्यात पद शब्द स्वरूपे, शुद्ध धर्म उल्लासेजी.श्री० ७

भाव सयोगी अयोगी शैलेशे, अंतिम दुग नय जाणोजी;
साधनताए निज गुणव्यक्ति, तेह सेवना वखाणोजी.श्री० ८

कारण भाव तेह अपवादे, कार्यरूप उत्सर्गेजी;
आत्मभाव ते भाव द्रव्य पद, बाह्य प्रवृत्ति निसर्गेजी.श्री० ९

कारण भाव परंपर सेवन, प्रगटे कारज भावोजी;
कारज सिद्धे कारणता व्यय, शुचि परिणामिकभावोजी. श्री० १०

परम गुणी सेवन तन्मयता, निश्चय ध्याने ध्यावेजी;
शुद्धातम अनुभव आस्वादी, देवचंद्र पद पावेजी. श्री० ११

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(धनरा ढोला—ए देशी)

चंद्रप्रभ जिन साहेबा रे, तुमे छो चतुर सुजाण, मनना मान्या;
सेवा जाणो दासनी रे, देशो फळ निर्वाण, मनना मान्या.
आवो आवो रे चतुर सुखभोगी, कीजे वात एकांत अभोगी,
गुण गोठे प्रगटे प्रेम, मनना मान्या. १

ओछुंअधिकुं पण कहे रे, आसंगायत[1] जेह; म०
आपे फल जे अणकहे रे, गिरुओ साहेब तेह. म० २

दीन कह्या विण दानथी रे, दातानी वाधे माम; म०
जल दीए चातक खीजवी रे, मेघ हुओ तिणे श्याम. म० ३

'पियु पियु' करी तुमने जपुं रे, हुं चातक तुमे मेह; म०
एक लहेरमां दुःख हरो रे, वाधे बमणो नेह. म० ४

मोडुं-वहेलुं आपवुं रे, तो शी ढील कराय? म०
वाचक यश कहे जगधणी रे, तुम तूठे सुख थाय. म० ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(नंद सलूणा नंदनो रे लो—ए देशी)

श्री शंकर चंद्रप्रभु रे लो, तुं ध्याता जगनो विभु रे लो;
तिणे हुं ओलगे आवीओ रे लो तुमे पण मुज मन भावीओ रे लो. १

दीधी चरणनी चाकरी रे लो, हुं सेवुं हरखे करी रे लो;[2]
साहिब सामुं निहाळजो रे लो, भवसमुद्रथी तारजो रे लो. २

अगणित गुण गणवा तणी रे लो, मुज मन होंश धरे घणी रे लो;
जिम नभने पाम्या पखी रे लो, दाखे बाळक करथी लखी रे लो. ३

---

१. रागी, प्रेमी, २. पाठांतर—तुमे पण मुजने मया करी रे लो.

जो जिन तुं छे पांशरो रे लो, करमतणो शो आशरो रे लो;
जो तुमे राखशो गोदमां रे लो, तो किम जाशुं निगोदमां रे लो. ४

जब ताहरी करुणा थई रे लो, कुमति कुगति दूरे गई रे लो;
अध्यातमरवि ऊगियो रे लो, पाप तिमिर किहां पूगियो रे लो. ५

तुज मूरति माया जिसी रे लो, उर्वशी थई उरे वसी रे लो;
रखे प्रभु टाळो एकघडी रे लो, नजर वादळनी छांयडी रे लो. ६

ताहरी भक्तिभली बनी रे लो, जिम औषधि संजीवनी रे लो;
तन मन आनंद ऊपनो रे लो, कहे मोहन कवि रूपनो रे लो. ७

---

(९) श्री सुविधिनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(राग केदारो—एम धन्नो धणीने परचावे—ए देशी)

सुविधि जिणेसर पाय नमीने, शुभ करणी एम कीजे रे;
अति घणो ऊलट अंग धरीने, प्रह ऊठी पूजीजे रे. सु० १

द्रव्य भाव शुचि भाव धरीने, हरखे देहरे जईए रे;
[१]दहतिग [२]पण अहिगम साचवतां, एकमना धुरि थईए रे. सु० २

कुसुम अक्षत वर वास सुगंधो, धूप दीप मन साखी रे;
अंगपूजा पण भेद सुणी एम, गुरुमुख आगम भाखी रे. सु० ३

एहनुं फल दोय भेद सुणीजे, अनंतर ने परंपर रे;
आणापालण चित्तप्रसन्नी, मुगति सुगति सुर मंदिर रे. सु० ४

फूल अक्षत वर धूप [३]पईवो, गंध नैवेद्य फल जल भरी रे;
अंगअग्र पूजा मळी अडविध, भावे भविक शुभगति वरी रे. सु० ५

---

१. दशत्रिक, २. पांच अभिगम, ३. दीवो

सत्तर भेद एकवीस प्रकारे, [१]अष्ठोत्तर शत भेदे रे;
भाव पूजा बहुविधि निरधारी, दोहग दुर्गति छेदे रे. सु० ६

तुरिय[२] भेद पडिवत्ति[३] पूजा, उपशम खीण सयोगी रे;
चउहा पूजा इम [४]उत्तरझयणे, भाखी केवल भोगी रे. सु० ७

एम पूजा बहु भेद सुणीने, सुखदायक शुभ करणी रे;
भविक जीव करशे ते लेशे, आनंदघनपद धरणी रे. सु० ८

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(थारा महेला उपर मेह, झबूके वीजली हो लाल–ए देशी)

दीठो सुविधि जिणंद, समाधिरसे भर्यो हो लाल, स०
भास्युं आत्मस्वरूप, अनादिनो वीसर्यो हो लाल; अ०
सकल विभाव उपाधि, थकी मन ओसर्यो हो लाल, थ०
सत्ता साधन मार्ग, भणी ए संचर्यो हो लाल. भ० १

तुम प्रभु जाणंग रीति, सरव जग देखता हो लाल, स०
निज सत्ताए शुद्ध, सहुने लेखता हो लाल; स०
पर परिणति अद्वेष,–पणे उवेखता हो लाल, प०
भोग्यपणे निज शक्ति, अनंत गवेषता हो लाल. अ० २

दानादिक निज भाव, हता जे परवशा हो लाल, ह०
ते निज सन्मुख भाव, ग्रही लही तुज दशा हो लाल; ग्र०
प्रभुनो अद्‌भुत योग, स्वरूपतणी रसा हो लाल, स्व०
वासे भासे तास, जास गुण तुज जिसा हो लाल. जा० ३

मोहादिकनी [५]घूमि, अनादिनी ऊतरे हो लाल, अ०
अमल अखंड अलिप्त, स्वभाव ज सांभरे हो लाल, स्व०

---

१. अष्टोत्तरी–१०८ प्रकारी. २. चोथो, ३. प्रतिपत्ति, अंगीकार, ४. उत्तराध्ययन सूत्रमां, ५. मूर्छा

तत्त्व रमण शुचि ध्यान, भणी जे आदरे हो लाल, भ०
ते समतारस धाम, स्वामी मुद्रा वरे हो लाल. स्वा० ४

प्रभु छो त्रिभुवननाथ, दास हुं ताहरो हो लाल, दा०
करुणानिधि अभिलाष, अछे मुज ए खरो हो लाल; अ०
आतम वस्तु स्वभाव, सदा मुज सांभरो हो लाल, स०
भासन वासन एह, चरण ध्याने धरो हो लाल. च० ५

प्रभुमुद्राने योग, प्रभु प्रभुता लखे हो लाल, प्र०
द्रव्य तणे साधर्म्य, स्वसंपत्ति ओळखे हो लाल; स्व०
ओळखतां बहुमान, सहित रुचि पण वधे हो लाल, स०
रुचि-अनुयायी वीर्य, चरणधारा सधे हो लाल. च० ६

क्षायोपशमिक गुण सर्व, थया तुज गुण रसी हो लाल, थ०
सत्ता साधन शक्ति, व्यक्तता उल्लसी हो लाल; व्य०
हवे संपूरण सिद्ध, तणी शी वार छे हो लाल, त०
देवचंद्र जिनराज, जगत-आधार छे हो लाल. ज० ७

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(सुण मेरी सजनी रजनी न जावे रे—ए देशी)

लघु पण हुं तुम मन नवि मावुं रे,
जगगुरु तुमने दिलमां लावुं रे;
कुणने ए दीजे साबाशी रे?
कहो श्री सुविधि जिणंद विमासी रे. लघु० १

मुज मन अणुमांहे भक्ति छे झाझी रे,
तेह [1]दरीनो तुं छे माजी[2] रे;

१.नानुं वहाण, २.टंडेल (कप्तान) ‘दरी’ अने ‘माजी’ आ बंगाली भाषाना शब्दो छे, संस्कृत भाषामां तो ‘दरी’नो अर्थ गुफा थाय छे.

योगी पण जे वात न जाणे रे,
तेह अचरिज कुणथी हुओ टाणे रे. लघु० २

अथवा थिरमांही अथिर न मावे रे,
मोटो गज दर्पणमां आवे रे;
जेहने तेजे[1] बुद्धि प्रकाशी रे,
तेहने दीजे ए साबाशी रे. लघु० ३

ऊर्ध्वमुळ तरुवर अध शाखा रे,
छंद पुराणे एहवी छे भाखा रे;
अचरिजवाळे अचरिज कीधुं रे,
भक्ते सेवक कारज सीधुं रे. लघु० ४

लाड करी जे बाळक बोले रे,
मातपिता मन अमियने तोले रे;
श्री नयविजय विबुधनो शिषो रे,
यश कहे इम जाणो जगदीशो रे. लघु० ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

अरज सुणो एक सुविधि जिणेसर,
परम कृपानिधि तुमे परमेसर;
साहिबा सुज्ञानी जोवो तो,
वात छे मान्यानी;
कहेवाओ पंचम चरणना धारी,
किम आदरी [2]अश्वनी असवारी ? सा० १

छो त्यागी शिववास वसो छो,
दृढरथसुत रथे किम बेसो छो ?

---

१. जेना प्रभावथी, २. शुक्लध्यानरूप अश्वनी

आंगी प्रमुख परिग्रहमां पडशो,
हरिहरादिकने किणविध नडशो ? सा० २

धुरथी सकल संसार निवार्यो,
किम फरी देवद्रव्यादिक धार्यो ?
तजी संजमने थाशो गृहवासी,
कुण आशातना तजशे चोराशी ? सा० ३

समकित मिथ्या मतमां निरंतर,
इम किम भांजशे प्रभुजी अंतर ?
लोक तो देखशे तेहवुं कहेशे,
इम जिनता[1] तुम किणविध रहेशे ? सा० ४

पण हवे शास्त्रगते मति पहोंची,
तेहथी में जोयु ऊंडुं आलोची;
इम कीधे तुम प्रभुताई न घटे,
सामुं इम अनुभव गुण प्रगटे. सा० ५

हय-गय यद्यपि तुं आरोपाए,
तो पण सिद्धपणुं न लोपाए;
जिम मुगटादिक भूषण कहेवाए,
पण कंचननी कंचनता न जाए. सा० ६

भक्तनी[2] करणी दोष न तुमने,
अघटित कहेवुं अयुक्त ते अमने;
लोपाए नहि तुं कोईथी स्वामी,
मोहन विजय कहे शिर नामी. सा० ७

---

१. जिनता एटले जिनपणुं, रागद्वेषरहितपणुं, २. ए बधी भक्तजनोनी करणी छे, एमां तमने कंई दोषप्राप्ति थती नथी.

(१०) श्री शीतलनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(मंगलिक माला गुणह विशाला—ए देशी)

शीतल जिनपति ललित त्रिभंगी विविधभंगी मन मोहे रे;
करुणा कोमलता तीक्षणता, उदासीनता सोहे रे. शी० १

सर्वजंतु हितकरणी करुणा, कर्मविदारण तीक्षण रे;
हानादान[१] रहित परिणामी, उदासीनता वीक्षण रे. शी० २

परदुःख छेदन इच्छा करुणा, तीक्षण परदुःख रीझे रे;
उदासीनता उभय विलक्षण, एक ठामे केम सीझे रे. शी० ३

अभयदान ते मलक्षय करुणा, तीक्षणता गुण भावे रे;
प्रेरणविण कृत उदासीनता, इम विरोध मति नावे रे. शी० ४

शक्ति व्यक्ति त्रिभुवन प्रभुता, निर्ग्रंथता संयोगे रे;
योगी भोगी वक्ता मौनी, अनुपयोगी उपयोगे रे. शी० ५

इत्यादिक बहुभंग त्रिभंगी, चमत्कार चित्त देती रे;
अचरिजकारी चित्रविचित्रा, आनंदघन पद लेती रे. शी० ६

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(आदर जीव क्षमा गुण आदर—ए देशी)

शीतल जिनपति प्रभुता प्रभुनी, मुजथी कहिय न जायजी;
अनंतता निर्मलता पूर्णता, ज्ञान विना न जणायजी. शी० १

चरमजलधि जल [२]मिणे अंजलि, गति जीपे अतिवायजी;
सर्व आकाश ओलंघे चरणे, पण प्रभुता न गणायजी. शी० २

---

१. हानादान=देवुं अने लेवुं, २. मापे

सर्व द्रव्य प्रदेश अनंता, तेहथी गुण पर्यायजी;
तास वर्गथी अनंत गुणुं प्रभु, केवलज्ञान कहायजी. शी० ३

केवल दर्शन एम अनंतुं, ग्रहे सामान्य स्वभावजी;
स्वपर अनंतथी चरण अनंतुं, स्वरमण संवर भावजी. शी० ४

द्रव्य क्षेत्र ने काळ भाव गुण, राजनीति ए चारजी;
त्रास विना जड चेतन प्रभुनी, कोई न लोपे कारजी. शी० ५

शुद्धाशय थिर प्रभु उपयोगे, जे समरे तुज नामजी;
अव्याबाध अनंतुं पामे, परम अमृत सुखधामजी. शी० ६

आणा[1] ईश्वरता निर्भयता, निर्वांछकता रूपजी;
भाव स्वाधीन ते अव्यय रीते, इम अनंत गुणभूपजी. शी० ७

अव्याबाध सुख निर्मळ ते तो, करणज्ञाने न जणायजी;
तेह ज एहनो जाणंग भोक्ता, जे तुम सम गुणरायजी. शी० ८

एम अनंत दानादिक निज गुण, वचनातीत [2]पंडूरजी;
वासन[3] भासन भावे दुर्लभ, प्राप्ति तो अति दूरजी. शी० ९

सकल प्रत्यक्षपणे त्रिभुवन-गुरु, जाणुं तुज गुणग्रामजी;
बीजुं कांइ न मागुं स्वामी, एहि ज छे मुज कामजी.शी० १०
एम अनंत प्रभुता सद्दहतां, अर्चे जे प्रभुरूपजी;
देवचंद्र प्रभुता ते पामे, परमानंद स्वरूपजी.शी० ११

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

श्री शीतलजिन भेटिये, करी भक्ते चोखुं चित्त हो;
तेहथी कहो छानुं किश्युं, जेहने सोंप्यां तन मन वित्त हो. श्री० १

दायक नामे छे घणा, पण तुं सायर[4] ते कूप हो;
ते बहु खजवा[5] तगतगे, तुं दिनकर[6] तेजस्वरूप हो. श्री० २

१.आज्ञा, २.मोटा, ३.श्रद्धा, ४.सागर, ५.आगिया, ६.सूर्य

मोटो जाणी आदर्यो, दारिद्र भांजो जगतात हो;
तुं करुणावंत शिरोमणि, हुं करुणापात्र विख्यात हो. श्री० ३

अंतरजामी सवि लहो, अम मननी जे छे वात हो;
मा आगळ मोसाळना, शा वरणववा अवदात[1] हो. श्री० ४

जाणो तो ताणो किश्युं ? सेवा फल दीजे देव हो;
वाचक यश कहे ढीलनी, ए न गमे मुज मन टेव हो. श्री० ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(घोडी तो आई यारा देशमां—ए देशी)

शीतल जिनवर सेवना, साहेबजी !
शीतल जिम शशीबिंब हो ससनेही;
मूरति मारे मन वसी, सा०
सापुरीसाशुं गोठडी सा० मोटो ते आलालुंब हो. स० १

खीण एक मुजने न वीसरे सा० तुम गुण परम अनंत हो; स०
देव अवरने शुं करुं, सा० भेट थई भगवंत हो. स० २

तुमे छो मुगट त्रिहुं लोकना सा० हुं तुम पगनी खेह हो; स०
तुमे छो सघन ऋतु मेहुलो, सा० हुं पश्चिम दिशि [2]त्रेह हो. स० ३

नीरागी प्रभु रीझवुं, सा० ते गुण नहि मुजमांही हो; स०
गुरु गुरुता साहमुं जुए, सा० गुरुता ते मूके नांही हो स० ४

मोटासेती बरोबरी, सा० सेवक किणविध थाय हो स०
आसंगो किम कीजीए, सा० तिहां रह्या आलुंभाय हो स० ५

जगगुरु करुणा कीजीए सा० न लख्यो आभार विचार हो स०
मुजने राज, निवाजशो, सा० तो कुण वारणहार हो ? स० ६

---

१. वृत्तांत, हकीकत, २. हिम

ओलग अनुभव भावथी, सा० जाणो जाण सुजाण हो; स०
मोहन कहे कवि रूपनो, सा० जिनजी जीवन प्राण हो स०७

---

(११) श्री श्रेयांसनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(राग गोडी—अहो मतवाले साजना—ए देशी)

श्री श्रेयांसजिन अंतरजामी, आतमरामी नामी रे;
अध्यातम मत पूरण पामी, सहज मुगति गति गामी रे. श्री० १

सयल संसारी इन्द्रियरामी, मुनिगुण आतमरामी रे;
मुख्यपणे जे आतमरामी, ते केवळ निष्कामी रे. श्री० २

निज स्वरूप जे किरिया साधे, तेह अध्यातम लहिये रे;
जे किरिया करी चउगति साधे, ते न अध्यातम कहिये रे. श्री० ३

नाम अध्यातम, ठवण अध्यातम, द्रव्य अध्यातम छंडो रे;
भाव अध्यातम निज गुण साधे, तो तेहशुं रढ मंडो रे. श्री० ४

शब्द अध्यातम अरथ सुणीने, निर्विकल्प आदरजो रे;
शब्द अध्यातम भजना जाणी, हाण ग्रहणमति धरजो रे. श्री० ५

अध्यातम जे वस्तु विचारी, बीजा जाण लबासी रे;
वस्तुगते जे वस्तु प्रकाशे, आनंदघन मतवासी रे. श्री० ६

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(प्राणी वाणी जिनतणी—ए देशी)

श्री श्रेयांस प्रभु तणो, अति अद्‌भुत सहजानंद रे;
गुण एकविध त्रिक परिणम्यो, एम गुण अनंतनो वृंद रे.
मुनिचंद जिणंद अमंद दिणंद परे, नित्य दीपतो सुखकंद रे.१

निज ज्ञाने करी ज्ञेयनो, ज्ञायक ज्ञाता पद ईश रे;
देखे निज दर्शन करी, निज दृश्य सामान्य जगीश रे. मु० २

निज रम्ये रमण करो, प्रभु चारित्रे रमता राम रे;
भोग्य अनंतने भोगवो, भोगे तेणे भोक्ता स्वाम रे. मु० ३

देय दान [१]नित दीजते, अति दाता प्रभु स्वयमेव रे;
पात्र तुम्हे निज शक्तिना, ग्राहक व्यापकमय देव रे. मु० ४

परिणामिक कारज तणो, कर्ता गुण करणे नाथ रे;
अक्रिय अक्षय स्थितिमयी, निःकलंक अनंती [२]आथ रे. मु० ५

परिणामिक सत्ता तणो, [३]आविर्भाव विलास निवास रे;
सहज अकृत्रिम अपराश्रयी, निर्विकल्प ने निःप्रयास रे. मु० ६

प्रभु प्रभुता संभारतां, गातां करतां गुणग्राम रे;
सेवक साधनता वरे, निज संवर परिणति पाम रे. मु० ७

प्रगट तत्त्वता ध्यावतां, निज तत्त्वनो ध्याता थाय रे;
तत्त्वरमण एकाग्रता, पूरण तत्त्वे एह समाय रे. मु० ८

प्रभु दीठे मुज सांभरे, परमातम पूर्णानंद रे;
देवचंद्र जिनराजना, नित्य वंदो पय अरविंद रे.मु० ९

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(कर्म न छूटे रे प्राणिया—ए देशी)

तुमे बहु मैत्री रे साहेबा, मारे तो मन एक;
तुम विण बीजो रे नवि गमे, ए मुज मोटी रे टेक.
श्री श्रेयांस कृपा करो.१

---

१. नित्य, सदा, २. लक्ष्मी, ३. प्रगट भाव.

मन राखो तुमे सवितणां, पण किहां एकमळी जाओ;
ललचावो लख लोकने, साथी[1] सहज न थाओ. श्री० २

राग भरे जन मन रहो, पण तिहुं काल वैराग;
चित्त तुमारा रे समुद्रनो, कोइ न पामे रे ताग. श्री० ३

एवाशुं चित्त मेळव्युं, मेळव्युं पहेलां न कांई;
सेवक निपट[2] अबूझ[3] छे, निर्वहेशो[4] तुमे सांई. श्री० ४

नीरागीशुं रे किम मिले, पण मळवानो [5]एकांत;
वाचक यश कहे मुज मिल्यो, भक्ते[6] कामण तंत. श्री० ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(कंकणनी देशी)

श्रेयांसजिन सुणो साहिबा रे जिनजी ! दासतणी अरदास,
दिलडे वसी रह्यो;
दूर रह्या जाणुं नहि रे, जि० प्रभु तुमारे पास. दि० १

हरिमृगने ज्युं मधुरता रे, जि० मोरने पींछ कलाप; दि०
दूर रह्या जाणे नहीं रे, जि० प्रभु तुमारे पास. दि० २

जळ थळ महियल जोवतां रे जि० चिंतामणि चढ्यो हाथ; दि०
ऊणप शी हवे माहरे रे, जि० नीरख्यो नयणे नाथ. दि० ३

चरणे तेहने विलगीए रे, जि० जेहथी सीझे काम; दि०
फोगट शुं फेरो तिहां रे, जि० पूछे नहीं पिण नाम. दि० ४

कूडो कलियुग छोडीने रे, जि० आप रह्या एकांत; दि०
आपोपुं राखे घणा रे, जि० पर राखे ते संत. दि० ५

---

१. साथे रहेनार, २. अत्यंत, ३. अजाण, ४. निभावशो, ५. निश्चय, ६. भक्ति वडे

देव घणा में देखिया रे, जि० आडंबर पटराय; दि०
निगम नहि पण सोडथी रे, जि० आघा पसारे पाय. दि०६

सेवकने जो निवाजीए रे, जि० तो तिहां स्थाने जाय; दि०
निपट नीरागी होवतां रे, जि० स्वामीपणुं किम थाय. दि०७

में तो तुमने आदर्यो रे, जि० भावे तुं जाण म जाण; दि०
रूपविजय कविरायनो रे, जि० मोहन वचन प्रमाण. दि०८

---

(१२) श्री वासुपूज्य स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(तुंगियागिरि शिखरे सोहे—ए देशी)

वासूपूज्य जिन त्रिभुवन स्वामी, घननामी परनामी रे;
निराकार साकार सचेतन, करम करम फल कामी रे. वा०१

निराकार अभेद संग्राहक, भेद ग्राहक साकारो रे;
दर्शन ज्ञान दुभेद चेतना, वस्तुग्रहण व्यापारो रे. वा०२

कर्ता परिणामी परिणामो, कर्म जे जीवे करिये रे;
एक अनेक रूप नय वादे, नियते नर अनुसरिये रे. वा०३

दुःखसुख रूप करम फल जाणो, निश्चय एक आनंदो रे;
चेतनता परिणाम न चूके, चेतन कहे जिनचंदो रे. वा०४

परिणामी चेतन परिणामो, ज्ञान करम फळ भावी रे;
ज्ञान करम फळ चेतन कहीए, लेजो तेह मनावी रे. वा०५

आतमज्ञानी श्रमण कहावे, बीजा तो द्रव्यलिंगी रे;
वस्तुगते जे वस्तु प्रकाशे, आनंदघन मति संगी रे. वा०६

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(पंथडो निहाळुं रे बीजा जिन तणो रे–ए देशी)

पूजना तो कीजे रे बारमा जिनतणी रे, जसु प्रगटचो पूज्यस्वभाव;
परकृत पूजा रे जे इच्छे नहीं रे, साधक कारज दाव. पूजना० १

द्रव्यथी पूजा रे कारण भावनुं रे, भाव प्रशस्त ने शुद्ध;
परम इष्ट वल्लभ त्रिभुवन धणी रे, वासुपूज्य स्वयंबुद्ध. पू० २

अतिशय महिमा रे अति उपगारता रे, निर्मल प्रभुगुणराग;
सुरमणि सुरघट सुरतरु तुच्छ ते रे, जिनरागी महाभाग. पू० ३

दर्शन ज्ञानादिक गुण आत्मना रे, प्रभु प्रभुता लयलीन;
शुद्धस्वरूपी रूपे तन्मयी रे, तसु आस्वादन पीन. पू० ४

शुद्ध तत्त्वरसरंगी चेतना रे, पामे आत्मस्वभाव;
आत्मालंबी निज गुण साधतो रे, प्रगटे पूज्य स्वभाव. पू० ५

आप अकर्ता सेवाथी हुवे रे, सेवक पूरण सिद्धि;
निज धन न दिये पण आश्रित लहे रे, अक्षय अक्षर रिद्धि. पू० ६

जिनवर पूजा रे ते निज पूजना रे, प्रगटे अन्वय शक्ति;
परमानंद विलासी अनुभवे रे, देवचंद्र पद व्यक्ति. पू० ७

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(साहिबा मोतीडो हमारो–ए देशी)

स्वामी ! तुमे कांइ कामण कीधुं, चित्तडुं अमारुं चोरी लीधुं;
साहेबा वासुपूज्य जिणंदा, मोहना वासुपूज्य जिणंदा.
अमे पण तुमशुं कामण करशुं, भक्तिग्रही मनघरमां धरशुं.सा० १

मन घरमां धरिया घरशोभा, देखत नित्य रहेशो थिर थोभा;
मन वैकुंठ अकुंठित भक्ते, योगी भाखे अनुभव युक्ते.सा० २

क्लेशे वासित मन संसार, क्लेश रहित मन ते भवपार;
जो विशुद्ध मन घर तुमे आव्या, प्रभु तो अमे नवनिधि
ऋद्धि पाम्या.सा० ३

सात राज अलगा जई बेठा, पण भक्ते अम मनमां पेठा;
अलगाने वळग्या जे रहेवुं, ते भाणा खडखड दुःख सहेवुं.सा० ४

ध्यायक ध्येय ध्यान गुण एके, भेद छेद करशुं हवे टेके;
खीर नीर परे तुमशु मळशुं, वाचक यश कहे हेजे हळशुं.सा० ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(चुंदडी ना भींजे हो साहिबाजी प्रेमनी—ए देशी)

प्रभुजीशुं लागी हो पूरण प्रीतडी,
जीवन-प्राण आधार, गिरुआ जिनजी हो राज !
साहिब सुणजो हो माहरी विनति,
दरिसण देजो हो, दिलभरी श्यामजी,
अहो ! जगगुरु सिरदार. गि०सा० १

चाहीने दीजे हो चरणनी चाकरी,
द्यो अनुभव अम साज; गि०
इम नवि कीजे हो साहिबाजी सांभळो,
कांई सेवकने शिवराज. गि०सा० २

चूपशुं छाना हो साहिबा न बेसीए,
कांई शोभा न लहेशो कोय; गि०
दास उद्धारो हो साहिबाजी आपनो,
ज्यूं होवे सुजस सवाय. गि०सा० ३

अरुण जो ऊगे हो साहिबाजी अंबरे,
नाशे तिमिर अंधार; गि०

अवर देव हो साहिबाजी किंकरा,
मिलियो तुं देव मुने सार. गि॰सा॰४
अवर न चाहुं हो साहिबाजी तुम छते,
जिम चातक जळधार; गि॰
खटपद भीनो हो साहिबाजी प्रेमशुं,
तिम हुं हृदयमझार. गि॰सा॰५
सात राजने हो साहिबाजी अंते जई वस्या,
शुं करीए तुम प्रीत; गि॰
निपट नीरागी हो जिनवर तुं सही,
ए तुम खोटी रीत. गि॰सा॰६
दिलनी जे वातो हो किणने दाखवु ?
श्री वासुपूज्य जिनराय; गि॰
खीण एक आवी हो पंडेजी सांभळो,
कांई मोहन आवे दाय. गि॰सा॰७

---

(१३) श्री विमलनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(राग मल्हार : ईडर आंबा आंबली रे—ए देशी)

दुःख दोहग दूरे टळ्यां रे, सुख संपदशु भेट,
धिंग धणी माथे किया रे, कुण गंजे नर खेट,
विमल जिन, दीठां लोयण आज,
मारां सीध्यां वांछित काज.वि॰१
चरण-कमल कमला[1] वसे रे, निर्मल थिर पद देख;
समल अथिर पद परिहरे रे, पंकज पामर पेख.वि॰२

---

१. लक्ष्मी

मुज मन तुज पदपंकजे रे, लीनो गुण मकरंद;
रंक गणे मंदरधरा[1] रे, इंद चंद नागिंद. वि० ३

साहिब ! समरथ तुं धणी रे, पाम्यो परम उदार;
मन-विशरामी वालहो रे, आतमचो[2] आधार. वि० ४

दरिशण दीठे जिनतणुं रे, संशय न रहे वेध;
दिनकर करभर पसरंतां रे, अंधकार प्रतिषेध. वि० ५

अमियभरी मूरति रची रे, उपमा न घटे कोय;
शांत सुधारस झीलती रे, नीरखत तृप्ति न होय. वि० ६

एक अरज सेवक तणी रे, अवधारो जिनदेव;
कृपा करी मुज दीजीए रे, आनंदघन पद सेव. वि० ७

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(दास अरदास शी पेरे करेजी—ए देशी)

विमलजिन, विमलता ताहरीजी, अवर बीजे न कहाय;
लघु नदी जिम तिम लंघियेजी, स्वयंभूरमण न तराय. वि० १

सयल पुढवी गिरि जल तरुजी, कोइ [3]तोले एकहथ्थ;
तेह पण तुज गुणगण भणीजी, भाखवा नहीं समरथ. वि० २

सर्व पुद्‌गल नभ धर्मनाजी, तेम अधर्म प्रदेश;
तास गुण धर्म पज्जव सहुजी, तुज गुण एकतणो लेश. वि० ३

एम निज भाव अनंतनीजी, अस्तिता केटली थाय;
नास्तिता स्वपरपद अस्तिताजी, तुज समकाल समाय. वि० ४

ताहरा शुद्ध स्वभावनेजी, आदरे धरी बहुमान;
तेहने तेही ज नीपजेजी, ए कोई अद्‌भुत तान. वि० ५

---

१. मेरु-सुवर्णाचल भूमि, २. आत्मानो, ३. उपाडे

तुम प्रभु तुम तारकविभुजी, तुम समो अवर न कोय;
तुम दरिशण थकी हुं तर्योजी, शुद्ध आलंबन होय. वि० ६

प्रभु तणी विमलता ओळखीजी, जे करे थिर मन सेव;
देवचंद्र पद ते लहेजी, विमल आनंद स्वयमेव. वि० ७

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(नमो रे नमो श्री शत्रुंजय गिरिवर–ए देशी)

सेवो भवियां विमल जिणेसर, दुल्लहा सज्जन-संगाजी;
एवा प्रभुनुं दरिशण लेवुं, ते आलसमां गंगाजी. से० १

अवसर पामी आलस करशे, ते मूरखमां पहेलोजी;
भूख्याने जेम घेबर देतां, हाथ न मांडे घेलोजी. से० २

भव अनंतमां दर्शन दीठुं, प्रभु एहवा देखाडेजी;
विकट ग्रंथि जे पोळ पोळियो, कर्म विवर उघाडेजी. से० ३

तत्त्वप्रीतिकर पाणी पाए, विमलालोके आंजीजी;
लोयण गुरु परमान्न दिये तव, भ्रम नांखे सवि भांजीजी. से० ४

भ्रम भांग्यो तव प्रभुशुं प्रेमे, वात करुं मन खोलीजी;
सरलतणे जे हइडे आवे, तेह जणावे बोलीजी. से० ५

श्रीनयविजय विबुध पय सेवक, वाचकयश कहे साचुंजी;
कोडिकपट जो कोई दिखावे, तोहि प्रभुविण नवि राचुंजी. से० ६

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(ते तरीआ भाई ते तरीआ–ए देशी)

विमल जिनंदशुं ज्ञानविनोदी, मुखछबी शशी अवहेलेजी;
सुरवर नीरखी रूप अनुपम, हजीये निमेष न मेलेजी. वि० १

विष्णु वराह थई धरे वसुधा, एहवुं कोईक कहे छे जी;
तो वराह लंछन मिषे प्रभुने, चरण शरणे रहे छे जी. वि० २

लीला अकळ ललित पुरुषोत्तम, शिववधू रस भीनोजी;
वेधकस्वामीथी मिलवुं सोहिलुं, जे कोई टाळे कीनोजी. वि० ३

प्रसन्न थई जगनाथ पधार्या, मनमंदिर मुज सुधर्योजी;
हुं नटनवल विविधगति जाणुं, खिण एक तो लहो मुजरोजी. वि० ४

चोराशी लख वेश हुं आणुं, कर्म प्रतीत प्रमाणेजी;
अनुभव दान दीओ तो वारु, चेतन कहो मयाणेजी. वि० ५

जे प्रभुभक्ति विमुख नर जगमें, ते भ्रम भूल्या भटकेजी;
सगत तेह न विगत लहीए, पूजादिकथी चटकेजी. वि० ६

कीजे प्रसाद उचित ठकुराई, स्वामी अखय खजानोजी;
रूपविबुधनो मोहन पभणे, सेवक विनति मानोजी. वि० ७

---

(१४) श्री अनंतनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

धार तरवारनी सोहली दोहली,
चौदमा जिनतणी चरण सेवा;
धार पर नाचता देख बाजीगरा,
सेवना-धार पर न रहे देवा. धार० १

एक कहे सेवीए विविध किरिया करी,
फळ अनेकांत लोचन न देखे;
फळ अनेकांत किरिया करी बापडा,
रडवडे चार गतिमांहि लेखे. धार० २

गच्छना भेद बहु नयण निहाळतां,
तत्त्वनी वात करतां न लाजे;

उदरभरणादि निज काज करतां थकां,
मोह नडिया कलिकाल राजे. धार० ३

वचन निरपेक्ष व्यवहार जूठो कह्यो,
वचन सापेक्ष व्यवहार साचो;
वचन निरपेक्ष व्यवहार संसार फळ,
सांभळी आदरी कांई राचो. धार० ४

देव गुरु धर्मनी शुद्धि कहो किम रहे ?
किम रहे शुद्ध श्रद्धान आणो,
शुद्ध श्रद्धान विणु सर्व किरिया करे,
छार पर लींपणुं तेह जाणो. धार० ५

पाप नहि कोई उत्सूत्रभाषण जिस्यो,
धर्म नहि कोई जगसूत्र सरीखो;
सूत्र अनुसार जे भविक किरिया करे,
तेहनुं शुद्ध चारित्र परीखो. धार० ६

एह उपदेशनो सार संक्षेपथी,
जे नरा चित्तमें नित्य ध्यावे;
ते नरा दिव्य बहु काळ सुख अनुभवी,
नियत आनंदघन राज पावे. धार० ७

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(दीठी हो प्रभु दीठी जगगुरु तुज—ए देशी)

मूरति हो प्रभु, मूरति अनंत जिणंद,
ताहरी हो प्रभु, ताहरी मुज नयणे वसीजी;
समता हो प्रभु, समता रसनो कंद,
सहेजे हो प्रभु, सहेजे अनुभव रस लसीजी. १

भवदव[1] हो प्रभु, भवदव-तापित जीव,
तेहने हो प्रभु, तेहने अमृतघन समीजी;
मिथ्या हो प्रभु, मिथ्याविषनी [2]खीव,
हरवा हो प्रभु, हरवा जांगुलि[3] मन रमीजी. २

भाव हो प्रभु, भाव चिंतामणि एह,
आतम हो प्रभु, आतम संपत्ति आपवाजी;
एहि ज हो प्रभु, एहि ज शिवसुखगेह,
तत्त्व हो प्रभु, तत्त्वालंबन थापवाजी. ३

जाये हो प्रभु, जाये आस्रवचाल,
दीठे हो प्रभु, दीठे संवरता वधेजी;
रत्न हो प्रभु, रत्नत्रयी गुणमाल,
अध्यातम हो प्रभु, अध्यातम साधन सधेजी. ४

मीठी हो प्रभु, मीठी सूरत तुज,
दीठी हो प्रभु, दीठी रुचि बहुमानथीजी;
तुज गुण हो प्रभु, तुज गुण भासन युक्त,
सेवे हो प्रभु, सेवे तसु भवभय नथीजी. ५

नामे हो प्रभु, नामे अद्‌भुत रंग,
ठवणा हो, प्रभु ठवणा दीठे उल्लसेजी;
गुण-आस्वाद हो प्रभु गुण-आस्वाद अभंग,
तन्मय हो प्रभु, तन्मयताए जे धसेजी. ६

गुण अनंत हो प्रभु, गुण अनंतनो वृंद,
नाथ हो प्रभु, नाथ अनंतने आदरेजी;
देवचंद्र हो प्रभु, देवचंद्रने आनंद,
परम हो प्रभु, परम महोदय ते वरेजी. ७

---

१. संसाररूपी दावानळ. २. मूर्छा, ३. सर्प-विषहरणमंत्र

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(साहेलडियां—ए देशी)

श्री अनंत जिनशुं करो, साहेलडियां,
चोळ मजीठनो रंग रे, गुणवेलडियां;
साचो रंग ते धर्मनो सा० बीजो रंग पतंग रे. गु० १

धर्म रंग जीरण नहीं सा० देह ते जीरण थाय रे. गु०
सोनुं ते विणसे नहीं सा० घाट घडामण जाय रे. गु० २

त्रांबुं जे रसवेधियुं सा० ते होय जाचुं[1] हेम रे. गु०
फरी त्रांबुं ते नवि हुए सा० एहवो जगगुरु प्रेम रे. गु० ३

उत्तम गुण अनुरागथी सा० लहीए उत्तम ठाम रे. गु०
उत्तम निज महिमा वधे सा० दीपे उत्तम धाम रे. गु० ४

उदकबिंदु सायर भळ्यो सा० जिम होय अक्षय अभंग रे. गु०
वाचक यश कहे प्रभु गुणे सा० तिम मुज प्रेम प्रसंग रे. गु० ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(वीर सुणो मोरी विनति—ए देशी)

अनंत जिणंदशुं विनति, में तो कीधी हो त्रिकरणथी आज;
मिलतां निज साहेब भणी, कुण आणे हो मूरख मन लाज.अ० १

मुख पंकज मन मधुकरु, रह्यो लुब्धो हो गुणज्ञाने लीन;
हरिहर आवळफूल ज्यों, ते देख्यां हो किम चित्त होवे [2]प्रीण ?अ० २

भव फरियो दरियो तर्यो, पण कोई हो अनुसरियो न द्वीप;
हवे मन प्रवहण माहरुं, तुम पद भेटे हो में राख्युं छीप.अ० ३

अंतरजामी मिले थके, फळे माहरो हो सही करीने भाग्य;
हवे वाही[3] जावा तणो, नथी प्रभुजी हो कोइ इहां लाग.अ० ४

---

१. खरेखरुं, साचुं. २. प्रीतिवाळुं, ३. ठगी जवा

पल्लव ग्रही रढ लेईशुं, नहि मेळो[1] हो ज्यारे तमे मीट;
आतम अवरेजो थई, किम उवेटे हो करारी छीट.अ० ५

नायक निज निवाजीए, हवे लाजीए हो करतां रसलूंट;
अध्यातम पद आपवा, कांई नहि पडे हो खजाने खूट.अ० ६

जिम तुमे तर्या तिम तारजो, शुं बेसे हो तुमने कांई दाम ?
नहि तारो तो मुजने, किम [2]तुमचुं हो तारक कहेशो नाम. अ० ७

हुं तो निज रूपस्थथी, रहुं होई हो अहर्निश अनुकूळ;
चरण तजी जईए कीहां ? छे माहरी हो वातलडीनो मूळ. अ० ८

अष्टापद पद किम करे, अन्य तीरथ हो जाशे जिम हेड;
मोहन कहे कवि रूपनो, विना उपशम हो नवि मूकुं केड. अ० ९

---

(२)

अनंत जिणंद अवधारीए, सेवकनी अरदास जिनजी;
अनंत अनंत गुण तुम तणा, सांभरे सासोसास.जि० अ० १

सुरमणि सम तुम सेवना, पामीए पुन्य पंडूर;जि०
किम प्रमादतणे वशे, मूकुं अधखीण दूर.जि० अ० २

भक्तिजुक्ति मनमें वसो, मनरंजन महाराज;जि०
सेवकनी तुमने अछे, बांह्य ग्रह्यानी लाज.जि० अ० ३

शुं मीठा धीठा दीए, तेहनो नहि हुं दास;जि०
साथे सेवक संभवी, कीजे ज्ञानप्रकाश.जि० अ० ४

जाणने शुं कहेवुं घणुं, एक वचन मेळाप;जि०
मोहन कहे कवि रूपनो, भक्ति मधुर जिम द्राख.जि० अ० ५

---

१. मेळवो, २. तमारुं

(१५) श्री धर्मनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(राग गोडी सारंग, देशी रसियानी)

धर्म जिनेसर गाउं रंगशुं, भंग म पडशो हो प्रीत जिनेसर;
बीजो मनमंदिर आणुं नहीं, ए अम कुलवट रीत. जि०ध० १

धरम धरम करतो जग सहु फिरे, धरम न जाणे हो मर्म; जि०
धरम जिनेसर चरण ग्रह्या पछी, कोई न बांधे हो कर्म. जि०ध० २

प्रवचन अंजन जो सद्‌गुरु करे, देखे परम निधान; जि०
हृदय नयण निहाळे जगधणी, महिमा मेरु समान. जि०ध० ३

दोडत दोडत दोडत दोडियो, जेती मननी रे दोड; जि०
प्रेम प्रतीत विचारो ढूंकडी, गुरुगम लेजो रे जोड. जि०ध० ४

एकपखी केम प्रीति [1]वरे पडे, उभय मिल्या हुए संधि; जि०
हुं रागी हुं मोहे फंदियो, तुं नीरागी निरबंध.जि०ध० ५

परम निधान प्रगट मुख आगळे, जगत उल्लंघी हो जाय;जि०
ज्योति विना जुओ जगदीशनी, अंधो अंध पलाय.जि०ध० ६

निर्मल गुणमणि रोहण भूधरा, मुनिजन मानस हंस;जि०
धन्य ते नगरी धन्य वेळा घडी, मातपिता कुळ वंश.जि०ध० ७

मन मधुकर वर करजोडी कहे, पदकज[2] निकट निवास;जि०
घननामी आनंदघन सांभळो, ए सेवक अरदास.जि०ध० ८

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

धर्म जगनाथनो धर्म शुचि गाईए,
आपणो आतमा तेहवो भाविये;

---

१. पाठां० परवडे, २. चरणकमळ

जाति जसु एकता तेह पलटे नहीं,
शुद्ध गुण पज्जवा वस्तु सत्तामयी. १
नित्य निरवयव वळी एक अक्रियपणे,
सर्व गत तेह सामान्य भावे भणे;
तेहथी इतर सावयव विशेषता,
व्यक्ति भेदे पडे जेहनी भेदता. २
एकता पिंडने नित्य अविनाशता,
अस्ति निज ऋद्धिथी कार्यगत भेदता;
भाव श्रुत गम्य अभिलाप्य अनंतता,
भव्य पर्यायनी जे परावर्त्तिता. ३
क्षेत्र गुण भाव अविभाग अनेकता,
नाश उत्पाद अनित्य परनास्तिता;
क्षेत्र व्याप्यत्व अभेद अवक्तव्यता,
वस्तु ते रूपथी नियत अभव्यता. ४
धर्म प्राग्भावता सकल गुण शुद्धता,
भोग्यता कर्तृता रमण परिणामता;
शुद्ध स्वप्रदेशता तत्त्व चैतन्यता,
व्याप्य-व्यापक तथा ग्राह्य ग्राहक गता. ५
संग परिहारथी स्वामी निज पद लह्युं,
शुद्ध आत्मिक आनंदपद संग्रह्युं;
जहवि[1] परभावथी हुं भवोदधि वस्यो,
परतणो संग संसारताए ग्रस्यो. ६
तहवि[2] सत्तागुणे जीव ए निर्मळो,
अन्य संश्लेष जिम स्फटिक नवि शामळो;

१. यद्यपि, २. तथापि.

जे परोपाधिथी दुष्ट परिणति ग्रही,
भाव तादात्म्यमां माहरुं ते नहीं. ७

तिणे परमात्मप्रभु-भक्तिरंगी थई,
शुद्ध कारण रसे तत्त्व परिणतिमयी;
आत्मग्राहक थये तजे परग्रहणता,
तत्त्वभोगी थये टळे परभोग्यता. ८

शुद्ध निःप्रयास निजभावभोगी यदा,
आत्मक्षेत्रे नहीं अन्य रक्षण तदा;
एक असहाय निस्संग निर्द्वंद्वता,
शक्ति उत्सर्गनी होय सहु व्यक्तता. ९

तेणे मुज आतमा तुज थकी नीपजे,
माहरी संपदा सकळ मुज संपजे;
तिणे मनमंदिरे धर्म प्रभु ध्याईए,
परम देवचंद्र निजसिद्धिसुख पाईए. १०

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(बेडले भार घणो छे राज, वातो केम करो छो ?—ए देशी)

थाशुं[1] प्रेम बन्यो छे राज, निर्वहेशो तो लेखे.
में रागी प्रभु थें[2] छो नीरागी, अणजुगते होय हांसी;
एकपखो जे नेह निर्वहेवो, तेह मांकी[3] साबाशी.था० १

नीरागी सेव्ये कांई [4]होवे, इम मनमें नवि आणुं;
फळे अचेतन पण जिम सुरमणि, तिम तुम भक्तिप्रमाणु.था० २

चंदन शीतलता उपजावे, अग्नि ते शीत मिटावे;
सेवकनां तिम दुःख गमावे, प्रभुगुण प्रेम स्वभावे.था० ३

---

१. थाशुं=तमारी साथे २. थें=तमे ३. मांकी=मारी (मारवाडी) ४. शुं थाय ?

व्यसन[१] उदय जे जलधि अनुहरे, शशीने ते ज संबंधे;
अणसंबंधे कुमुद अनुहरे, शुद्ध स्वभाव प्रबंधे.था० ४

देव अनेरा तुमथी छोटा, थें जगमें अधिकेरा;
यश कहे धर्म जिनेश्वर थाशुं, दिल मान्या हे मेरा.था० ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(हांरे मारा जोबनियानो लटको दहाडा चार जो—ए देशी)

हांरे मारे धर्मजिणंदशुं लागी पूरण प्रीत जो,
जीवलडो ललचाणो जिनजीनी ओळगे रे लो;
हांरे मुने थाशे कोईक समये प्रभु सुप्रसन्न जो,
वातलडी तव थाशे मारी सवि वगेरे लो. १

हांरे प्रभु, दुर्जननो भंभेर्यो मारो नाथ जो,
ओळवशे नहि क्यारे कीधी चाकरी रे लो;
हांरे मारा स्वामी सरखो कुण छे दुनियामांहि जो,
जईए रे जिम तेहने घर आशा करी रे लो. २

हांरे जस सेवा सेती[२] स्वारथनी नहि सिद्ध[३] जो,
ठाली रे शी करवी तेहथी गोठडी रे लो;
हांरे कांई जूठुं[४] खाय ते मीठाईने माटे जो,
कांई रे परमारथ विण नहि प्रीतडी रे लो. ३

हांरे प्रभु, अंतरजामी जीवन प्राणाधार जो,
वायो रे नवि जाण्यो कळियुग वायरो रे लो;
हांरे प्रभु, लायक नायक भक्त-वच्छल भगवंत जो,
वारु रे गुण केरा साहिब सायरु रे लो. ४

---

१. कष्ट (अस्त) २. सेवाथी, ३. सिद्धि, ४. एठुं.

हांरे प्रभु, लागी मुजने ताहरी माया जोर जो,
अळगा रे रहेवाथी होय ओसांगळो रे लो;
हांरे कुण जाणे अंतरगतिनी विण महाराज जो,
हेजे रे हसी बोलो छंडी आमळो रे लो. ५

हांरे तारे मुखने मटके अटक्युं मारुं मन जो,
आंखलडी अणियाळी कामणगारडी रे लो;
हांरे मारां नयणां लंपट जोवे खिण खिण तुज जो,
राते रे प्रभुरूपे न रहे वारिया रे लो. ६

हांरे प्रभु, अळगा तोपिण जाणजो करीने हजूर जो,
ताहरी रे बलिहारी हुं जाउं वारणे रे लो;
हांरे कवि रूपविबुधनो मोहन करे अरदास जो,
गिरुआथी मन आणी ऊलट अति घणो रे लो. ७

---

(१६) श्री शांतिनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(राग मल्हार—चतुर चोमासुं पडिक्कमी—ए देशी)

शांति जिन, एक मुज विनति, सुणो त्रिभुवनराय रे;
शांतिस्वरूप किम जाणीए, कहो मन किम परखाय रे. शां० १

धन्य तुं आतम जेहने, एहवो प्रश्न अवकाश रे;
धीरज मन धरी सांभळो, कहुं शांति प्रतिभास रे. शां० २

भाव अविशुद्ध सुविशुद्ध जे, कह्या जिनवर देव रे;
ते तेम अवितथ्थ सद्दहे, प्रथम ए शांतिपद सेव रे. शां० ३

आगमधर गुरु समकिती, किरिया संवर सार रे;
संप्रदायी अवंचक सदा, शुचि अनुभव आधार रे. शां० ४

शुद्ध आलंबन आदरे, तजी अवर जंजाल रे;
तामसी वृत्ति सवि परिहरि भजे सात्त्विकी शाल रे. शां० ५

फल विसंवाद जेहमां नहीं, शब्द ते अर्थ संबंधी रे;
सकल नयवाद व्यापी रह्यो, ते शिवसाधन संधि रे. शां० ६

विधि प्रतिषेध करी आतमा, पदारथ अविरोध रे;
ग्रहण विधि महाजने परिग्रह्यो, इस्यो आगमे बोध रे. शां० ७

दुष्टजन संगति परिहरी, भजे सुगुरु संतान रे;
जोग सामर्थ्य चित्त भाव जे, धरे मुक्ति निदान रे. शां० ८

मान अपमान चित्त सम गणे, सम गणे कनकपाषाण रे;
वंदक निंदक सम गणे, इस्यो होये तुं जाण रे. शां० ९

सर्व जगजंतुने सम गणे, सम गणे तृण मणि भाव रे;
मुक्ति संसार बेहु सम गणे, मुणे भवजलनिधि नाव रे. शां० १०

आपणो आतमभाव जे, एक चेतन आधार रे;
अवर सवि साथ संयोगथी, एह निज परिकर सार रे. शां० ११

प्रभुमुखथी एम सांभळी, कहे आतमराम रे;
ताहरे दरिशने निस्तर्यो, मुज सिद्धां सवि काम रे. शां० १२

अहो ! अहो ! हुं मुजने कहुं, नमो मुज नमो मुज रे;
अमित फल दान दातारनी, जेहनी भेट थई तुज रे. शां० १३

शांति स्वरूप संक्षेपथी, कह्यो निज पररूप रे;
आगममांहे विस्तर घणो, कह्यो शांति जिनभूप रे. शां० १४

शांति स्वरूप एम भावशे, धरी शुद्ध प्रणिधान रे;
आनंदघन पद पामशे, ते लहेशे बहु मान रे. शां० १५

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

जगत दिवाकर जगत कृपानिधि,
वाहला मारा समवसरणमां बेठा रे;
चउमुख चउविह धर्म प्रकाशे, ते में नयणे दीठा रे.
भविक जन हरखो रे, नीरखी शांति जिणंद भविक०
उपशम रसनो कंद, नहीं इण सरिखो रे. १

प्रातिहारज अतिशय शोभा वा० ते तो कहिय न जावे रे;
घूक बालकथी रविकरभरनुं, वर्णन केणिपरे थावे रे. भ० २

वाणीगुण पांत्रीश अनोपम वा० अविसंवाद सरूपे रे;
भवदुःखवारण शिवसुखकारण, शुद्धो धर्म प्ररूपे रे. भ० ३

दक्षिणपश्चिमउत्तरदिशिमुखवा० ठवणाजिनउपगारी रे;
तसु आलंबन लहिय अनेक, तिहां थया समकितधारी रे. भ० ४

षट् नय कारजरूपे ठवणा वा० सग नय कारण ठाणी रे;
निमित्त समान थापना जिनजी, ए आगमनी वाणी रे. भ० ५

साधक तीन निक्षेपा मुख्य वा० जे विण भाव न लहिये रे;
उपकारी दुग भाष्ये भाख्या, भाव वंदकनो ग्रहीये रे. भ० ६

ठवणा समवसरणे जिनसेंती वा० जो अभेदता वाधी रे;
ए आतमना स्वस्वभावगुण, व्यक्त योग्यता साधी रे. भ० ७

भलुं थयुं में प्रभुगुण गाया वा० रसनानो फल लीधो रे;
देवचंद्र कहे मारा मननो, सकल मनोरथ सीधो रे. भ० ८

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

धन्य दिन वेला, धन्य घडी तेह,
अचिरारो नंदन जिन जदि भेटशुंजी;

लहीशुं रे सुख देखी मुखचंद,
विरह व्यथानां दुःख सवि मेटशुजी. १

जाण्यो रे जेणे तुज गुण लेश,
बीजा रे रस तेहने मन नवि गमेजी;
चाख्यो रे जेणे अमी लवलेश,
बाकसबुकस तस न रुचे किमेजी. २

तुज समकितरसस्वादनो जाण,
पाप कुभक्ते बहु दिन सेवियुंजी;
सेवे जो कर्मने योगे तोहि,
वांछे ते समकितअमृत धुरि लिख्युं जी. ३

ताहरुं ध्यान ते समकितरूप,
तेही ज ज्ञान ने चारित्र ते ज छेजी;
तेहथी रे जाये सघळां पाप,
ध्याता रे ध्येयस्वरूप होये पछेजी. ४

देखी रे अद्भुत ताहरुं रूप,
अचरिज भविक अरूपी पद वरेजी !
ताहरी गति तुं जाणे हो देव,
स्मरण भजन ते वाचक यश करेजी. ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

सोळमा श्री जिनराज ओळग सुणो अमतणी ललना,
भगतथी एवडी केम करो छो भोळामणी ललना;
चरणे विलग्यो जेह आवीने थई खरो ल०
निपट तेहथी कोण राखे रस आंतरो ल० १

में तुज कारण स्वामी [1]उवेख्या सुर घणा ल०
माहरी दिशाथी में तो न राखी कांइ मणा ल०
तो तुमे मुजथी केम अपूठा[2] थई रहो ल०
चूक होवे जो कोई सुखे मुखथी कहो ल० २

तुजथी अवर न कोय अधिक जगति तळे ल०
जेहथी चित्तनी वृत्ति एकांगी जई मळे ल०
दीजे दरिशन वार घणी न लगावीए ल०
वातलडी अति मीठी ते किम विरमावीए ? ल० ३

तुं जो जळ तो हुं कमळ, कमळ तो हुं वासना ल०
वासना तो हुं भ्रमर न मूकुं आसना ल०
तुं छोडे पण हुं केम छोडुं ? तुज भणी ल०
लोकोत्तर कोइ प्रीत आवी तुजथी बनी ल० ४

धुरथी शाने समकित दईने भोळव्यो ? ल०
हवे केम जाउं खोटे दिलासे ओळव्यो ? ल०
जाणी खासो दास विमासो छो किशुं ? ल०
अमे पण खिजमतमांही के खोटा किम थशुं ? ल० ५

बीजी खोटी वाते अमे राचुं नहीं ल०
में तुज आगळ माहरी मनवाळी कही ल०
पूरण राखो प्रेम विमासो शुं तमे ? ल०
अवसर लही एकांत वीनवीए छीए अमे ल० ६

अंतरजामी स्वामी अचिरानंदना ल०
शांतिकरण श्री शांतिजी मानजो वंदना ल०
तुज स्तवनाथी तन मन आनंद ऊपन्यो ल०
कहे मोहन मन रंग सुपंडित रूपनो ल० ७

१. उपेक्षा करी, २. पराङ्मुख, विमुख

(२)

(राग सारंग)

शांतिजिणंद महाराज, जगतगुरु, शांतिजिणंद महाराज;
अचिरानंदन भविमनरंजन, गुणनिधि गरीबनिवाज. ज० १

गर्भ थकी जिणे ईति[1] निवारी, हरखित सुरनर कोडी;
जनम थये चोसठ इंद्रादिक, पद प्रणमे कर जोडी. ज० २

मृगलंछन भविक तृष[2] गंजन, कंचनवान शरीर;
पंचम नाणी पंचम चक्री, सोळसमो जिन धीर. ज० ३

रत्नजडित भूषण अति सुंदर, आंगी अंग उदार;
अति उछरंग भगति नौतन गति, उपशम रस दातार. ज० ४

करुणानिधि भगवान कृपा कर, अनुभव उदित आवास;
रूप विबुधनो मोहन पभणे, दीजे ज्ञानविलास. ज० ५

---

(१७) श्री कुंथुनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(अंबर देहु मोरारी, हमारो—ए देशी)

मनडुं किमही न [3]बाझे हो कुंथुजिन, मनडुं किमही न बाझे;
जिमजिम जतन करीने राखुं, तिमतिम अळगुं भाजे हो. कुं० १

रजनी वासर वसती उज्जड, गयण पायाले जाय;
साप खाय ने मुखडुं [4]थोथुं, एह उखाणो न्याय हो. कुं० २

मुक्तितणा अभिलाषी तपिया, ज्ञान ने ध्यान अभ्यासे;
वयरीडुं कांई एहवुं चिंते, नांखे अवळे पासे हो. कुं० ३

---

१. सात प्रकारनी ईति-उपद्रव, २. राग, ३. वळगतुं नथी, ४. खाली.

आगम आगमधरने हाथे, नावे किणविध आंकुं;
किहां कणे जो हठ करी हटकुं तो, व्यालतणी परे वांकुं हो. कुं० ४

जो ठग कहुं तो ठगतुं न देखुं, शाहुकार पण नांही;
सर्वमांही ने सहुथी अळगुं, ए अचरिज मनमांही हो. कुं० ५

जे जे कहुं ते कान न धारे, आप मते रहे कालो;
सुरनर पंडितजन समजावे, समजे न माहरो [1]सालो हो. कुं० ६

में जाण्युं ए लिंग नपुंसक, सकल मरदने ठेले;
बीजी वाते समर्थ छे नर, एहने कोई न झेले हो. कुं० ७

मन साध्युं तेणे सघळुं साध्युं, एह वात नहि खोटी;
एम कहे साध्युं ते नवि मानुं, ए कही वात छे मोटी हो. कुं० ८

मनडुं दुराराध्य तें वश आण्युं, आगमथी मति आणुं;
आनंदघन प्रभु ! माहरुं आणो, तो साचुं करी जाणुं हो. कुं० ९

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

समवसरण बेसी करी रे, बारह परिषद्‌मांहे;
वस्तुस्वरूप प्रकाशता रे, करुणाकर जगनाहो रे;
कुंथु जिनेसरु रे.
निर्मल तुज मुख वाणी रे, जे श्रवणे सुणे रे,
तेहि ज गुणमणि खाणी रे. कुं० १

गुण पर्याय अनंतता रे, वळी स्वभाव अगाह;
नय गम भंग निक्षेपना रे, हेयादेय प्रवाहो रे. कुं० २

कुंथुनाथ प्रभु देशना रे, साधन साधक सिद्धि;
गौण मुख्यता वचनमां रे, ज्ञान ते सकल समृद्धि रे. कुं० ३

---

१. कुमति स्त्रीनो भाई.

वस्तु अनंत स्वभाव छे रे, अनंत कथक तसु नामो;
ग्राहक अवसर बोधथी रे, कहेवे अर्पित कामो रे. कुं० ४

शेष अनर्पित धर्मने रे, सापेक्ष श्रद्धाबोध;
उभय रहित भासन हुवे रे, प्रगटे केवल बोध रे. कुं० ५

छति परिणति गुणवर्तना रे, भासन भोग आनंद;
समकाळे प्रभु ताहरे रे, रम्यरमण गुणवृंदो रे. कुं० ६

निज भावे सीय[1] अस्तिता रे, परनास्तित्व स्वभाव;
अस्तिपणे ते नास्तिता रे, सीय ते उभय स्वभावो रे. कुं० ७

अस्तिस्वभाव जे आपणो रे, रुचि वैराग्य समेत;
प्रभु सन्मुख वंदन करी रे, मागीश आतम हेत रे. कुं० ८

अस्ति स्वभाव रुचि थई रे, ध्यातो अस्ति स्वभाव;
देवचंद्र पद ते लहे रे, परमानंद जमावो रे. कुं० ९

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

साहेलां हे कुंथु जिनेश्वर देव, रत्नदीपक अति दीपतो हो लाल;
सा० मुज मनमंदिर मांही, आवे जो अरिबल [2]जीपतो हो लाल. १

सा० मिटे तो मोह अंधार, अनुभवतेजे जळहळे हो लाल;
सा० धूमकषाय न रेख, चरण चित्रामण नवि चळे हो लाल. २

सा० पात्र करे नहि हेठ, सूरज तेजे नवि [3]छीपे हो लाल;
सा० सर्व तेजनुं तेज, पहेलांथी वाधे पछे हो लाल. ३

सा० जेह न मरुतने गम्य, चंचलता जे नवि लहे हो लाल;
सा० जेह सदा छे रम्य, पुष्ट गुणे नवि कृश रहे हो लाल. ४

---

१. कथंचित्, २. विजय मेळवतो, ३. छुपाय

सा० पुद्‌गल तेल न खेप[1], जेह न शुद्ध दशा[2] दहे हो लाल;
सा० श्री नयविजय सुशिष्य, वाचकयश इणि पेरे कहे हो लाल. ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(चंदनकी कटकी भरी–ए देशी)

कुंथुजिणंद करुणा करो, जाणी पोतानो दास, साहिबा मोरा,
शुं जाणी अलगा रह्या ? जाण्युं के आवशे पास, साहिबा मोरा;
अजब रंगीला प्यारा, अकळ अलक्ष्मी न्यारा,
परम ससनेही माहरी विनति. १

अंतरजामी वालहा, जोवो मीट मिलाय सा०
खिण म हसो खिणमां हसो, इम प्रीतनिवाहो किम थाय सा० अ० २

रूपी हो तो पालव ग्रहुं, अरूपीने शुं कहेवाय ? सा०
कान मांड्या विना वारता, कहोनेजी केम बकाय ! सा० अ० ३

देव घणा दुनियामांय छे, पण दिलमेळो नवि थाय सा०
जिण गामे जावुं नहीं, ते वाट कहो शुं पूछाय ? सा० अ० ४

मुज मन अंतर्मुहूर्तनो, में ग्रह्यो चपळता दाव सा०
प्रीति समे तो जुओ कहो, ए तो स्वामी स्वभाव सा० अ० ५

अंतर श्यो मळिया पछे, नवि मळीए प्रभु मूल सा०
कुमया किम करवी घटे, जे थयो निज अनुकूळ ? सा० अ० ६

जागी हवे अनुभवदशा, लागी प्रभुशुं प्रीत सा०
रूपविजय कविरायनो, कहे मोहन रस रीत सा० अ० ७

---

१. क्षेपन करवापणुं, २. दिवेट, अवस्था

(२)

(जादवपति तोरण आव्या–ए देशी)

मुज अरज सुणो मुज प्यारा,
साची भक्तिथी किम रहो न्यारा रे सनेही मोरा,
कुंथु जिणंद करुणा करो. १
हुं तो तुम दरिशणनो अरथी,
घटे किम करी शके करथी रे; स०
थई गिरुआ एम जे विमासो,
ते तो मुजने होय छे तमासो रे. स० कुं० २
ललचावीने जे कीजे,
किम दासने चित्त पतीजे रे ? स०
पद मोटे कहावो मोटा,
जिण तिण वाते न हुवो खोटा रे. स० कुं० ३
मुज भाव महेलमें आवो,
उपशम रस प्यालो चखावो रे; स०
सेवकनो तो मन रीझे,
जो सेवक कारज सीझे रे. स० कुं० ४
मनमेळु थई मन न मेळो,
ग्रहे आवी मत अवहेलो रे; स०
तुमे जाणो छो ए करुं लीला,
पण अरथी सद्दहे केरिसाला रे. स० कुं० ५
प्रभुचरण सरोरुह रहेवुं,
फळप्राप्ति लहेण देवुं रे; स०
कवि रूप विबुध जयकारी,
कहे मोहन जिन बलिहारी रे. स० कुं० ६

(१८) श्री अरनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

धरम परम अरनाथनो, केम जाणुं भगवंत रे;
स्वपर समय समजावीए, महिमावंत महंत रे. ध० १

शुद्धातम अनुभव सदा, स्वसमय एह विलास रे;
परबडी छांहडी जेह पडे, ते परसमय निवास रे. ध० २

तारा नक्षत्र ग्रह चंदनी, ज्योति दिनेश मझार रे;
दर्शन ज्ञान चरण थकी, शक्ति निजातम धार रे. ध० ३

भारी पीळो चीकणो, कनक अनेक तरंग रे;
पर्यायदृष्टि न दीजीए, एक ज कनक अभंग रे. ध० ४

दरशन ज्ञान चरण थकी, अलख स्वरूप अनेक रे;
निर्विकल्प रस पीजीए, शुद्ध निरंजन एक रे. ध० ५

परमारथ पंथ जे कहे, ते रंजे एक तंत रे;
व्यवहारे लख जे रहे, तेहना भेद अनंत रे. ध० ६

व्यवहारे लखे दोहिला, कांई न आवे हाथ रे;
शुद्ध नय थापना सेवतां, नवि रहे दुविधा साथ रे. ध० ७

एकपखी लखी प्रीतिने, तुम साथे जगनाथ रे;
कृपा करीने राखजो, चरण तळे ग्रही हाथ रे. ध० ८

चक्री धरम तीरथतणो, तीरथ फळ [1]ततसार रे;
तीरथ सेवे ते लहे, आनंदघन निरधार रे. ध० ९

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

प्रणमो श्री अरनाथ, शिवपुर साथ खरोरी;
त्रिभुवन जन आधार, भवनिस्तार करोरी. १

---

१. तत्त्वसार

कर्ता कारण योग, कारज सिद्धि लहेरी;
कारण चार अनुप, कार्यार्थी तेह ग्रहेरी. २
जे कारण ते कार्य, थाये पूर्ण पदेरी;
उपादान ते हेतु, माटी घट ते वदेरी. ३
उपादानथी भिन्न, जे विण कार्य न थाये;
न हुवे कारजरूप, कर्तानें व्यवसाये. ४
कारण तेह निमित्त, चक्रादिक घट भावे;
कार्य तथा समवाय, कारण नियतने दावे. ५
वस्तु अभेद स्वरूप, कार्यपणुं न ग्रहेरी;
ते असाधारण हेतु, कुंभे स्थास लहेरी. ६
जेहनो नवि व्यापार, भिन्न नियत बहु भावी;
भूमि काल आकाश, घट कारण सद्भावी. ७
एह अपेक्षा हेतु, आगम मांही कह्योरी;
कारण पद उत्पन्न, कार्य थये न लह्योरी. ८
कर्ता आतम द्रव्य, कारज सिद्धिपणोरी;
निज सत्तागत धर्म, ते उपादान गणोरी. ९
योग समाधि विधान, असाधारण तेह वदेरी;
विधिआचरणा भक्ति, जेणे निज कार्य सधेरी. १०
नरगति पढम संघयण, तेह अपेक्षा जाणो;
निमित्ताश्रित उपादान, तेहने लेखे आणो. ११
निमित्त हेतु जिनराज, समता अमृत खाणी;
प्रभु अवलंबन सिद्धि, नियमा एह वखाणी. १२
पुष्ट हेतु अरनाथ, तेहने गुणथी हळीए;
रीझ भक्ति बहुमान, भोग ध्यानथी मळीए. १३

मोटाने [१]उत्संग, बेठाने शी चिंता;
तिम प्रभु चरण पसाय, सेवक थया निचिंता. १४
अरप्रभु प्रभुता रंग, अंतर शक्ति विकासी;
देवचंद्रने आनंद, अक्षय भोग विलासी. १५

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(आसणरा योगी—ए देशी)

श्री अरजिन भवजलनो तारु, मुज मन लागे वारु रे;
मनमोहन स्वामी.
बांह्य ग्रही ए भवजल तारे[२], आणे शिवपुर आरे रे. मन० १

तप जप मोह महा तोफाने, नाव न चाले माने रे; म०
पण नवि भय मुज हाथोहाथे, तारे ते छे साथे रे. मन० २

भगतने स्वर्ग स्वर्गथी अधिकुं, ज्ञानीने फल देई रे; म०
काया कष्ट विना फल लहीए, मनमां ध्यान धरेइ रे. मन० ३

जे उपाय बहुविधनी रचना, योगमाया ते जाणो रे; म०
शुद्ध द्रव्य गुण पर्याय ध्याने, शिव दिये प्रभु [३]सपराणो रे. मन० ४

प्रभु पद वळग्या ते रह्या ताजा, अलगा अंग न साजा रे; म०
वाचकयश कहे अवर न ध्याउं ए प्रभुना गुण गाउं रे. मन० ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(भटीआणीनी देशी)

अरनाथ अविनाशी हो सुविलासी, खासी चाकरी,
कांई चाहुं अमे निशदिश;

---

१. खोळामां, २. पाठांतर : भविजन तारे, ३. पराणे, अवश्य

अंतराय ने रागे हो अनुरागे किणपरे कीजीए,
कांई शुभ भावे सुजगीश. अ० १
सिद्ध स्वरूपी स्वामी हो गुणधामी अलख अगोचरु,
कांई दीठा विण दीदार;
किम पतीजे कीजे हो किम लीजे फळ सेवा तणुं,
कांई दीसे न प्राण-आधार. अ० २
ज्ञान विना कुण पेखे हो संखेपे सूत्रे सांभळयो,
कांई अथवा प्रतिमा रूप;
सामे जो संपेखुं हो प्रभु देखुं दिलभर लोयणे,
कांई तो मनमें हुवे चूप. अ० ३
जगनायक जिनराया हो मन भाव्या मुज आवी मळया,
कांई महेर करी महाराज;
सेवक तो ससनेही हो निःसनेही प्रभु किम कीजीए,
कांई इस कोई वहीए रे लाज. अ० ४
भक्ति गुणे भरमावी हो समजावी प्रभुजीने भोळवी,
कांई देखु हृदय मोझार;
तो कहेजो साबाशी हो प्रभु भासी जाणी सेवता,
कांई ए अमचो एक तार. अ० ५
पाणी खीरने मेळे हो किण खेले एकांत होई रहुं,
कांई नहि रे मिलणनो जोग;
जो प्रभु देखुं नयणे हो कही वयणे समजावुं सही,
कांई ते न मिले संजोग. अ० ६
मनमेळु किम रीझे हो शुं कीजे अंतराय एवडो,
कांई निपट नहेजा नाथ;
सातराजने अंते हो किण पाखे ते आवीने मळुं,
कांई विकट तुमारोजी पाथ. अ० ७

ओळग ए अनुभवनी हो मुज मननी वार्ता सांभळी,
कांई कीजे आजे निवाज;
रूप विबुधनो मोहन हो मनमोहन सांभळ विनति,
कांई दीजे शिवपुर राज. अ०८

---

(१९) श्री मल्लिनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(राग—काफी)

सेवक किम अवगणिये हो मल्लिजिन, एह अब शोभा सारी;
अवर जेहने आदर अति दीए, तेहने भूल निवारी. हो म०१

ज्ञान स्वरूप अनादि तमारुं, ते लीधुं तमे ताणी;
जुओ अज्ञान दशा रिसावी, जातां काण न आणी. हो म०२

निद्रा सुपन जागर उजागरता, [१]तुरीय अवस्था आवी;
निद्रा सुपन दशा रिसाणी, जाणी न नाथ मनावी. हो म०३

समकित साथे सगाई कीधी, सपरिवारशुं गाढी;
मिथ्यामति अपराधण जाणी, घरथी बाहिर काढी. हो म०४

हास्य अरति रति शोक दुगंछा, भय पामर [२]करसाली;
नोकषाय श्रेणी गज चढतां, श्वान तणी गति [३]झाली. हो म०५

रागद्वेष अविरतिनी परिणति, ए चरणमोहना योद्धा;
वीतराग परिणति परिणमतां, ऊठी नाठा [४]बोद्धा. हो म०६

वेदोदय कामा परिणामा, काम्य करम सहु त्यागी;
निष्कामी करुणारस सागर, अनंत चतुष्क पद पागी. हो म०७

---

१. चोथी, २. कृषिनी आली-पंक्ति, पुरुष-स्त्री-नपुंसकवेद, ३. थई, ४. मूर्ख

दान विघन वारी सहु जनने, अभय दान पद दाता;
लाभ विघन जग विघन निवारक, परम लाभरस माता. हो म० ८

वीर्य विघन पंडित वीर्ये हणी, पूरण पदवी योगी;
भोगोपभोग दोय विघन निवारी, पूरण भोग सुभोगी. हो म० ९

ए अढार दूषण वर्जित तनु, मुनिजन वृंदे गाया;
अविरति रूपक दोष निरूपण, निर्दूषण मन भाया. हो म० १०

इण विध परखी मन विशरामी, जिनवरगुण जे गावे;
दीनबंधुनी महेर नजरथी, आनंदघन पद पावे. हो म० ११

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(देखी कामिनी दोय–ए देशी)

मल्लिनाथ जगनाथ, चरणायुग ध्याईए रे. च०
शुद्धातम प्राग्भाव, परम पद पाईए रे, प०
साधक कारक षट्क, करे गुण साधना रे, क०
तेहिज शुद्ध स्वरूप, थाये निराबाधना रे. था० १

कर्ता आतमद्रव्य, कारज निज सिद्धता रे, का०
उपादान परिणाम, प्रयुक्त ते करणता रे; प्र०
आतम संपद् दान, तेह संप्रदानता रे, ते०
दाता पात्र ने देय, त्रिभाव अभेदता रे. त्रि० २

स्वपर विवेचन करण, तेह अपादानथी रे, ते०
सकल पर्याय आधार, संबंध आस्थानथी रे; सं०
बाधक कारक भाव, अनादि निवारवा रे, अ०
साधकता अवलंबी, तेह समारवा रे. ते० ३

शुद्धपणे पर्याय, प्रवर्त्तन कार्यमें रे, प्र०
कर्त्तादिक परिणाम, ते आतम धर्ममें रे; ते०

चेतन चेतन भाव, करे [१]समवेतमें रे, क॰
सादि अनंतो काल, रहे निज [२]खेतमें रे. र॰ ४

पर कर्तृत्व स्वभाव, करे [३]तांलगी करे रे, क॰
शुद्ध कार्य रुचि भास, थये नवि आदरे रे; थ॰
शुद्धातम निज कार्य, रुचे कारक फिरे रे, रु॰
तेहि ज मूल स्वभाव, ग्रहे निज पद वरे रे. ग्र॰ ५

कारण कारजरूप, अछे कारक दशा रे, अ॰
वस्तु प्रगट पर्याय, एह मनमें वस्या रे; ए॰
पण शुद्ध स्वरूप ध्यान, ते चेतनता ग्रहे रे, ते॰
तव निज साधक भाव, सकल कारक लहे रे. स॰ ६

माहरुं पूर्णानंद, प्रगट करवा भणी रे, प्र॰
पुष्टालंबन रूप, सेव प्रभुजी तणी रे; से॰
देवचंद्र जिनचंद्र, भक्ति मनमें धरो रे, भ॰
अव्याबाध अनंत, अक्षय पद आदरो रे. अ॰ ७

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(नाभिरायांके बाग—ए देशी)

तुज मुज रीझनी रीत, अटपट एह खरीरी;
लटपट नावे काम, खटपट भांज परीरी. १

मल्लिनाथ तुज रीझ, जन रीझे न हुएरी;
दोय रीझणनो उपाय, साहमुं कां न जुएरी. २

दुराराध्य छे लोक, सहुने सम न [४]शशीरी;
एक दुहवाए गाढ, जो एक बोले हसीरी. ३

---

१. समवाय संबंधमां, २. क्षेत्रमां, ३. त्यां सुधी, ४. चंद्र

लोक लोकोत्तर वात, रीझ छे दोय जुईरी;
तात चक्त [1]धुर पूज्य, चिंता एह हुईरी. ४
रीझववो एक [2]सांई, लोक ते वात करेरी;
श्री नयविजय सुशिष्य, एहि ज चित्त धरेरी. ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

सुगुरु सुणी उपदेश, ध्यायो दिलमें धरी हो लाल, ध्या०
कीधी भक्ति अनंत, चवी चवी चातुरी हो लाल; च०
सेव्यो रे विश्वावीश, ऊलट धरी उल्लस्यो हो लाल, ऊ०
दीठो नवि दीदार, कां न किण हीलस्यो हो लाल. कां० १

परमेश्वरशुं प्रीत, कहो किम कीजीए हो लाल, क०
नीमख न मेले मीट, दोष किण दीजीए हो लाल; दो०
को न करे तकसीर, सेवामां साहिबा हो लाल, से०
कीजे न छोकरवाद, भगत भरमाववा हो लाल. भ० २

जाण्युं तमारुं जाण, पुरुषे न पारखुं हो लाल, पु०
सुगुण निर्गुणनो राह, करो शुं सारिखुं हो लाल; क०
दीधे दिलासे दीन–दयाळ कहावशो हो लाल, द०
करुणारसभंडार, बिरुद किम पावशो हो लाल. बि० ३

शुं नीपज्या तुमे सिद्ध, सेवकने अवगणी हो लाल, से०
भाखो अविहड प्रीत, जावा द्यो भोळामणी हो लाल; जा०
जो कोई राखे राग, नीराग न राखीए हो लाल, नी०
गुण अवगुणनी वात, करी प्रभु दाखीए हो लाल. क० ४

अमचा[3] दोष हजार, तिके[4] मत भाळजो हो लाल, ति०
तुमे छो चतुरसुजाण, प्रीतम गुण पाळजो हो लाल; प्री०

१.प्रथम, २. स्वामी, प्रभु. ३. अमारा, ४. तेमने

मल्लिनाथ महाराज, म राखो आंतरो हो लाल, म०
द्यो दरिशण दिल धार, मिटे ज्युं आंतरो हो लाल. मि० ५

मन मंदिर महाराज, विराजो दिल मळी हो लाल, वि०
चंदातप जिम कमळ, हृदय विकसे कळी हो लाल; हृ०
रूप विबुध सुपसाय, करो अम रंग रळी हो लाल, क०
कहे मोहन कविराय, सकळ आशा फळी हो लाल. स० ६

---

(२०) श्री मुनिसुव्रत स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(राग काफी, आघा आम पधारो पूज्य–ए देशी)

मुनिसुव्रत जिनराय, एक मुज विनति निसुणो.
आतमतत्त्व क्युं[1] जाण्युं जगतगुरु,
एह विचार मुज कहियो;
आतमतत्त्व जाण्या विण निर्मल,
चित्त समाधि नवि लहियो. मुनिसुव्रत० १

कोई अबंध आतमतत्त[2] माने, किरिया करतो दीसे;
क्रियातणुं फल कहो कुण भोगवे, इम पूछ्युं चित्त रीसे. मु० २

जड चेतन ए आतम एक ज, स्थावर जंगम सरीखो;
दुःख सुख [3]संकर दूषण आवे, चित्त विचारी जो परीखो. मु० ३

एक कहे नित्य ज आतमतत्त, आतम दरिशण लीनो;
कृत विनाश अकृतागम दूषण, नवि देखे मतिहीणो. मु० ४

सौगत मत रागी कहे वादी, क्षणिक ए आतम जाणो;
बंध-मोक्ष सुख-दुःख न घटे, एह विचार मन आणो. मु० ५

१. केम, शी रीते, २. आत्मतत्त्व, ३. एक प्रकारनो दोष.

भूत चतुष्क वर्जित आतमतत्त, सत्ता अळगी न घटे;
अंध शकट जो नजर न देखे, तो शुं कीजे शकटे ? मु० ६

एम अनेक वादी मत विभ्रम, संकट पडियो न लहे;
चित्त समाधि ते माटे पूछुं, तुम विण तत्त कोइ न कहे. मु० ७

वळतुं जगगुरु इणिपेरे भाखे, पक्षपात सब छंडी;
रागद्वेष मोह पख वर्जित, आतमशुं रढ मंडी. मु० ८

आतम ध्यान करे जो कोउ, सो फिर इणमें नावे;
वागजाल बीजुं सहु जाणे, एह तत्त्व चित्त लावे. मु० ९

जिणे विवेकधरी ए पख ग्रहियो, ते तत्तज्ञानी कहिये;
श्री मुनिसुव्रत कृपा करो तो, आनंदघन पद लहिये. मु० १०

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(ओलगडी ओलगडी सहेली हो श्री श्रेयांसनी रे—ए देशी)

ओलगडी तो कीजे श्री मुनिसुव्रत स्वामीनी रे,
जेहथी निज पद सिद्धि;
केवल केवल ज्ञानादिक गुण उल्लसे रे,
लहीए सहज समृद्धि. ओ० १

उपादान उपादान निज परिणति वस्तुनी रे,
पण कारण निमित्त आधीन;
पुष्ट अपुष्ट दुविध ते उपदिश्यो रे,
ग्राहक विधि आधीन. ओ० २

साध्य साध्य धर्म जे मांही हुवे रे,
ते निमित्त अति पुष्ट;

पुष्प पुष्प मांही तिलवासक वासना रे,
नवि प्रध्वंसक दुष्ट. ओ० ३

दंड दंड निमित्त अपुष्ट घडा तणो रे,
नवि घटता तसुमांही;
साधक साधक प्रध्वंसकता अछे रे,
तिणे नहि नियत प्रवाह. ओ० ४

षट्कारक षट्कारक ते कारण कार्यनां रे,
जे कारण स्वाधीन;
ते कर्ता ते कर्ता सहु कारक ते वसु रे,
कर्म ते कारण पीन. ओ० ५

कार्य कार्य संकल्पे कारक दशा रे,
छती सत्ता सद्भाव;
अथवा अथवा तुल्य धर्मने जोयवे रे,
साध्यारोपण दाव. ओ० ६

अतिशय अतिशय कारण कारक करणता रे,
निमित्त अने उपादान;
संप्रदान संप्रदान कारण पद भवनथी रे,
कारण व्यय अपादान. ओ० ७

भवन भवन व्यय विणु कारज नवि हुवे रे,
जिम दृषदे न घटत्व;
शुद्धाधार शुद्धाधार स्वगुणनुं द्रव्य छे रे,
सत्ताधार सुतत्त्व. ओ० ८

आतम आतम कर्ता कारज सिद्धता रे,
तसु साधन जिनराज;

प्रभु दीठे प्रभु दीठे कारजरुचि ऊपजे रे,
प्रगटे आत्म समाज. ओ॰९

वंदन वंदन सेवन नमन वळी पूजना रे,
स्मरण स्तवन वळी ध्यान;
देवचंद्र देवचंद्र कीजे जिनराजनी रे,
प्रगटे पूर्ण निधान. ओ॰१०

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

मुनिसुव्रत जिन वंदतां, अति उल्लसित तन मन थाय रे;
वदन अनोपम नीरखतां, मारां भवभवनां दुःख जाय रे.
मारां भवभवनां दुःख जाय, जगतगुरु जागतो सुखकंद रे;
सुखकंद अमंद आणंद, परम गुरु दीपतो सुखकंद रे. १

निशि दिन सूतां जागतां, हइडाथी न रहे दूर रे;
जब उपगार संभारीए, तव ऊपजे आनंद पूर रे.
त॰ज॰सु॰२

प्रभु उपकार गुणे भर्या, मन अवगुण एक न माय रे;
गुण गुण अनुबंधी हुआ, ते तो अक्षय भाव कहाय रे.
ते॰ज॰ सु॰३

अक्षय पद दिये प्रेम जे, प्रभुनुं ते अनुभव रूप रे;
अक्षर स्वर गोचर नहीं, ए तो अकल अमाप अरूप रे.
ए॰ज॰सु॰४

अक्षर थोडा गुण घणा, सज्जनना ते न लिखाय रे;
वाचक यश कहे प्रेमथी, पण मनमांहे परखाय रे.
प॰ज॰सु॰५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(हो पियु पंखीडा–ए देशी)

हो प्रभु मुज प्यारा, न्यारा थया केई रीत जो,
ओळगुआने आलालुंबन ताहरो रे लो;
हो॰भक्तवच्छल भगवंत जो,
आई वसो मन मंदिर साहिब माहरे रे लो. १

हो॰खीण न वीसरुं तुज जो,
तंबोळीना पत्र तणी पेरे फेरतो रे लो;
हो॰लागी मुजने (ताहरी) माया जोर जो,
दीणयरवासी सुसाहिब तुमने हेरतो रे लो. २

हो॰तुं निःसनेही जिनराय जो,
एकपखी प्रीतलडी किणपरे राखीए रे लो;
हो॰अंतरगतिनी महाराज जो,
वातलडी विण साहिब केहने दाखीए रे लो. ३

हो॰ अलखरूप थई आप जो,
जाई वस्यो शिवमंदिर मांहे तुं जई रे लो;
हो॰लाध्यो तुमारो भेद जो,
सूत्र सिध्धांतगतिने साहिब तुमे लही रे लो. ४

हो॰जगजीवन जिनराय जो,
मुनिसुव्रत जिन मुजरो मानजो माहरो रे लो;
हो॰पय प्रणमी जिनराय जो,
भव भव शरणो साहिब स्वामी ताहरो रे लो. ५

हो॰राखशुं हृदय मोझार जो,
आपो शामळीआ द्यो पदवी ताहरी रे लो;

हो० रूपविजयनो शिष्य जो,
मोहनने मन लागी माया ताहरी रे लो. ६

(२१) श्री नमिनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

षट् दरिशण जिन अंग भणीजे, न्यासषडंग जो साधे रे;
नमि जिनवरना चरण उपासक, षट्‌ दरिशण आराधे रे. ष० १

जिन सुरपादप पाय वखाणुं, सांख्य जोग दोय भेदे रे;
आतमसत्ता विवरण करतां, लहो दुग अंग अखेदे रे. ष० २

भेद अभेद सौगत मीमांसक, जिनवर दोय कर भारी रे;
लोकालोक अवलंबन भजीए, गुरुगमथी अवधारी रे. ष० ३

लोकायतिक कूख जिनवरनी, अंश विचारी जो कीजे रे;
तत्त्व विचार सुधारसधारा, गुरुगम विण केम पीजे रे ? ष० ४

जैन जिनेश्वर वर उत्तम अंग, अंतरंग बहिरंगे रे;
अक्षर न्यास धरा आराधक, आराधे धरी संगे रे. ष० ५

जिनवरमां सघळां दरिशण छे, दर्शने जिनवर भजना रे;
सागरमां सघळी तटिनी सही, तटिनीमां सागर भजना रे. ष० ६

जिनस्वरूप थई जिन आराधे, ते सही जिनवर होवे रे;
भृंगी इलिकाने चटकावे, ते भृंगी जग जोवे रे. ष० ७

चूर्णी भाष्य सूत्र निर्युक्ति, वृत्ति परंपर अनुभव रे;
समय पुरुषनां अंग कह्यां ए, जे छेदे ते दुर्भवि रे. ष० ८

मुद्रा बीज धारणा अक्षर, न्यास अरथ विनियोगे रे;
जे ध्यावे ते नवि वंचीजे, क्रिया अवंचक भोगे रे. ष० ९

श्रुत अनुसार विचारी बोलुं, सुगुरु तथाविधि न मिलेरे;
किरिया करी नवि साधी शकीए, ए विषवाद चित्त सघळे रे. ष० १०

ते माटे ऊभा कर जोडी, जिनवर आगळ कहीए रे;
समय चरण सेवा शुद्ध देजो, जिम आनंदघन लहीए रे. ष० ११

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

श्री नमि जिनवर सेव, [१]घनाघन उनम्यो रे, घ०
दीठां [२]मिथ्यारोर, भविक चित्तथी [३]गम्यो रे; भ०
शुचि आचरणा रीति, ते [४]अभ्र वधे वडा रे, ते०
आतम परिणति शुद्ध, ते वीज झबूकडा रे. ते० १

वाजे वाय सुवाय, ते पावन भावना रे, ते०
इंद्र धनुष त्रिक योग, ते भक्ति इकमना रे; ते०
निर्मळ प्रभु-स्तवघोष, ध्वनि घनगर्जना रे, ध्व०
तृष्णा ग्रीष्म काळ, तापनी तर्जना रे. ता० २

शुभ लेश्यानी आलि, ते बगपंक्ति बनी रे, ते०
श्रेणी सरोवर हंस, वसे शुचि गुण मुनि रे; व०
चउगति मारग बंध, भविक [५]जन घर रह्या रे, भ०
चेतन समता संग, रंगमें उमह्या रे. रं० ३

सम्यग्दृष्टि मोर, तिहां हरखे घणुं रे, ति०
देखी अद्‌भुत रूप, परम जिनवर तणुं रे, प०
प्रभुगुणनो उपदेश, ते जलधारा वही रे, ते०
धरम रुचि चित्तभूमि, मांहि निश्चल रही रे. मां० ४

---

१. मेह, २. मिथ्यात्वरूपी दुकाळ, ३. गयो, ४. वादळा, ५. पाठां—निज

चातक श्रमण समूह, करे तव पारणो रे, क०
अनुभव रस आस्वाद, सकल दुःख वारणो रे; स०
अशुभाचार निवारण, तृण अंकुरता रे, तृ०
विरतितणां परिणाम, ते बीजनी पूरता रे. ते० ५

पंच महाव्रत धान्य, तणां कर्षण वध्यां रे, त०
साध्यभाव निज थापी साधनताए सध्यां रे, सा०
क्षायिक दरिशण ज्ञान, चरणगुण ऊपन्या रे, च०
आदिक बहुगुण [1]सस्य, आतमघर नीपन्या रे. आ० ६

प्रभु दरिशण महामेह, तणे परवेशमें रे, त०
परमानंद सुभिक्ष, थयो मुज देशमें रे; थ०
देवचंद्र जिनचंद्र, तणो अनुभव करो रे, त०
सादि अनंतो काळ, आतमसुख अनुसरो रे. आ० ७

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

श्री नमिजिननी सेवा करतां, अलिय[2] विघन सवि दूर नासेजी;
अष्ट महासिध्धि नवनिधि लीला, आवे बहु महमूर[3] पासेजी.श्री० १

मयमत्ता[4] अंगण गज गाजे, राजे तेजी तुखार[5] ते चंगाजी;
बेटाबेटी बंधव जोडी, लहिये बहु अधिकार रंगाजी.श्री० २

वल्लभ संगम रंग लहीजे, अणवालहा होय दूर सहेजेजी;
वांछा तणो विलंब न दूजो, कारज सीझे भूरि सहेजेजी.श्री० ३

चंद्रकिरण उज्ज्वल यश उलसे, सूरजतुल्य प्रतापी दीपेजी;
जे प्रभुभक्ति करे नित्य विनये, ते अरियण[6] बहु प्रतापी झीपेजी.श्री० ४

---

१. धान्य. २. खोटा, ३. संपत्तिना प्रकार, ४. मदोन्मत्त, ५. चालाक घोडा, ६. शत्रु.

मंगलमाला[१] लच्छी विशाला[२], बाला बहुले प्रेम रंगेजी;
श्रीनयविजय विबुध पयसेवक, कहे लहीए सुखप्रेम अंगेजी.श्री० ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(आसणरा रे योगी—ए देशी)

आज नमि जिनराजने कहीए,
मीठे वचने प्रभु मन लहीए रे, सुखकारी साहेबजी;
प्रभु छो नीपट निःसनेही नगीना,
तो हियडे छुं सेवक आधीना रे, सुखकारी साहेबजी. १

सुनजर करशो तो वरशो वडाई,
शुं कहेशे प्रभुने लडाई रे; सु०
तुमे अमने करशो मोटा,
कुण कहेशे प्रभु तुमे छोटा रे ? सु० २

निःशंक थई शुभ वचन कहेशो,
जग शोभा अधिकी लहेशो रे; सु०
अमे तो रह्या छीए तुमने राची,
रखे आप रहो मन खांची रे. सु० ३

अमे तो किशुं अंतर नवि राखुं,
जे होवे हृदय कही दाखुं रे; सु०
गुणी जन आगळ गुण कहेवाये,
जे वारे प्रीत प्रमाणे थाये रे. सु० ४

विषधर[३] ईशहृदये[४] लपटाणो,
तेहवो अमने मिळयो छे टाणो रे; सु०

१. कल्याणनी श्रेणीओ, २. विशाळ लक्ष्मी, ३. सर्प, ४. शंकरनी छाती उपर

निरवहेशो जो प्रीत अमारी,
कळि[1] कीरत[2] थाशे तमारी रे. सु० ५

धुत्ताई चित्तडे नवि धरशो,
कांई अवळो विचार न करशो रे; सु०
जिमतिम करी सेवक जाणजो,
अवसर लही सुध लहेजो रे. सु० ६

आ समे कहीए छीए तुमने,
प्रभु दीजे दिलासो अमने रे; सु०
मोहनविजय सदा मनरंगे,
चित्त लाग्यो प्रभुने संगे रे. सु०७

---

(२२) श्री नेमिनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(राग मारुणी—धनरा ढोला—ए देशी)

अष्टभवांतर वालही रे, तुं मुज आतमराम, मनरावाला;
मुक्ति स्त्रीशुं आपणे रे, सगपण कोई न काम. म० १

घर आवो हो वालम घर आवो, मारी आशाना विशराम; म०
रथ फेरो हो साजन रथ फेरो, साजन मारा मनोरथ साथ. म० २

नारी पखो शो नेहलो रे, साच कहे जगनाथ; म०
ईश्वर[3] अर्धांगे धरी रे, तुं मुज झाले न हाथ. म० ३

पशुजननी करुणा करी रे, आणी हृदय विचार; म०
माणसनी करुणा नहीं रे, ए कुण घर आचार. म० ४

---

१. कळिकाळमां, २. कीर्ति, ३. महादेव, शंकर

प्रेम कल्पतरु छेदियो रे, धरियो जोग धतूर; म०
चतुराईरो कुण कहो रे, गुरु मिलियो जगसूर. म० ५

मारुं तो एमां क्युंही नहीं रे, आप विचारो राज; म०
राजसभामां बेसतां रे, किसडी[१] बधसी लाज. म० ६

प्रेम करे जग जन सहु रे, निर्वाहे ते ओर; म०
प्रीत करीने छोडी दे रे, तेहशुं न चाले जोर. म० ७

जो मनमां एहवुं हतुं रे, निसपत[२] करत न जाण; म०
निसपत करीने छांडता रे, माणस हुवे नुकसान. म० ८

देतां दान संवत्सरी रे, सहु लहे वांछित पोष; म०
सेवक वांछित नवि लहे रे, ते सेवकनो दोष. म० ९

सखी कहे ए शामळो रे, हुं कहुं लक्षण [३]सेत; म०
इण लक्षण साची सखी रे, आप विचारो हेत. म० १०

रागीशुं रागी सहु रे, वैरागी श्यो राग; म०
राग विना किम दाखवो रे, मुक्ति सुंदरी माग ? म० ११

एक गुह्य घटतुं नथी रे, सघलोई जाणे लोक; म०
अनेकांतिक भोगवो रे, ब्रह्मचारी गत रोग. म० १२

जिण जोणी[४] तुमने जोउं रे, तिण जोणी जोवो राज; म०
एक वार मुजने जुओ रे, तो सीझे मुज काज. म० १३

मोहदशा धरी भावना रे, चित्त लहे तत्त्वविचार; म०
वीतरागता आदरी रे, प्राणनाथ निरधार. म० १४

सेवक पण ते आदरे रे, तो रहे सेवक [५]माम; म०
आशय साथे चालीए रे, एही ज रूडुं काम. म० १५

---

१. कोनी लाज-शोभा वधशे ? २. संबंध, ३. श्वेत, ४. दृष्टि, ५. लाज

त्रिविध योग धरी आदर्यो रे, नेमिनाथ भरतार; म०
धारण पोषण तारणो रे, नवरस मुक्ताहार. म०१६
कारणरूपी प्रभु भज्यो रे, गण्यो न काज अकाज; म०
कृपा करी मुज दीजीए रे, आनंदघन पदराज. म०१७

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(पद्मप्रभ जिन जई अलगा वस्या—ए देशी)

नेमि जिणेसर निज कारज कर्युं, छांड्यो सर्व विभावोजी;
आतमशक्ति सकल प्रगट करी, आस्वाद्यो निज भावोजी.ने०१
राजुल नारी रे सारी मति धरी, अवलंब्या अरिहंतोजी;
उत्तम संगे रे उत्तमता वधे, सधे आनंद अनंतोजी.ने०२
धर्म अधर्म आकाश अचेतना, ते विजाति अग्राह्योजी;
पुद्गल ग्रहवे रे कर्म कलंकता, वाधे बाधक बाह्योजी.ने०३
रागी संगे रे राग दशा वधे, थाये तिणे संसारोजी;
नीरागीथी रे रागनुं जोडवुं, लहीए भवनो पारोजी.ने०४
अप्रशस्तता रे टाळी प्रशस्तता, करतां आस्त्रव नासेजी;
संवर वाधे रे साधे निर्जरा, आतमभाव प्रकाशेजी.ने०५
नेमि प्रभु ध्याने रे एकत्वता, निज तत्त्वे एकतानोजी;
शुक्ल ध्याने रे साधी सुसिद्धता, लहिये मुक्ति निदानोजी.ने०६
अगम अरूपी रे अलख अगोचरु, परमातम परमीशोजी;
देवचंद्र जिनवरनी सेवना, करतां वाधे जगीशोजी.ने०७

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

तोरणथी रथ फेरी गया रे हां,
पशुआं शिर देई दोष मेरे वालमा;

नव भव नेह निवारियो रे हां,
श्यो जोई आव्या जोष; मे० तो० १

चंद्र कलंकी जेहथी रे हां,
राम ने सीता वियोग; मे०
तेह कुरंगने[१] वयणडे[२] रे हां,
पति आवे[३] कुण लोग. मे० तो० २

उतारी हुं चित्तथी रे हां,
मुक्ति धुतारी हेत; मे०
सिद्ध अनंते भोगवी रे हां,
तेहश्युं कवण संकेत. मे० तो० ३

प्रीत करंतां सोहिली रे हां,
निरवहेतां जंजाळ; मे०
जेहवो व्याल[४] खेलाववो रे हां,
जेहवी अगननी झाळ. मे० तो० ४

जो विवाह अवसरे दियो रे हां,
हाथ उपर नवि हाथ; मे०
दीक्षा अवसर दीजीए रे हां,
शिर उपर जगनाथ. मे० तो० ५

इम विलवती राजुल गई रे हां,
नेमि कने व्रत लीध; मे०
वाचक यश कहे प्रणमिये रे हां,
ए दंपती दोय सिद्ध. मे० तो० ६

---

१. हरणना, २. वचनथी, ३. विश्वास करे. ४. सर्प

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(दक्षिण दोहिलो हो राज—ए देशी)

कां रथ वाळो हो राज, सामुं निहाळो हो राज,
प्रीत संभाळो रे वहाला यदुकुळ सेहरा;
जीवन मीठा हो राज, मत होजो धीठा हो राज,
दीठा अळजे रे वहाला निवहो नेहरा. १

नवभव भज्जा हो राज, तिहां शी लज्जा हो राज ?
तजत भज्जा रे कांसे रणका वाजीआ;
शिवादेवी जाया हो राज, मानी ल्यो माया हो राज,
किमहीक पाया रे वहाला मधुकर राजीआ. २

सुणी हरणीनो हो राज, वचन कामिनीनो हो राज,
सही तो बीहनो रे वहालो आघो आवतां;
कुरंग कहाणा हो राज, चूक न टाणा हो राज,
जाणो वहाला रे देखी वर्गविरंगता. ३

विण गुन्हे अटकी हो राज, छांडो मा छटकी हो राज,
कटकी न कीजे हो वहाला कीडी उपरे;
रोष निवारो हो राज, महेले पधारो हो राज,
कांई विचारो वहाला डाबुं जीमणुं. ४

ए शी हांसी हो राज, होय विखासी हो राज,
जुओ विमासी रे अतिशे रोष न कीजीए;
आ चित्रशाळी हो राज, सेज सुंवाळी हो राज,
वात हेताळी रे वहाला महारस पीजीए. ५

मुक्ते वहिता हो राज, सामान्य वनिता हो राज,
तजी परिणीता रे वहाला कां तुमे आदरो ?

तुमने जे भावे हो राज, कुण समजावे हो राज,
किम करी आवे रे ताण्यो कुंजर पाधरो ? ६

वचने न भीनो हो राज, नेम नगीनो हो राज,
परम खजानो रे वहाला नाण अनुपनो;
व्रत शिव स्वामी हो राज, राजुल पामी हो राज,
कहे हित कामी रे मोहन रूप अनुपनो. ७

---

(२३) श्री पार्श्वनाथ स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(राग सारंग, रसियानी देशी)

ध्रुवपद रामी हो स्वामी माहरा, निःकामी गुणराय, सुज्ञानी;
निजगुण कामी हो पामी तुं धणी, ध्रुव आरामी हो थाय. सु० ध्रु० १

सर्वव्यापी कहो सर्व जाणंगपणे, परपरिणमन स्वरूप; सु०
पररूपे करी तत्त्वपणुं नहीं, स्वसत्ता चिद्‌रूप. सु० ध्रु० २

ज्ञेय अनेके हो ज्ञान अनेकता, जलभाजन रवि जेम; सु०
द्रव्य एकत्वपणे गुण एकता, निजपद रमता हो खेम. सु० ध्रु० ३

परक्षेत्रे गत ज्ञेयने जाणवे, परक्षेत्र थयुं ज्ञान; सु०
अस्तिपणुं निज क्षेत्रे तुमे कह्युं, निर्मलता गुण मान. सु० ध्रु० ४

ज्ञेय विनाशे हो ज्ञान विनश्वरु, काळ प्रमाणे रे थाय; सु०
स्वकाळे करी स्वसत्ता सदा, ते पर रीते न जाय. सु० ध्रु० ५

परभावे करी परता पामता, स्वसत्ता थिर ठाण; सु०
आत्म चतुष्कमयी परमां नहीं, तो किम सहुनो रे जाण. सु० ध्रु० ६

अगुरुलघु निज गुणने देखतां, द्रव्य सकल देखंत; सु०
साधारण गुणनी साधर्म्यता, दर्पण जलने दृष्टांत. सु० ध्रु० ७

श्री पारसजिन पारस रस समो, पण इहां पारस[1] नांहि; सु०
पूरण रसीओ हो निजगुण [2]परसनो, आनंदघन मुजमांहि. सु० ध्रु०८

(२)

(शांतिजिन एक मुज विनति—ए देशी)

पासजिन ताहरा रूपनुं, मुज प्रतिभास केम होय रे;
तुज मुज सत्ता एकता, अचल विमल अकल जोय रे. पा०१

मुज प्रवचन पक्षथी, निश्चय भेद न कोय रे;
व्यवहारे लखी देखीए, भेद प्रतिभेद बहु लोय रे. पा०२

बंध न मोक्ष नहि निश्चये, व्यवहारे भज दोय रे;
अखंडित अबाधित सोय कदा, नित अबाधित सोय रे. पा०३

अन्वय हेतु व्यतिरेकथी, अंतरो तुज मुज रूप रे;
अंतर मेटवा कारणे, आत्मस्वरूप अनुप रे. पा०४

आतमता परमात्मता, शुद्ध नय भेद एक रे;
अवर आरोपित धर्म छे, तेहना भेद अनेक रे. पा०५

धरमी धरमथी एकता, तेह मुज रूप अभेद रे;
एक सत्ता लखी एकता, कहे ते मूढमति खेद रे. पा०६

आतम धर्म अनुसरी, रमे जे आतमराम रे;
आनंदघन पदवी लहे, परमातम तस नाम रे. पा०७

(३)

प्रणमुं पदपंकज पार्श्वना, जस वासना अगम अनुप रे;
मोह्यो मन मधुकर जेहथी, पामे निज शुद्ध स्वरूप रे. प्र०१

१. पाषाणरूप पारस नहीं, २. आत्मगुणरूप पारसनो

पंक कलंक शंका नहीं, नहि खेदादिक दुःख दोष रे;
त्रिविध अवंचक जोगथी, लहे अध्यातम सुख पोष रे. प्र० २

दुरंदशा दूरे टळे, भजे मुदिता मैत्री भाव रे;
वरते नित्य चित्त मध्यस्थता, करुणामय शुद्ध स्वभाव रे. प्र० ३

निज स्वभाव स्थिर करी धरे, न करे पुद्गलनी खेंच रे;
साखी हुई वरते सदा, न कदी परभाव प्रपंच रे. प्र० ४

सहजदशा निश्चय जगे, उत्तम अनुभव रस रंग रे;
राचे नहीं परभावशु, निजभावशुं रंग अभंग रे. प्र० ५

निजगुण सब निजमां लखे, न चखे परगुणनी रेख रे;
खीर नीर विवरो करे, ए अनुभव हंसशुं पेख रे. प्र० ६

निर्विकल्प ध्येय अनुभवे, अनुभव अनुभवनी प्रीत रे;
ओर न कबहुं लखी शके, आनंदघन प्रीत प्रतीत रे. प्र० ७

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(कडखानी देशी)

सहज गुण आगरो, स्वामी सुख सागरो,
ज्ञान वयरागरो[1] प्रभु सवायो;
शुद्धता, एकता, तीक्ष्णता भावथी,
मोहरिपु जीती जय पडह वायो. स० १

वस्तु निज भाव, अविभास निकलंकता,
परिणति वृत्तिता करी अभेदे;
भाव तादात्म्यता शक्ति उल्लासथी,
संतति योगने तुं उच्छेदे. स० २

---

१. वयरागरो=वज्राकर, ज्ञानरूप वज्र रत्नी खाण, खजानो, केवलज्ञान निधान.

दोष गुण वस्तुनी, लखीय यथार्थता,
लही उदासीनता अपर भावे;
ध्वंसि तज्जन्यता भाव कर्तापणुं,
परम प्रभु तुं रम्यो निज स्वभावे. स० ३

शुभ अशुभ भाव, अविभास तहकीकता,
शुभअशुभ भाव तिहां प्रभु न कीधो;
शुद्ध परिणामता, वीर्य कर्ता थई,
परम अक्रियता अमृत पीधो. स० ४

शुद्धता प्रभु तणी आत्मभावे रमे,
परम परमात्मता तास थाये;
मिश्र भावे अछे त्रिगुणनी भिन्नता,
त्रिगुण एकत्व तुज चरण आये. स० ५

उपशम रस भरी, सर्व जन शंकरी,
मूर्ति जिनराजनी आज भेटी;
कारणे कार्यनिष्पत्ति श्रद्धान छे,
तिणे भवभ्रमणनी भीड मेटी. स० ६

नयर खंभायते, पार्श्र्व प्रभु दर्शने,
विकसते हर्ष उत्साह वाध्यो;
हेतु एकत्वता, रमण परिणामथी,
सिद्धि साधकपणो आज साध्यो. स० ७

आज कृतपुण्य धन्य दिह माहरो थयो,
आज नरजन्म में सफल भाव्यो;
देवचंद्र स्वामी त्रेवीशमो वंदीओ,
भक्तिभर चित्त तुज गुण रमाव्यो. स० ८

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(देखी कामिनी दोय–ए देशी)

वामानंदन जिनवर, मुनिमांहे वडो रे, के मु०
जिम सुरमांहि सोहे, सुरपति परवडो रे; के सु०
जिम गिरिमांहि सुराचल, मृगमांहे केसरी रे, के मृ०
जिम चंदन तरुमांहि, सुभटमांहि मुरअरि रे. के सु० १

नदीयमांहि जिम गंग, [१]अनंग सुरूपमां रे, के अ०
फूलमांहि [२]अरविंद, भरतपति भूपमां रे; के भ०
ऐरावत गजमांही, गरुड [३]खगमां यथा रे, के ग०
तेजवंतमांहि [४]भाण, वखाणमांहि जिनकथा रे. के व० २

मंत्रमांहि नवकार, रत्नमांहि सुरमणि रे, के रत्न०
सागरमांहि स्वयंभू,–रमण शिरोमणि रे; के रम०
शुक्लध्यान जिम ध्यानमां, अति निर्मलपणे रे, के अ०
श्रीनयविजय विबुध पय, सेवक इम भणे रे. के से० ३

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(कानुडो वेण वजावे रे, काळी नदीने कांठे–ए देशी)

वामानंदन हो प्राण थकी छो प्यारा,
नांही कीजे हो नयणथकी क्षण न्यारा.
पुरिसादाणी शामळ वरणो, शुद्ध समकितने भासे;
शुद्ध पुंज जिणे कीधो तेहने, उज्ज्वळ वरण प्रकाशे. वा० १

तुम चरणे विषधर पिण निरविष, दंसणे[५] थाये [६]बिडौजा;
जोतां अम शुद्धस्वभाव कां न हुवे, एह अमे ग्रह्या छोजा. वा० २

---

१. कामदेव, २. कमल, ३. पक्षी, ४. सूर्य, ५. दर्शनथी, ६. इन्द्र

कमठराय मद किण गिणतीमां, मोहतणो मद जोतां;
ताहरी शक्ति अनंती आगळ, केई केई मर गया गोतां. वा० ३

तें जिम तार्या तिम कुण तारे, कुण तारक कहुं एहवो;
सायर मान ते सायर सरिखो, तिम तुं पिण तुं जेहवो. वा० ४

किमपि न बेसो तुमे करुणाकर, तेह मुज प्राप्ति अनंती;
जेम पडे कण कुंजरमुखथी, कीडी बहु धनवंती. वा० ५

एक आवे एक मोजां पावे, एक करे ओळगडी;
निजगुण अनुभव देवा आगळ, पडखे नहि तुं बे घडी. वा० ६

जेहवी तुमथी माहरी माया, तेहवी तुमे पिण धरजो;
मोहनविजय कहे कवि रूपनो, परतक्ष करुणा करजो. वा० ७

---

(२४) श्री महावीर स्वामी

श्री आनंदघनजीकृत स्तवन

(राग—धन्याश्री)

वीरजीने चरणे लागुं, वीरपणुं ते मागुं रे;
मिथ्या मोहतिमिर भय भाग्युं, जीत नगारुं वाग्युं रे. वी० १

छउमथ्थ वीर्य लेश्या संगे, अभिसंधिज मति अंगे रे;
सूक्ष्म स्थूल क्रियाने रंगे, योगी थयो उमंगे रे. वी० २

असंख्य प्रदेशे वीर्य असंखे, योग असंखित कंखे रे;
पुद्‌गल गण तेणे ले सुविशेषे, यथाशक्ति मति लेखे रे. वी० ३

उत्कृष्टे वीर्यनिवेसे, योग क्रिया नवि पेसे रे;
योग तणी ध्रुवताने लेशे, आतमशक्ति न खेसे रे. वी० ४

काम वीर्य वशे जेम भोगी, तेम आतम थयो भोगी रे;
शूरपणे आतम उपयोगी, थाय तेहणे अयोगी रे. वी० ५

वीरपणुं ते आतम ठाणे, जाण्युं तुमची वाणे रे;
ध्यान विन्नाणे शक्ति प्रमाणे, निज ध्रुवपद पहिचाणे रे. वी० ६
आलंबन साधन जे त्यागे, पर परिणतिने भागे रे;
अक्षय दर्शन ज्ञान वैरागे, आनंदघन प्रभु जागे रे. वी० ७

---

(२)

(पंथडो निहाळुं रे बीजा जिनतणो रे–ए देशी)

चरम जिणेसर विगत स्वरूपनुं रे, भावुं केम स्वरूप ?
साकारी विण ध्यान न संभवे रे, ए अविकार अरूप. च० १

आप स्वरूपे आतममां रमे रे, तेहना धुर बे भेद;
असंख्य उक्कोसे साकारी पदे रे, निराकारी निरभेद. च० २

सूखमनाम करम निराकार जे रे, तेह भेदे नहि अंत;
निराकार जे निरगति कर्मथी रे, तेह अभेद अनंत. च० ३

रूप नहीं कंईयें बंधन घट्युं रे, बंध न मोक्ष न कोय;
बंध मोक्ष विण सादि अनंतनुं रे, भंग संग केम होय ? च० ४

द्रव्य विना तेम सत्ता नवि लहे रे, सत्ता विण शो रूप;
रूप विना केम सिध्ध अनंतता रे, भावुं अकल स्वरूप. च० ५

आतमता परिणति जे परिणम्या रे, ते मुज भेदाभेद;
तदाकार विण मारा रूपनुं रे, ध्यावुं विधिप्रतिषेध. च० ६

अंतिम भवग्रहणे तुज भावनुं रे, भावशुं शुध्ध स्वरूप;
तईयें आनंदघन पद पामशुं रे, आतमरूप अनुप. च० ७

---

(३)

वीर जिनेश्वर परमेश्वर जयो, जग जीवन जिन भूप;
अनुभव मित्ते रे चित्ते हित करी, दाख्युं तास स्वरूप. वी० १

जेह अगोचर मानस वचनने, तेह अतींद्रिय रूप;
अनुभव मित्ते रे व्यक्ति शक्तिशुं, भाख्युं तास स्वरूप. वी० २

नयनिक्षेपे रे जेह न जाणिये, नवि जिहां प्रसरे प्रमाण;
शुद्ध स्वरूपे रे ते ब्रह्म दाखवे, केवळ अनुभव भाण. वी० ३

अलख अगोचर अनुपम अर्थनो, कोण कही जाणे रे भेद;
सहज विशुद्धचे रे अनुभववयण जे, शास्त्र ते सघळोरे खेद. वी० ४

दिशि देखाडी रे शास्त्र सवि रहे, न लहे अगोचर वात;
कारज साधक बाधक रहित जे, अनुभव मित्त विख्यात. वी० ५

अहो चतुराई रे अनुभव मित्तनी, अहो तस प्रीतप्रतीत;
अंतरजामी स्वामी समीप ते, राखी मित्रशुं रीत. वी० ६

अनुभव संगे रे रंगे प्रभु मल्या, सफळ फळ्या सवि काज;
निज पद संपद जे ते अनुभवे रे, आनंदघन महाराज. वी० ७

श्री देवचंद्रजीकृत स्तवन

(कडखानी देशी)

तार हो तार प्रभु, मुज सेवक भणी,
जगतमां एटलुं सुजश लीजे;
दास अवगुण भर्यो, जाणी पोता तणो,
दयानिधि दीन पर दया कीजे. ता० १

रागद्वेषे भर्यो, मोह वैरी नड्यो,
लोकनी रीतिमां घणुंये रातो;
क्रोधवश धमधम्यो, शुद्ध गुण नवि रम्यो,
भम्यो भवमांही हुं विषयमातो. ता० २

आदर्युं आचरण, लोक उपचारथी,
शास्त्र अभ्यास पण कांई कीधो;

शुद्ध श्रद्धान वळी, आत्म अवलंबविनु;
तेहवो कार्य तिणे को न सीधो. ता० ३
स्वामी दरिशणसमो, निमित्त लही निर्मलो,
जो उपादान ए शुचि न थाशे;
दोष को वस्तुनो, अहवा उद्यम तणो,
स्वामी सेवा सही निकट लाशे. ता० ४
स्वामी गुण ओळखी, स्वामीने जे भजे,
दरिशण शुद्धता तेह पामे;
ज्ञान चारित्र तप वीर्य उल्लासथी,
कर्म झीपी वसे मुक्ति धामे. ता० ५
जगत वत्सल महावीर जिनवर सुणी,
चित्त प्रभु चरणने शरण वास्यो;
तारजो बापजी बिरुद निज राखवा,
दासनी सेवना रखे जोशो. ता० ६
विनति मानजो, शक्ति ए आपजो,
भाव स्याद्वादता शुद्ध भासे;
साधी साधक दशा, सिद्धता अनुभवी,
देवचंद्र विमल प्रभुता प्रकाशे. ता० ७

कळश

चोवीशे जिनगुण गाईए, ध्याईए तत्त्वस्वरूपोजी;
परमानंद पद पाईए, अक्षय ज्ञान अनुपोजी. चो० १
चौदहसें बावन भला, गणधर गुण भंडारोजी;
समतामयी साहु साहुणी, सावय सावइ सारोजी. चो० २
वर्द्धमान जिनवर तणो, शासन अति सुखकारोजी;
चउविह संघ विराजतां, दुसम काल आधारोजी. चो० ३

जिन सेवनथी ज्ञानता, लहे हिताहित बोधोजी;
अहित त्याग हित आदरे, संयम तपनी शोधोजी. चो॰४

अभिनव कर्म अग्रहणता, जीर्ण कर्म अभावोजी;
निःकर्मीने अबाधता, अवेदन अनाकुल भावोजी. चो॰५

भावरोगना विगमथी, अचल अक्षय निराबाधोजी;
पूर्णानंद दशा लही, विलसे सिद्ध समाधोजी. चो॰६

श्री जिनचंद्रनी सेवना, प्रगटे पुण्य प्रधानोजी;
सुमतिसागर अति उल्लसे, साधुरंग प्रभु ध्यानोजी. चो॰७

सुविहित खरतर गच्छवरु, राजसार उवझायोजी;
ज्ञानधर्म पाठक तणो, शिष्य सुजस सुखदायोजी. चो॰८

दीपचंद्र पाठक तणो, शिष्य स्तवे जिनराजोजी;
देवचंद्र पद सेवतां, पूर्णानंद समाजोजी. चो॰९

श्री यशोविजयजीकृत स्तवन

(राग धनाश्री)

गिरुआ रे गुण तुम तणा, श्री वर्धमान जिनराया रे;
सुणतां श्रवणे अमी झरे, मारी निर्मल थाये काया रे. गि॰१

तुम गुणगण गंगाजळे, हुं [1]झीलीने निर्मळ थाउं रे;
अवर न धंधो आदरुं, निशदिन तोरा गुण गाउं रे. गि॰२

झील्या जे गंगाजळे, ते छिल्लर जळ नवि पेसे रे;
जे मालती फूले मोहीआ, ते बावळ जई नवि बेसे रे. गि॰३

एम अमे तुम गुण गोठशुं, रंगे राच्या ने वळी माच्या रे;
ते केम [2]परसुर आदरुं, जे परनारी वश राच्या रे. गि॰४

---

१. नाहीने २. हरिहरादि देव

तुं गति तुं मति आशरो, तुं आलंबन मुज प्यारो रे,
वाचक यश कहे माहरे, तुं जीव-जीवन आधारो रे. गि० ५

श्री मोहनविजयजीकृत स्तवन

(पछेडानी देशी)

दुर्लभ भव लही दोहिलो रे, कहो तरीए कवण उपाय रे;
प्रभुजीने वीनवुं रे;
समकित साचा साचवुं रे, वाला ते करणी किम थाय रे. प्र० १

अशुभ मोह जो मेटीए रे, कांई शुभ प्रभुने जाय रे; प्र०
नीरागे प्रभु ध्याईए रे, कांई तो पिण राग कहाय रे. प्र० २

नाम ध्यातां जो ध्याईए रे, कांई प्रेम विना नवि तान रे; प्र०
मोह विकार जिहां तिहां रे, कांई किम तरीए गुणधाम रे. प्र० ३

मोह बंधज बांधीओ रे, कांई बंध जहां नहि सोय रे; प्र०
कर्म बंध न कीजीए रे, कांई कर्मबंधन गये जोय रे. प्र० ४

तेहमां शो पाड चडावीए रे, कांई तुमे श्री महाराज रे; प्र०
विण करणी जो तारशो रे, कांई साचा श्री जिनराज रे. प्र० ५

प्रेम मगन नीभावता रे, कांई भाव तिहां भवनाश रे; प्र०
भाव तिहां भगवंत छे रे, कांई उपदिशे आतम सास रे. प्र० ६

पूरण घटाभ्यंतर भर्यो रे, कांई अनुभव अनुहार रे; प्र०
आतम ध्याने ओळखी रे, कांई तरशुं भवनो पार रे. प्र० ७

वर्धमान मुज विनति रे, कांई मानजो निशदिश रे; प्र०
मोहन कहे मनमंदिरे रे, कांई वसियो तुं विश्वावीश रे. प्र० ८

श्री देवचंद्रजीकृत विहरमानजिन स्तवन (२०)

(१) श्री सीमंधर जिन स्तवन

(सिद्धचक्र पद वंदो—ए देशी)

श्री सीमंधर जिनवर स्वामी, विनतडी अवधारो;
शुद्धधर्म प्रगट्यो जे तुमचो, प्रगटो तेह अमारो रे
स्वामी, वीनवीए मन रंगे. १

जे परिणामिक धर्म तुमारो, तेहवो अमचो धर्म;
श्रद्धाभासन रमण वियोगे,वळग्यो विभाव अधर्म रे. स्वामी, वी० २

वस्तु स्वभाव स्वजाति तेहनो, मूल अभाव न थाय;
परविभाव अनुगत परिणतिथी, कर्मे ते अवराय रे. स्वामी, वी० ३

जे विभाव ते पण नैमित्तिक, संततिभाव अनादि;
परनिमित्त ते विषय संगादिक, ते संयोगे सादि रे. स्वामी, वी० ४

अशुद्ध निमित्ते ए संसरता, अत्ता[१] कत्ता[२] परनो;
शुद्धनिमित्त रमे जब चिद्‌घन, कर्त्ता भोक्ता घरनो रे. स्वामी, वी० ५

जेना धर्म अनंता प्रगट्या, जे निजपरिणति वरियो;
परमातम जिनदेव अमोही, ज्ञानादिकगुण दरियो रे. स्वामी, वी० ६

अवलंबन उपदेशक रीते, श्री सीमंधर देव;
भजीए शुद्ध निमित्त अनोपम, तजीए भवभय टेव रे. स्वामी, वी० ७

शुद्ध देव अवलंबन करतां, परहरिये परभाव;
आतमधर्म रमण अनुभवतां, प्रगटे आतमभाव रे. स्वामी, वी० ८

आतम गुण निर्मळ नीपजतां, ध्यान समाधि स्वभावे;
पूर्णानंद सिद्धता साधी, देवचंद्र पद पावे रे. स्वामी, वी० ९

---

१. आत्मा. २. कर्त्ता.

श्री यशोविजयजीकृत विहरमानजिन स्तवन (२०)

(१) श्री सीमंधर जिन स्तवन

(ईडर आंबा आंबलीए–ए देशी)

पुष्कलावई विजये जयो रे, नयरी पुंडरिगिणी सार;
श्री सीमंधर साहिबा रे, राय श्रेयांस कुमार,
जिणंदराय, धरजो धर्मसनेह. १

मोटा नाहना अंतरो रे, गिरुआ नवि दाखंत;
शशी दरिशण सायर वधे रे, कैरववन विकसंत. जि० २

ठाम कुठाम नवि लेखवे रे, जग वरसंत जलधार;
कर दोय कुसुमे वासीए रे, छाया सवि आधार. जि० ३

राय रंक सरिखा गणे रे, उद्योते शशी सूर;
गंगाजल ते बिहुतणो रे, ताप करे सवि दूर. जि० ४

सरिखा सहुने तारवा रे, तिम तुमे छो महाराज;
मुजशुं अंतर किम करो रे, बांह्य ग्रह्यांनी लाज. जि० ५

मुख देखी टीलुं करे रे, ते नवि होवे परमाण;
मुजरो माने सवि तणो रे, साहिब तेह सुजाण. जि० ६

वृषभ लंछन माता सत्यकी रे, नंदन रुक्मिणी कंत;
वाचक यश एम वीनव्यो रे, भयभंजन भगवंत. जि० ७

श्री यशोविजयजीकृत बीजी चोवीशी

(१) श्री ऋषभ जिन स्तवन

(मेरो प्रभु नीको मेरो प्रभु नीको–ए देशी)

ऋषभ जिनंदा, ऋषभ जिनंदा, तुं साहिब हुं छुं तुज बंदा;
तुजशुं प्रीति बनी मुज साची, मुज मन तुज गुणशुं रह्युं माची. ऋ० १

दीठा देव रुचे न अनेरा, तुज पाखलि[1] चित्तडुं दीए फेरा;
स्वामी शुं कामणडुं कीधुं, चित्तडुं अमारुं चोरी लीधुं. ऋ० १

प्रेम बंधाणो ते तो जाणो, निर्वहेश्यो तो होशे प्रमाणो;
वाचक यश वीनवे जिनराज, बांह्य ग्रह्यानी तुजने लाज. ऋ० ३

श्री देवचंद्रजीकृत गतचोवीशी

(१) श्री केवलज्ञानी जिन स्तवन

नामे गाजे परम आह्लाद, प्रगटे अनुभव रस आस्वाद;
तेथी थाये मति सुप्रसाद, सुणतां भांजेरे कांई विषयविषादरे;
जिणंदा ताहरा नामथी मन भीनो. १

क्षेत्र असंख्य प्रदेश, अनंत पर्याय निवेश;
जाणंग शक्तिअशेष, तेहथी जाणे रे कांई सकळ विशेष रे. जि० २

सर्व प्रमेय प्रमाण, जस केवळ नाण पहाण;
तिणे केवळनाणी अभिहाण, जस ध्यावेरे कांई मुनिवर झाण रे. जि० ३

ध्रुवपरिणति छति जास, परिणति परिणामे त्रिकराश;
कर्त्तापद प्रवृत्ति प्रकाश, अस्तिनास्तिरे कांई सर्वनो भास रे. जि० ४

सामान्य स्वभावनो बोध, केवळ दर्शन शोध;
सहकार अभावे रोध, समयंतर रे कांई बोध प्रबोध रे. जि० ५

कारक चक्र समग्ग, ते ज्ञायक भाव विलग्ग;
परमभाव संसग्ग, एक रीते रे कांई थयो गुणवग्ग रे. जि० ६

इम सालंबन जिन ध्यान, भवि साधे तत्त्व विधान;
लहे पूर्णानंद अमान, तेहथी थाये रे कांई शिव इशान रे. जि० ७

---

१. आसपास, चोमेर

दास विभाव अपाय, नासे प्रभु सुपसाय;
जे तन्मयताए ध्याय, सही तेहने रे देवचंद्र पद थाय रे. जि०८

(२) श्री युगमंधर जिन स्तवन

(देशी नारायणानी)

श्री युगमंधर वीनवुं रे, विनतडी अवधार रे, दयालराय;
ए परपरिणति रंगथी रे, मुजने नाथ उगार रे. द० श्री०१

कारक ग्राहक भोग्यता रे, में कीधी महाराय रे; द०
पण तुज सरिखो प्रभु लही रे, साची वात कहाय रे. द० श्री०२

यद्यपि मूल स्वभावमें रे, परकर्तृत्व विभाव रे; द०
अस्तिधरम जे माहरो रे, एहनो तथ्य अभाव रे. द० श्री०३

परपरिणामिकता दशा रे, लही परकारण योग रे; द०
चेतनता परगत थई रे, राची पुद्‌गल भोग रे. द० श्री०४

अशुद्ध निमित्त तो जड अछे रे, वीर्यशक्ति विहीन रे; द०
तुं तो वीरज ज्ञानथी रे, सुख अनंते लीन रे. द० श्री०५

तिण कारण निश्चे कर्यो रे, मुज निज परिणति भोग रे; द०
तुज सेवाथी नीपजे रे, भांजे भवभय सोग रे. द० श्री०६

शुद्ध रमण आनंदता रे, ध्रुव निःसंग स्वभाव रे; द०
सकल प्रदेश अमूर्त्तता रे, ध्याता सिद्ध उपाय रे. द० श्री०७

सम्यक्‌तत्त्व जे उपदिश्यो रे, सुणतां तत्त्व जणाय रे; द०
श्रद्धाज्ञाने जे ग्रह्यो रे, तेहि ज कार्य कराय रे. द० श्री०८

कार्यरुचि कर्ता थये रे, कारक सवि पलटाय रे; द०
आतमगते आतम रमे रे, निज घर मंगल थाय रे. द० श्री०९

त्राण शरण आधार छो रे, प्रभुजी भव्य सहाय रे; द०
देवचंद्र पद नीपजे रे, जिनपदकज सुपसाय रे. द० श्री० १०

(२) श्री युगमंधर जिन स्तवन

(धनरा ढोला—ए देशी)

श्री युगमंधर साहिबा रे, तुमशुं अविहड रंग, मनना मान्या;
चोलमजीठ तणी परे रे, ते तो अचल अभंग, गुणना गेहा. १

भविजनमन तांबुं करे रे, वेधक कंचनवान; म०
फरी तांबुं ते नवि हुए रे, तिम तुम नेह प्रमाण. गु० २

एकउदकलव जिम भळ्यो रे, अक्षय जलधिमां सोय; म०
तिम तुजशुं गुण नेहलो रे, तुज सम जग नहि कोय. गु० ३

तुजशुं मुज मन नेहलो रे, चंदन गंध समान; म०
मेळ हुओ ए मूळगो रे, सहज स्वभाव निदान. गु० ४

वप्रविजय विजयापुरी रे, मात सुतारा नंद; म०
गज लंछन विप्रमंगला रे, राणी मन आनंद. गु० ५

सुदृढराय कुळ दिनमणि रे, जय जय तुं जिनराज; म०
श्री नयविजय विबुध तणा रे, शिष्यने द्यो शिवराज. गु० ६

(२) श्री अजित जिन स्तवन

विजयानंदन गुणनीलोजी, जीवन जगदाधार;
तेहशुं मुज मन गोठडीजी, छाजे वारोवार.
सोभागी जिन, तुज गुणनो नहि पार;
तुं तो दोलतनो दातार. सो० १

जेहवी कूआ छांहडीजी, जेहवुं वननुं फूल;
तुजशुं जे मन नवि मिळ्युंजी, तेहवुं तेहनुं शूल. सो० २

माहरुं तो मन धुरि थकीजी, हळिऊं तुज गुण संग;
वाचक यश कहे राखजोजी, दिन दिन चडतो रंग. सो० ३

---

(२) श्री निर्वाणीप्रभु जिन स्तवन

(वीरज प्यारा हो वीरजी प्यारा–ए देशी)

प्रणमुं चरण परम गुरुजिनना, हंस ते मुनिजन मनना;
वासी अनुभव नंदन वनना, भोगी आनंदघनना,
मोरा स्वामी हो, तोरो ध्यान धरीजे;
ध्यान धरीजे हो सिध्धि वरीजे, अनुभव अमृत पीजे. मो० १

सकल प्रदेश समागुण धारी, निज निज कारज कारी;
निराकार अवगाह उदारी, शक्ति सर्व विस्तारी. मो० २

गुणगुण प्रति पर्याय अनंता, ते अभिलाप्य स्वतंता;
अनंतगुणानभिलापी संता, कार्य व्यापार करंता. मो० ३

छति अविभागी पर्यायव्यक्ते, कारज शक्ति प्रवर्ते;
ते विशेष सामर्थ्य प्रशक्ते, गुण परिणाम अभिव्यक्ते. मो० ४

निरवाणी प्रभु शुध्ध स्वभावी, अभय निरायु अपावी;
स्यादवादी यमनीगतरावी, पूरण शक्ति प्रभावी. मो० ५

अचल अखंड स्वगुण आरामी, अनंतानंद विशरामी;
सकल जीव खेदज्ञ सुस्वामी, निरामगंधी अकामी. मो० ६

निःसंगी सेवनथी प्रगटे, पूर्णानंदी ईहा;
साधन शक्ते गुण एकत्वे, सीझे साध्य समीहा. मो० ७

पुष्ट निमित्तालंबन ध्याने, स्वालंबन लय ठाने;
देवचंद्र गुणने एक ताने, पहोंचे पूरण थाने. मो० ८

---

(३) श्री बाहु जिन स्तवन

(संभव जिन अवधारिये—ए देशी)

बाहुजिणंद दयामयी, वर्तमान भगवान; प्रभुजी,
महाविदेहे विचरता, केवल ज्ञान निधान. प्र० बा० १

द्रव्यथकी छ कायने, न हणे जेह लगार, प्र०
भावदया परिणामनो, एही ज छे व्यवहार. प्र० बा० २

रूप अनुत्तर देवथी, अनंत गुण अभिराम, प्र०
जोतां पण जगीजंतुने, न वधे विषय विराम. प्र० बा० ३

कर्मउदय जिनराजनो, भविजन धर्म सहाय, प्र०
नामादि संभारतां, मिथ्या दोष विलाय. प्र० बा० ४

आतम गुण अविराधना, भावदया भंडार, प्र०
क्षायिक गुण पर्यायमें, नवि पर धर्म प्रचार. प्र० बा० ५

गुण गुण परिणति परिणमे, बाधक भाव विहीन, प्र०
द्रव्य असंगी अन्यनो, शुद्ध अहिंसक पीन. प्र० बा० ६

क्षेत्र सर्व प्रदेशमें, नहि परभाव प्रसंग, प्र०
अतनु अयोगी भावथी, अवगाहना अभंग. प्र० बा० ७

उत्पाद व्यय ध्रुवपणे, सहेजे परिणति थाय, प्र०
छेदन योजनता नहीं, वस्तु स्वभाव समाय. प्र० बा० ८

गुण पर्याय अनंतता, कारक परिणति तेम, प्र०
निज निज परिणति परिणमे, भाव अहिंसक एम. प्र० बा० ९

एम अहिंसकतामयी, दीठो तुं जिनराज, प्र०
रक्षक निज पर जीवनो, तारणतरण जिहाज. प्र० बा० १०

परमातम परमेसरु, भावदया दातार, प्र०
सेवो ध्यावो एहने, देवचंद्र सुखकार. प्र० बा० ११

---

(३) श्री बाहु जिन स्तवन

(देशी नणदलनी)

साहिब बाहु जिणेसर वीनवुं, विनतडी अवधार हो;
भवभयथी हुं उभग्यो, हवे भव पार उतार हो. सा० १

तुम सरिखा मुज शिर छते, करम करे किम जोर हो;
भुजंगतणो भय तिहां नहीं, जिहां वनमां विचरे मोर हो. सा० २

जिहां रवि तेजे झळहळे, तिहां किम रहे अंधकार हो;
केसरी जिहां क्रीडा करे, तिहां नहि गज परिचार हो. सा० ३

तिम जो तुमे मुज मन रमो, तो नासे दुरित संसार हो;
वच्छविजय सुसीमापुरी, राय सुग्रीव मल्हार हो. सा० ४

हरिण लंछन एम में स्तव्यो, मोहना राणीनो कंत हो;
विजयानंदन मुज दीओ, यश कहे सुख अनंत हो. सा० ५

---

(३) श्री संभवनाथ जिन स्तवन

सेनानंदन साहिब साचो रे, [१]परिपरि परख्यो हीरो जाचोरे;
प्रीति मुद्रिका तेहशुं जोडी रे, जाणुं में लही कंचन कोडी रे. १

जेणे चतुरशुं गोठी न बांधी रे, तिणे तो जाण्युं फोकट वाधी रे;
सुगुण मेलावे जेह उच्छाहो रे, मणुअ जन्मनो तेह ज लाहो रे. २

सुगुण शिरोमणि संभवस्वामी रे, नेह निवाह धुरंधर पामी रे;
वाचकयश कहे मुज दिन वळियो रे, मनह मनोरथ सघळो फळियो रे. ३

---

१. वांरवार

(३) श्री सागरप्रभु जिन स्तवन

(शीतलजिन सहेजानंदी—ए देशी)

गुणआगर सागर स्वामी, मुनि भाव जीवन निःकामी;
गुणकरणे कर्त्तृ प्रयोगी, प्राग्भावी सत्ता भोगी,
सुहंकर भव्य ए जिन गावो, जिम पूरण पदवी पावो. सु० १
सामान्य स्वभाव स्वपरना, द्रव्यादि चतुष्टय घरना;
देखे दर्शन रचनाये, निज वीर्य अनंत सहाये. सु० २

तेहने ते जाणे नाण, ए धर्म विशेष पहाण;
सावयवी कारज शक्ते, अविभागी पर्याय व्यक्ते. सु० ३

जे कारण कारज भावे, वरते पर्याय प्रभावे;
प्रतिसमये व्यय उत्पादि, ज्ञेयादिक अनुगते सादि. सु० ४

अविभागी पर्याय जेह, समवायी कार्यना गेह;
जे नित्य त्रिकाळी अनंत, तसु ज्ञायक ज्ञान महंत. सु० ५

जे नित्य अनित्य स्वभाव, ते देखे दर्शन भाव;
सामान्य विशेषना पिंड, द्रव्यार्थिक वस्तु प्रचंड. सु० ६

इम केवळ दर्शन नाण, सामान्य विशेषनो भाण;
द्विगुण आतम श्रद्धाए, चरणादिक तसु व्यवसाये. सु० ७

द्रव्य जेह विशेष परिणामी, ते कहिये पज्जव नामी;
छति सामर्थ्य दुभेदे, पर्याय विशेष निवेदे. सु० ८

तसु रमणे भोगनो वृंद, अप्रयासी पूर्णानंद;
प्रगटी जस शक्ति अनंती, निज कारजवृत्ति स्वतंत्री. सु० ९

गुण द्रव्य सामान्य स्वभावी, तीरथपति त्यक्तविभावी;
प्रभु आणा भक्ते लीन, तिणे देवचंद्र पद कीन. सु० १०

(४) श्री सुबाहु जिन स्तवन

(माहरो वहालो ब्रह्मचारी—ए देशी)

श्री सुबाहुजिन अंतरजामी, मुज मननो विशरामी रे,
प्रभु अंतरजामी;
आतम धर्म तणो आरामी, परपरिणति निष्कामी रे. प्र० १

केवल ज्ञान अनंत प्रकाशी, भविजन कमळ विकासी रे; प्र०
चिदानंद घन तत्त्वविलासी, शुद्ध स्वरूप निवासी रे. प्र० २

यद्यपि हुं मोहादिके छळियो, परपरिणतिशुं भळियो रे; प्र०
हवे तुजसम मुज साहिब मलियो, तिणे सविभवभय टलियो रे. प्र० ३

ध्येय स्वभावे प्रभु अवधारी, दुर्ध्याता परिणति वारी रे; प्र०
भासन वीर्य एकताकारी, ध्यान सहज संभारी रे. प्र० ४

ध्याता ध्येय समाधि अभेदे, पर परिणति विच्छेदे रे; प्र०
ध्याता साधक भाव उच्छेदे, ध्येय सिद्धता वेदे रे. प्र० ५

द्रव्यक्रिया साधन विधि याची, जे जिन आगम वाची रे; प्र०
परिणति वृत्ति विभावे राची, तिणे नवि थाये साची रे. प्र० ६

पण नवि भय जिनराज पसाये, तत्त्वरसायण पाये रे; प्र०
प्रभु भक्ते निज चित्त वसाये, भावरोग मिट जाये रे. प्र० ७

जिनवर वचन अमृत अनुसरिये, तत्त्व रमण आदरिये रे; प्र०
द्रव्य भाव आस्रव परिहरिये, देवचंद्र पद वरिये रे. प्र० ८

---

(४) श्री सुबाहु जिन स्तवन

स्वामी सुबाहु सुहंकरु, भूनंदानंदन प्यारो रे;
निसढनरेसर कुलतिलो, किंपुरुषा भरतारो रे. स्वा० १

कपि लंछन नलिनावती, वप्रविजय अयोध्यानाहो रे;
रंगे मिलिये तेहशुं, एह मणुअ जन्मनो लाहो रे. स्वा० २

ते दिन सवि एळे गया, जिहां प्रभुशुं गोठी न बांधी रे;
भक्ति दूतिकाए मन हर्युं, पण वात कही छे आधी रे. स्वा० ३

अनुभव मित्त जो मोकलुं, तो ते सघळी वात जणावे रे;
पण तेह विण मुज नवि सरे, कहो तो पुत्रविचार ते आवे रे. स्वा० ४

तेणे जई वात सवे कही, प्रभु मळ्या ते ध्यानने टाणे रे;
श्री नयविजय विबुधतणो, इम सेवक सुयश वखाणे रे. स्वा० ५

---

(४) श्री अभिनंदन जिन स्तवन

(गोडी गाजे रे–ए देशी)

शेठ सेवो रे अभिनंदन देव, जेहनी सारे रे सुर किन्नर सेव;
एहवो साहिब सेवे तेह हजूर, जेहनां प्रगटेरे कीधां पुन्यपंडूर. शे० १

जेह सुगुण सनेही साहिब हेज, दृगलीलाथी लहिये सुखसेज;
तृण सरखुं लागे सघळे साच, ते आगळ आव्युं धरणीराज. शे० २

अलवे में पाम्यो तेहवो नाथ, तेहथी हुं निश्चय हुओरे सनाथ;
वाचकयश कहे पामी रंगरेल, मानुं फळिय आंगणडे सुरतरुवेल. शे० ३

---

(४) श्री महाजश जिन स्तवन

(राग फाग)

आत्म प्रदेश रंग थल अनोपम, सम्यग्दर्शन रंग रे,
निज सुखके सधैया; तुं तो निजगुण खेल वसंत रे, निज०
पर परिणति चिंता तजी जिनमें, ज्ञान सखाके संग रे. नि० १

वास बरास सुरुचि केसरघन, छांटो परम प्रमोद रे; नि०
आतम रमण गुलालकी लाली, साधकशक्तिविनोद रे. नि० २

ध्यान सुधारस पान मगनता, भोजन सहज स्वभोग रे; नि०
रीझ एकत्वता तानमें वाजे, वाजिंत्र सन्मुख योग रे. नि० ३

शुक्लध्यान होरीकी ज्वाला, जाले कर्म कठोर रे; नि०
शेषप्रकृतिदल क्षिरण निर्जरा, भस्म खेल अति जोर रे. नि० ४

देव महाजस गुण अवलंबन, निर्भय परिणति व्यक्ति रे; नि०
ज्ञाने ध्याने अति बहुमाने, साधे मुनि निज शक्ति रे. नि० ५

सकळ अजोग अलेश असंगत, नाहीं होवे सिद्ध रे; नि०
देवचंद्र आणामें खेले, उत्तम युहिं प्रसिद्ध रे. नि० ६

---

(५) श्री सुजात जिन स्तवन

(देहु देहु नणंद हठीली—ए देशी)

स्वामी सुजात सुहाया, दीठा आणंद उपाया रे;
मनमोहना जिनराया;
जिणे पूरण तत्त्व निपाया, द्रव्यास्तिकनय ठहराया रे. म० १

पर्यायास्तिक नयराया, ते मूल स्वभाव समाया रे; म०
ज्ञानादिक स्वपर्याया, निज कार्य करण वरताया रे. म० २

अंशनय मार्ग कहाया, ते विकल्प भाव सुणाया रे; म०
नय चार ते द्रव्य थपाया, शब्दादिक भाव कहाया रे. म० ३

दुर्नय ते सुनय चलाया, एकत्व अभेदे ध्याया रे; म०
ते सवि परमार्थ समाया, तसु वर्तन भेद गमाया रे. म० ४

स्याद्वादी वस्तु कहीजे, तसु धर्म अनंत लहीजे रे; म०
सामान्य विशेषनुं धाम, ते द्रव्यास्तिक परिणाम रे. म० ५

जिनरूप अनंत गणीजे, ते दिव्य ज्ञान जाणीजे रे; म०
श्रुतज्ञाने नय पथ लीजे, अनुभव आस्वादन कीजे रे. म० ६

प्रभुशक्ति व्यक्ति एक भावे, गुण सर्व रह्या समभावे रे; म०
माहरे सत्ता प्रभु सरखी, जिनवचन पसाये परखी रे. म० ७

तुं तो निज संपत्ति भोगी, हुं तो परपरिणतिनो योगी रे; म०
तिण तुम्ह प्रभु माहरा स्वामी, हुं सेवकतुज गुणग्रामी रे. म० ८

ए संबंध चित्त समवाय, मुज सिद्धनुं कारण थाय रे; म०
जिनराजनी सेवना करवी, ध्येय ध्यान धारणा धरवी रे. म० ९

तुं पूरण ब्रह्म अरूपी, तुं ज्ञानानंद स्वरूपी रे; म०
इम तत्त्वालंबन करिये, तो देवचंद्र पद वरिये रे. म०१०

(५) श्री सुजात जिन स्तवन

साचो स्वामी सुजात, पूरव अरध जयोरी;
धातकी खंड मझार, पुष्कलावई विजयोरी. १

नयरी पुंडरिगिणी नाथ, देवसेन वंश तिलोरी;
देवसेनानो पुत्र, लंछन भानु भलोरी. २

जयसेनानो कंत, तेहशुं प्रेम धर्योरी;
अवर न आवे दाय, तेणे वशि चित्त कर्योरी. ३

तुमे मति जाणो दूर, जई परदेश रह्यारी;
छो मुज चित्त हजूर, गुण संकेत ग्रह्यारी. ४

ऊगे भानु आकाश, सरवर कमल हसेरी;
देखी चंद्र चकोर, पीवा अमीअ धसेरी. ५

दूर थकी पण तेम, प्रभुशुं चित्त मिळ्चुंरी;
श्री नयविजय सुशिष्य, कहे गुण हेजे हिळ्चुंरी. ६

(५) श्री सुमतिनाथ जिन स्तवन

(घुघरीआळो घाट—ए देशी)

सुमतिनाथ दातार, कीजे ओळग तुम तणी रे;
दीजे शिवसुख सार, जाणी ओळग जगधणी रे. १

अक्षय खजानो तुज, देतां खोट लागे नहीं रे;
किसि विमासण [१]गुज्ज, जाचक थाके ऊभा रही रे. २

रयण कोड तें दीध, ऊरण विश्व तदा कीओ रे;
वाचक यश सुप्रसिद्ध, मागे तीन रतन दीओ रे. ३

---

(५) श्री विमल जिन स्तवन

(कडखानी देशी)

धन्य तुं धन्य तुं धन्य जिनराज तुं,
धन्य तुज शक्ति व्यक्ति सनूरी;
कार्य कारण दशा सहज उपगारता,
शुद्ध कर्तृत्व परिणाम पूरी. ध० १

आत्म प्रभाव प्रतिभास कारजदशा,
ज्ञान अविभाग पर्याय प्रवृत्ते;
एम गुण सर्व निज कार्य साधे प्रगट,
ज्ञेयदृश्यादि कारणनिमित्ते. ध० २

दास बहुमान भासन रमण एकता,
प्रभु [२]गुणालंबनी शुद्ध थाये;
बंधना हेतु रागादि तुज गुण रसी,
तेह साधक अवस्था उपाये. ध० ३

---

१. छानुं, २. पाठां—गुणालंबथी

कर्म जंजाल युंजनकरण योग जे,
स्वामीभक्ति रम्या थिर समाधि;
दान तप शील व्रत नाथआणा विना,
थई बाधक करे भव उपाधि. ध० ४

सकळ प्रदेश समकाळ सवि कार्यता,
करण सहकार कर्तृत्व भावो;
द्रव्य प्रदेश पर्याय आगमपणे,
अचल असहाय अक्रिय दावो. ध० ५

उत्पत्ति नाश ध्रुव सर्वदा सर्वनी,
षड्गुणी हानि वृद्धि अन्यूनो;
अस्ति नास्तित्व सत्ता अनादिथको,
परिणमन भावथी नहि अजूनो. ध० ६

इणीपरे विमल जिनराजनी विमलता,
ध्यान मनमंदिरे जेह ध्यावे;
ध्यान पृथक्त्व सविकल्पता रंगथी,
ध्यान एकत्व अविकल्प आवे. ध० ७

वीतरागी असंगी अनंगी प्रभु,
नाण अप्रयास अविनाश धारी;
देवचंद्र शुद्ध सत्तारसी सेवतां,
संपदा आत्मशोभा वधारी. ध० ८

---

(६) श्री स्वयंप्रभ जिन स्तवन

(मोमनडो हेडाउहो मिसरि ठाकुरो महदरो—ए देशी)

स्वामी स्वयंप्रभने हो जाउं भामणे, हरखे वार हजार;
वस्तु धर्म हो पूरण जसु नीपनो, भावकृपा किरतार. स्वा० १

द्रव्यधर्म ते हो जोग समारवा, विषयादिक परिहार;
आतमशक्ति हो स्वभाव सुधर्मनो, साधन हेतु उदार. स्वा० २

उपशमभावे हो मिश्र क्षायिकपणे, जे निजगुण प्राग्‌भाव;
पूर्णावस्थाने हो निपजावतो, साधन धर्म स्वभाव. स्वा० ३

समकित गुणथी हो शैलेशी लगे, आतम अनुगत भाव;
संवर निर्जरा हो उपादान हेतुता, साध्यालंबन दाव. स्वा० ४

सकल प्रदेशे हो कर्म अभावता, पूर्णानंद स्वरूप;
आतम गुणनी हो जे संपूर्णता, सिद्ध स्वभाव अनुप. स्वा० ५

अचळ अबाधित हो जे निस्संगता, परमातम चिद्रूप;
आतम भोगी हो रमता निज पदे, सिद्धरमण ए रूप. स्वा० ६

एहवो धर्म हो प्रभुने नीपन्यो, भाख्यो तेहवो धर्म;
जे आदरतां हो भवियण शुचि हुवे, त्रिविध विदारी कर्म. स्वा० ७

नाम धर्म हो ठवण धर्म तथा, द्रव्य क्षेत्र तिम काळ;
भाव धर्मना हो हेतुपणे भला, भाव विना सहु आळ. स्वा० ८

श्रद्धा भासन हो तत्त्व रमणपणे, करतां तन्मय भाव;
देवचंद्र हो जिनवर पद सेवतां, प्रगटे वस्तु स्वभाव. स्वा० ९

---

(६) श्री स्वयंप्रभ जिन स्तवन

(देशी पारधियानी)

स्वामी स्वयंप्रभ सुंदरू रे,
मित्रनृपति कुळ हंस रे गुणरसीआ;
माता सुमंगळा जनमियो रे,
शशी लंछन सुप्रशंस रे मनवसीआ. १

वप्र विजय विजयापुरी रे, धातकी पूरव अद्ध रे; गुण०
प्रियसेना पियु पुन्यथी रे, तुम सेवा में लद्ध रे. मन० २

चखवी समकित सुखडी रे, हेळवीओ हुं बाळ रे; गुण०
केवळरत्न लह्या विना रे, न तजुं चरण त्रिकाळ रे. मन० ३

एकने ललचावी रहो रे, एकने आपो राज रे; गुण०
ए तुम करवो किम घटे रे, पंक्ति भेद जिनराज रे. मन० ४

केड न छोडुं ताहरी रे, आप्या विण शिवसुख रे; गुण०
भोजन विण भांजे नहीं रे, भामणडे जिम भूख रे. मन० ५

आसंगायत जे हुशे रे, ते कहेशे सो वार रे; गुण०
भोळी भगते रीझशे रे, साहिब पण निरधार रे. मन० ६

सवि जाणे थोडुं कहे रे, प्रभु तुं चतुर सुजाण रे; गुण०
वाचकयश कहे दीजीए रे, वांछित सुख निर्वाण रे. मन० ७

---

(६) श्री पद्मप्रभ जिन स्तवन

(आज अधिक भावे करी—ए देशी)

पद्मप्रभजिन सांभळो, करे सेवक ए अरदास हो;
पांति बेसारीओ जो तुम्हे, तो सफळ करो आश हो. प० १

जिनशासन पांति तें ठवी, मुज आप्युं समकित थाळ हो;
हवे भाणा खडखड कुण खमे, शिवमोदक पीरसे रसाळ हो. प० २

गजग्रासन गलित संची करी, जीवे कीडीना वंश हो;
वाचकयश कहे एम चित्त धरी, दीजे निजसुख एक अंश हो. प० ३

---

(६) श्री सर्वानुभूति जिन स्तवन

जगतारक प्रभु वीनवुं, विनतडी अवधार रे;
तुज दरिशण विण हुं भम्यो, काळ अनंत अपार रे. ज० १

सुहम निगोद भवे वस्यो, पुद्‌गल परिअट्ट अनंत रे;
अव्यवहारपणे भम्यो, क्षुल्लक भव अत्यंत रे. ज० २

व्यवहारे पण तिरिय गते, इग वणखंड असन्न रे;
असंख्य परावर्तन थयां, भमियो जीव अधन्न रे. ज० ३

सूक्षम स्थावर चारमें, कालह चक्र असंख्य रे;
जन्म मरण बहुलां कर्यां, पुद्‌गल भोगने कंख रे. ज० ४

ओघे बादर भावमें, बादर तरु पण एम रे;
पुद्‌गल अढी लागट वस्यो, नाम निगोदे प्रेम रे. ज० ५

स्थावर स्थूळ परितमें, सीत्तर कोडाकोडि रे;
आयर भम्यो प्रभु नवि मिल्या, मिथ्या अविरति जोडि रे. ज० ६

विगलपणे लागट वस्यो, संखिजवास हजार रे;
बादर पज्जव वणस्सइ, भू जल वायु मझार रे. ज० ७

अनल विगल पज्जतमें, तस भव आयु प्रमाण रे;
शुद्ध तत्त्व प्राप्ति विना, भटक्यो नव नव ठाण रे. ज० ८

साधिक सागर सहस दो, भोगवीओ तस भावे रे;
एक सहस साधिक दधि, पंचेन्द्री पद दावे रे. ज० ९

पर परिणति रागीपणे, पर रस रंगे रक्त रे;
पर ग्राहक रक्षकपणे, परभोगे आसक्त रे. ज० १०

शुद्ध स्वजाति तत्त्वने, बहुमाने तल्लीन रे;
ते विजाति रसता तजी, स्वस्वरूप रस पीन रे. ज० ११

श्री सर्वानुभूति जिनेश्वरु, तारक लायक देव रे;
तुज चरण शरण रह्यो, टळे अनादि कुटेव रे. ज० १२

सबला साहिब ओलगे, आतम सबलो थाय रे;
बाधक परिणति सवि टळे, साधक सिद्धि कहाय रे. ज० १३

कारणथी कारज हुवे, ए परतीत अनादि रे;
माहरा आतम सिद्धिना, निमित्त हेतु प्रभु सादि रे. ज० १४

अविसंवादन हेतुनी, दृढ सेवा अभ्यास रे;
देवचंद्र पद नीपजे, पूर्णानंद विलास रे. ज० १५

---

(७) श्री ऋषभानन जिन स्तवन

(वारी हुं गोडी पासने–ए देशी)

श्री ऋषभानन वंदिये, अचल अनंत गुणवास, जिनवर;
क्षायिक चारित्र भोगथी, ज्ञानानंद विलास. जि० श्री० १

जे प्रसन्न प्रभु मुख ग्रहे, तेहिज नयन प्रधान; जि०
जिनचरणे जे नामीए, मस्तक तेह प्रमाण. जि० श्री० २

अरिहापदकज अरचीए, स लहिजे ते हथ्थ; जि०
प्रभुगुण चिंतनमें रमे, तेहज मन सुकयथ्थ. जि० श्री० ३

जाणो छो सहु जीवनी, साधक बाधक भांत; जि०
पण श्रीमुखथी सांभळी, मन पामे निरांत. जि० श्री० ४

तीन काल जाणंग भणी, शुं कहिये वारंवार; जि०
पूर्णानंदी प्रभुतणुं, ध्यान ते परम आधार. जि० श्री० ५

कारणथी कारज हुवे, ए श्री जिन मुख वाण; जि०
पुष्टहेतु मुज सिद्धिना, जाणी कीध प्रमाण. जि० श्री० ६

शुद्ध तत्त्व निज संपदा, ज्यां लगे पूर्ण न थाय; जि०
त्यां लगे जगगुरु देवना, सेवुं चरण सदाय. जि० श्री० ७

कारज पूर्ण कर्या विना, कारण केम मुकाय; जि०
कारजरुचि कारणतणा, सेवे शुद्ध उपाय. जि० श्री० ८

ज्ञान चरण संपूर्णता, अव्याबाध अमाय; जि०
देवचंद्र पद पामीए, श्री जिनराज पसाय. जि० श्री० ९

---

(७) श्री ऋषभानन जिन स्तवन

(बन्यो कुंअरजीनो सेहरो—ए देशी)

श्रीऋषभानन गुणनीलो, सोहे मृगपति लंछन पाय हो; जिणंदा,
मोहे मन तुं सवि तणां, भली वीरसेना तुज माय हो. जि०श्री०१

वच्छविजय सुसीमापुरी, खंड धातकी पूरव भाग हो; जि०
राणी जयावती नाहलो, कीरतिनृपसुत वडभाग हो. जि०श्री०२

हुं पूछुं कहो तुमे केणिपरे, दीओ भगतने मुगतिसंकेत हो; जि०
रुसो नहि निंदा कारणे, तुषो नहि पूजा हेत हो. जि०श्री०३

विण समकित फळ को नवि लहे, एह ग्रंथे छे अवदात हो; जि०
तो ए शाबाशी तुमने चढे, तुमे कहेवाओ जगतात हो. जि०श्री०४

हवे जाण्युं मनवांछित दीए, चिंतामणि ने सुरकुंभ हो; जि०
अग्नि मिटावे शीतने, जे सेवे थई थिरथंभ हो. जि०श्री०५

जिम ए गुण वस्तुस्वभावथी, तिम तुमथी मुगतिउपाय हो; जि०
दायक नायक उपमा, भक्ते एम साच कहेवाय हो. जि०श्री०६

जपतपकिरिया फळ दीए, ते तुम गुण ध्यान निमित्त हो; जि०
श्री नयविजय विबुध तणा, सेवकने परम तुं मित्त हो. जि०श्री०७

---

(७) श्री सुपार्श्व जिन स्तवन

(ए गुरु वालहो रे—ए देशी)

श्री सुपार्श्व जिनराजनो रे, मुख दीठे सुख होइ रे;
मानुं सकळ पद में लह्यां रे, जो तुं नेहनजर भरी जोई;
ए प्रभु प्यारो रे, मारा चित्तनो ठारणहार मोहनगारो रे. १

सिंचे विश्र्व सुधारसे रे, चंद्र रह्यो पण दूर रे;
तिम प्रभु करुणादृष्टिथी रे, लहिये सुख महमूर. ए० २

वाचक यश कहे तिम करो रे, रहिये जेम हजूर रे;
पीजे वाणी मीठडी रे, जेहवो सरस खजूर. ए० ३

---

(७) श्री श्रीधर जिन स्तवन

(रसियानी देशी)

सेमुख मुख प्रभुने न मळी शक्यो,
तो शी वात कहाय, जिणंदजी;
निज पर वीतक वात लहो सहु,
पण मने किम पतित आय जि० से० १

भव्य अभव्य परित्त अनंत तो,
कृष्ण शुक्ल पक्ष धार; जि०
आराधक विराधक रीतनो,
पूछी करत निरधार. जि० से० २

किण काळे कारण केहवे मळे,
थाशे मुजने हो सिद्धि; जि०
आतमतत्त्व रुचि निज रिद्धिनी,
लहीशुं सर्व समृद्धि. जि० से० ३

एक वचन जिन आगमनो लही,
निपाव्यां निज काम; जि०
एटले आगम कारण संपजे,
ढील थई किम आम. जि० से० ४

श्रीधरजिन नामे बहु निस्तर्या,
अल्प प्रयासे हो जेह; जि०
मुज सरिखो एटले कारण लहे,
न तरे कहो किम तेह. जि० से० ५

कारण जोगे साधे तत्त्वने,
नवि समर्थो उपादान; जि०
श्री जिनराज प्रकाशो मुज प्रते,
तेहनो कोण निदान. जि० से० ६

भावरोगना वैद्य जिनेश्वरु,
भावौषध तुज भक्ति; जि०
देवचंद्रने श्री अरिहंतनो,
छे आधार ए व्यक्ति जि० से० ७

---

(८) श्री अनंतवीर्य जिन स्तवन

(चरणाली चामुंडा रण चढे–ए देशी)

अनंतवीरज जिनराजनो, शुचि वीरज परम अनंत रे;
निज आतम भावे परिणम्यो, गुणवृत्ति वर्तनावंत रे;
मन मोह्युं अमारुं प्रभुगुणे. १

यद्यपि जीव सहु सदा, वीर्यगुण सत्तावंत रे;
पण कर्मे आवृत चल तथा, बाळ बाधक भाव लहंत रे. म० २

अल्पवीर्य क्षयोपशम अछे, अविभाग वर्गणा रूप रे;
षड्गुण एम असंख्यथी, थाये योगस्थान सरूप रे. म० ३

सुहम निगोदी जीवथी, जावसन्नीवर पज्जत रे;
योगनां ठाण असंख्य छे, तरतम मोहे परायत्त रे. म० ४

संयमने योगे वीर्य ते, तुम्हें कीधो पंडित दक्ष रे;
साध्य रसी साधकपणे, अभिसंधि रम्यो निज लक्ष रे. म० ५

अभिसंधि अबंधक नीपने, अनभिसंधि अबंधक थायरे;
स्थिर एक तत्त्वता वर्तते, ते क्षायिक शक्ति समाय रे. म० ६

चक्रभ्रमण न्याय सयोगता, तजी कीध अयोगी धाम रे;
अकरण वीर्य अनंतता, निजगुण सहकार अकाम रे. म० ७

शुद्ध अचल निजवीर्यनी, निरुपाधिक शक्ति अनंत रे;
ते प्रगटी में जाणी सही, तिणे तुमहीज देव महंत रे. म० ८

तुज ज्ञाने चेतना अनुगमी, मुज वीर्य स्वरूप समाय रे;
पंडित क्षायिकता पामशे, ए पूरणसिद्धि उपाय रे. म० ९

नायक तारक तुं धणी, सेवनथी आतम सिद्धि रे;
देवचंद्र पद संपजे, वर परमानंद समृद्धि रे.म० १०

---

(८) श्री अनंतवीर्य जिन स्तवन

जिम मधुकर मन मालती रे,
जिम कुमुदने चित्त चंद रे जिणंदराय;
जिम गज मन रेवा नदी रे,
कमळा मन गोविंद रे जिणंदराय.
युं मेरे मन तुं वस्योजी. १

चातक चित्त जिम मेहुलो रे, जिम पंथी मन गेह रे; जि०
हंसा मन मानसरोवरु रे, तिम मुज तुजशुं नेह रे. जि० युं० २

जिम नंदनवन इन्द्रने रे, सीताने वहालो राम रे; जि०
धरमीने मन संवरु रे, व्यापारी मन दाम रे. जि० युं० ३

अनंतवीर्य गुणसागरु रे, धातकी खंड मोझार रे; जि०
पूरव अरध नलिनावती रे, विजय अयोध्या धार रे. जि० युं० ४

मेघराय मंगळावती रे, सुत, विजयावती कंत रे; जि०
गज लंछन योगीसरु रे, हुं समरुं महामंत रे. जि० युं० ५

चाहे चतुर चूडामणि रे, कविता अमृतनी केळ रे; जि०
वाचकयश कहे सुख दीओरे, मुज तुज गुण रंगरेल रे. जि० युं० ६

---

(८) श्री चंद्रप्रभ जिन स्तवन

(भोळाशंभु—ए देशी)

मोरा स्वामी चंद्रप्रभ जिनराय, विनतडी अवधारिये, जीरेजी;
मोरा स्वामी तुम्हे छो दीनदयाळ, भवजलथी मुज तारिये. जी० १

मोरा स्वामी हुं आव्यो तुज पास, तारकजाणी गहगही; जी०
मोरा स्वामी जोतां जगमां दीठ, तारक को बीजो नहीं. जी० २

मोरा स्वामी अरज करंता आज, लाज वधे कहो केणिपरे; जी०
मोरा स्वामी यश कहे गोपय तुल्य, भवजळथी करुणा धरे. जी० ३

---

(८) श्री दत्तप्रभु स्तवन

(राग धमाल)

जिन सेवनथें पाइए हो, शुद्धातम मकरंद, ललना;
तत्त्वप्रतीत वसंतऋतु प्रगटी, गई शिशिर कुप्रतीत ललना.
दुरमति रजनी लघु भई हो, सद्‌बोध दिवस वदीत. ल० जि० १

साध्यरुचि सुसखा मिली हो, निज गुण चरचा खेल; ल०
बाधक भावकी नंदना हो, बुध मुखगारिको मेल. ल० जि० २

प्रभुगुण गान सुछंदशुं हो, वाजिंत्र अतिशय तान; ल०
शुद्ध तत्त्व बहु मानता हो, खेलत प्रभुगुण ध्यान. ल० जि० ३

गुण बहुमान गुलालशुं हो, लाल भये भवि जीव; ल०
राग प्रशस्तकी धूममें हो, विभाव विडारे अतीव. ल० जि० ४

जिनगुण खेलमें खेलते हो, प्रगट्यो निजगुण खेल; ल०
आतम घर आतम रमे हो, समता सुमतिके मेल. ल० जि० ५

तत्त्व प्रतीत प्याले भरे हो, जिनवाणी रसपान; ल०
निर्मल भक्ति लाली जगी हो, रीझे एकत्वता तान. ल० जि० ६

भव वैराग अबीरशुं हो, चरण रमण सुमहंत; ल०
सुमति गुपति वनिता रमे हो, खेले हो शुद्ध वसंत. ल० जि० ७

चाचरगुण रसिया लिये हो, निज साधक परिणाम; ल०
कर्मप्रकृति अरति गई हो, उलसित अमृत उद्दाम. ल० जि० ८

थिर उपयोग साधन मुखे हो, पिचकारीकी धार; ल०
उपशम रसभरी छांटतां हो, गई तताई अपार. ल० जि० ९

गुण पर्याय विचारतां हो, शक्ति व्यक्ति अनुभुति; ल०
द्रव्यास्तिक अवलंबतां हो, ध्यान एकत्व प्रसूति. ल० जि० १०

राग प्रशस्त प्रभावना हो, निमित्त करण उपभेद; ल०
निर्विकल्प सुसमाधिमें हो, भये हे त्रिगुण अभेद. ल० जि० ११

इम श्रीदत्तप्रभु गुणे हो, फाग रमे मतिवंत; ल०
पर परिणतिरज धोयके हो, निरमळ सिद्धि वरंत. ल० जि० १२

कारणथें कारज सधे हो, एह अनादिकी चाल; ल०
देवचंद्रपद पाईये हो, करत निज भाव संभाळ. ल० जि० १३

(९) श्री सूरप्रभ जिन स्तवन

(कडखानी देशी)

सुर जगदीशनी तीक्ष्ण अति शूरता,
तेणे चिरकालनो मोह जीत्यो;
भाव स्याद्वादता शुद्ध परगाश करी,
नीपनो परम पद जग वदीतो. सु० १

प्रथम मिथ्यात्व हणी शुद्ध दंसण निपुण,
प्रगट करी जेणे अविरति पणासी;
शुद्ध चारित्र गत वीर्य एकत्वथी,
परिणति कलुषता सवि विणाशी. सु० २

वारी परभावनी कर्तृता मूलथी,
आत्म परिणाम कर्तृत्व धारी;
श्रेणी आरोहतां वेद हास्यादिनी,
संगमी चेतना प्रभु निवारी. सु० ३

भेद ज्ञाने यथा वस्तुता ओळखी,
द्रव्य पर्यायमें थई अभेदी;
भाव सविकल्पता छेदी केवल सकल,
ज्ञान अनंतता स्वामी वेदी. सु० ४

वीर्यक्षायिक बले चपलता योगनी,
रोधी चेतन कर्यो शुचि अलेशी;
भाव शैलेशीमें परम अक्रिय थई,
क्षय करी चार तनु कर्मशेषी. सु० ५

वर्ण रस गंध विनु फरस संस्थान विनु,
योगतनु संग विनु जिन अरूपी;

परम आनंद अत्यंत सुख अनुभवी,
तत्त्वतन्मय सदा चित्स्वरूपी. सू० ६

ताहरी शूरता धीरता तीक्ष्णता,
देखी सेवक तणो चित्त राच्यो;
राग सुप्रशस्तथी गुणी आश्चर्यता,
गुणी अद्‌भुतपणे जीव माच्यो. सू० ७

आत्मगुण रुचि थये तत्त्व साधन रसी,
तत्त्व निष्पत्ति निर्वाण थावे;
देवचंद्र शुद्ध परमात्म सेवन थकी,
परम आत्मिक आनंद पावे. सू० ८

---

(९) श्री सूरप्रभ जिन स्तवन

(रामपुरा बजारमां—ए देशी)

सूरप्रभ जिनवर धातकी, पश्चिम अर्धे जयकार; मेरे लाल,
पुष्कलावई विजये सोहामणो, पुरी पुंडरिगिणी शणगार, मेरे लाल,
चतुर शिरोमणि साहिबो.१

नंदसेनानो नाहलो, हय लंछन विजय मल्हार; मे०
विजयावती कूखे ऊपन्यो, त्रिभुवननो आधार. मे० च० २

अलवे जस साहमुं जुए, करुणाभर नयन विलास; मे०
ते पामे प्रभुता जगतणी, एहवो छे प्रभु सुखवास. मे० च० ३

मुखमटके जगजन वश करे, लोयण लटके हरे चित्त; मे०
चारित्र चटके पातिक हरे, अटके नहि करतो हित. मे० च० ४

उपकारी शिर सेहरो, गुणनो नवि आवे पार; मे०
श्री नयविजय सुशिष्यने, होजो नित्य मंगळमाळ. मे० च० ५

---

(९) श्री सुविधि जिन स्तवन

जिम प्रीति चंद्र चकोरने, जिम मोरने मन मेह रे;
अमने ते तुमशुं उल्लसे, तिम नाह नवलो नेह.
सुविधि जिनेसरु, सांभळो चतुर सुजाण अति अलवेसरु. १

अण दीठे अलजो घणो, दीठे ते तृप्ति न होई रे;
मन तोहि सुख मानी लिये, वाहला तणुं मुख जोई. सु० २

जिम विरह कहिये नवि हुये, कीजिये तेहवो संच रे;
कर जोडी वाचक यश कहे, भांजो ते भेद प्रपंच. सु० ३

---

(९) श्री दामोदर जिन स्तवन

(मोरा साहिब हो श्री शीतलनाथ के–ए देशी)

सुप्रतीते हो करी थिर उपयोग के, दामोदर जिन वंदीए,
अनादिनी हो जे मिथ्या भ्रांति के, तेह सर्वथा छंडीए;
अविरति हो जे परिणति दुष्ट के, टाळी थिरता साधीए,
कषायनी हो कश्मलता कापी के, वर समता आराधीए. १

जंबुने हो भरते जिनराज के, नवमा अतीत चोवीशीए,
जस नामे हो प्रगटे गुणराशि के, ध्याने शिवसुख विलसीए;
अपराधी हो जे तुजथी दूर के, [1]भूरि भ्रमण दुःखना धणी,
ते माटे हो तुज सेवा रंग के, होजो ए इच्छा घणी. २

मरुधरमें हो जिम [2]सुरतरु लुंबके, सागरमें [3]प्रवहण समो,
भव भमतां हो भविजन-आधार के प्रभुदरिशण सुख अनुपमो;
आतमनी हो जे शक्ति अनंत के, तेह स्वरूप पदे धर्या,
परिणामिक हो ज्ञानादिक धर्म के, स्वस्वकार्यपणे वर्या. ३

---

१. बहु, २. आंबानी केरीनुं लुमखुं, ३. जहाज जेवो

अविनाशी हो जे आत्मानंद के, पूर्ण अखंड स्वभावनो,
निज गुणनो हो जे वर्तन धर्म के, सहज विलासी दावनो;
तस भोगी हो तुं जिनवर देवके, त्यागी सर्व विभावनो,
श्रुतज्ञानी हो न कही शके सर्व के, महिमा तुज प्रभावनो. ४

निःकामी हो निःकषायी नाथ के, साथ होजो नित तुम्ह तणो,
तुम आणा हो आराधन शुद्ध के, साधुं हुं साधकपणो;
वीतरागथी हो जे राग विशुद्ध के, तेही ज भवभय वारणो,
जिनचंद्रनी हो जे भक्ति एकत्व के, देवचंद्र पद कारणो. ५

---

(१०) श्री विशाल जिन स्तवन

देव विशाल जिणंदनी, तमे ध्यावो तत्त्वसमाधि रे,
चिदानंद रस अनुभवी, सहज अकृत निरुपाधि रे,
सहज अकृत निरुपाधि रे अरिहंतपद वंदिये गुणवंत रे;
गुणवंत अनंत महंत स्तवो, भवतारणो भगवंत रे. १

भव उपाधि गद टालवा, प्रभुजी छो वैद्य अमोघ रे;
रत्नत्रयी औषध करी, तमे तार्या भविजन ओघ रे. त॰अ॰ २

भव समुद्र जल तारवा, निर्यामक सम जिनराज रे;
चरण जहाजे पामिये, अक्षय शिवनगरनुं राज रे. अ॰अ॰ ३

भवअटवी अति गहनथी, पारग प्रभुजी सत्थवाहरे;
शुद्ध मार्गदर्शक पणे, योग क्षेमंकर नाह रे. यो॰अ॰ ४

रक्षक जिन छकायना, वळी मोहनिवारक स्वामीरे;
श्रमणसंघ रक्षक सदा, तेणे गोप ईश अभिराम रे. ते॰अ॰ ५

भाव अहिंसक पूर्णता, माहणता उपदेश रे;
धर्म अहिंसक नीपनो, माहण जगदीश विशेष रे. मा॰अ॰ ६

पुष्ट कारण अरिहंतजी, तारक ज्ञायक मुनिचंदरे;
मोचक सर्व विभावथी, झींपावे मोह अरींद रे. झीं०अ०७

कामकुंभ सुरमणि परे, सहेजे उपकारी थाय रे;
देवचंद्र सुखकर प्रभु, गुणगेह अमोह अमाय रे. गु०अ०८

---

(१०) श्री विशाल जिन स्तवन

धातकी खंडे हो के पश्चिम अरध भलो,
विजया नयरी हो के वप्र ते विजयतिलो;
तिहां जिन विचरे हो के स्वामी विशाळ सदा,
नित नित वंदुं हो के विमळा कंत मुदा. १

नाग नरेसर हो के वंश उद्योतकरु,
भद्राए जाया हो के प्रत्यक्ष देवतरु;
भानु लंछन हो के मिलवा मन तलसे,
तस गुण सुणिया हो के श्रवणे अमी वरसे. २

आंखडी दीधी हो के जो होये मुज मनने,
पांखडी दीधी हो के अथवा जो तनने;
मनना मनोरथ हो के तो सवि तुरत फळे,
तुज मुख देखवा हो के हरखित हेज मळे. ३

आडा डुंगर हो के दरिया नदिय घणी,
पण शक्ति न तेहवी हो के आवुं तुज भणी;
तुज पाय सेवा हो के सुरवर कोडि करे,
जो एक आवे हो के तो मुज दुःख हरे. ४

अति घणी राती हो के अग्नि मजीठ सहे,
घणशुं हणीए हो के देश वियोग लहे;

पण गिरुआ प्रभुशुं हो के राग ते दुरित हरे,
वाचक यश कहे हो के धरीए चित्त खरे. ५

---

(१०) श्री शीतलनाथ जिन स्तवन

(भोलीडा हंसा रे—ए देशी)

शीतलजिन तुज मुज विचि आंतरु, निश्चयथी नहि कोय,
दंसण नाण चरण गुण जीवने, सहुने पूरण होय;
अंतरयामी रे स्वामी सांभळो. अं० १

पण मुज माया रे भेदी भोळवे, बाह्य देखाडी रे वेष;
हियडे जूठी रे मुख अति मीठडी, जेहवी धूरत वेष. अं० २

एहने स्वामी रे मुजथी वेगळी, कीजे दीनदयाळ;
वाचकयश कहे जिम तुमशुं मिली, लहिये सुख सुविशाळ. अं० ३

---

(१०) श्री सुतेज जिन स्तवन

अति रूडी रे अति रूडी, जिनजीनी थिरता अति रूडी;
सकल प्रदेश अनंती, गुण पर्याय शक्ति महंती लाल, अ०
तसु रमणे अनुभववंती, पररमणे जे न रमंती लाल. अ० १

उत्पाद व्यये पलटंती, ध्रुव शक्ति त्रिपदीसंती लाल, अ०
उत्पादे उतपतमंती, पूरव परिणति व्ययपंती लाल. अ० २

नव नव उपयोगे नवली, गुणछतिथी ते नित अचली लाल, अ०
परद्रव्ये जे नवि गमणी, क्षेत्रांतरमांहि न रमणी लाल. अ० ३

अतिशय योगे नवि दीपे, परभाव भणी नवि छीपे लाल, अ०
निज तत्त्व रसे जे लीनी, बीजे किणही नवि कीनी लाल. अ० ४

संग्रहनयथी जे अनादि, पण एवंभुते सादि लाल, अ०
जेहने बहु माने प्राणी, पामे निज गुण सहनाणी लाल. अ० ५

थिरताथी थिरता वाधे, साधक निज प्रभुता साधे लाल, अ०
प्रभुगुणने रंगे रमता, ते पामे अविचल समता लाल. अ० ६

निज तेजे जेह सुतेजा, जे सेवे धरी बहु हेजा लाल, अ०
शुद्धालंबन जे प्रभु ध्यावे, ते देवचंद्र पद पावे लाल. अ० ७

---

(११) श्री वज्रंधर जिन स्तवन

(नदी यमुनाके तीर—ए देशी)

विहरमान भगवान, सुणो मुज विनति,
जगतारक जगनाथ, अछो त्रिभुवनपति;
भासक लोकालोक, तिणे जाणो छति,
तो पण वीतक वात, कहुं छुं तुज प्रति. १

हुं स्वरूप निज छोडी, रम्यो पर पुद्गले,
झील्यो ऊलट आणी, विषय तृष्णाजले;
आस्त्रव बंध विभाव, करुं रुचि आपणी,
भूल्यो मिथ्यावास, दोष दउं परभणी. २

अवगुण ढांकण काज, करुं जिनमत क्रिया,
न तजुं अवगुण चाल, अनादिनी जे प्रिया;
दृष्टिरागनो पोष, तेह समकित गणु,
स्याद्वादनी रीत, न देखुं निजपणुं. ३

मन तनु चपल स्वभाव, वचन एकांतता,
वस्तु अनंत स्वभाव, न भासे जे छता;
जे लोकोत्तर देव, नमुं लौकिकथी,
दुर्लभ सिध्ध स्वभाव, प्रभो तहकीकथी. ४

महाविदेह मझार के, तारक जिनवरु,
श्री वज्रंधर अरिहंत, अनंत गुणाकरु;

ते निर्यामक श्रेष्ठ, सही मुज तारशे,
महावैद्य गुणयोग, रोगभव वारशे. ५

प्रभुमुख भव्य स्वभाव, सुणुं जो माहरो,
तो पामे प्रमोद, एह चेतन खरो;
थाये शिवपद आश, राशि सुखवृंदनी,
सहज स्वतंत्र स्वरूप, खाण आनंदनी. ६

वळग्या जे प्रभुनाम, धाम ते गुणतणा,
धारो चेतनराम, एह थिर वासना;
देवचंद्र जिनचंद्र, हृदय स्थिर थापजो,
जिन आणायुत भक्ति शक्ति मुज आपजो. ७

---

(११) श्री वज्रंधर जिन स्तवन

शंख लंछन वज्रंधर स्वामी, माता सरस्वती सुत शिवगामी हो,
भावे भवि वंदो.
नरनाथ पद्मरथ जायो, विजयावती चित्त सुहायो हो. भा० १

खंड धातकी पश्चिम भागे, प्रभु धर्म धुरंधर जागे हो; भा०
वच्छविजयमां नयरी सुसीमा, तिहां थापे धरमनी सीमा हो. भा० २

प्रभु मनमां अमे वसवुं जेह, स्वप्ने पण दुर्लभ तेह हो; भा०
पण अम मन प्रभु जो वसशे, तो धरमनी वेल उल्लसशे हो. भा० ३

स्वपने प्रभुमुख नीरखंतां, अमे पामु सुख हरखंतां हो; भा०
जेह स्वप्नरहित कहिया देवा, तेहथी अमे अधिक कहेवा हो. भा० ४

मणि माणिककनकनी कोडी, राणीम ऋध्धि रमणी जोडी हो; भा०
प्रभु दरिशणना सुख आगे, कहो अधिकेरुं कुण मागे हो. भा० ५

प्रभु दूर थकी पण भेट्या, तेणे प्रेम दु:ख सवि मेट्या हो; भा०
गुरु श्री नयविजय सुशिष्य, प्रभु ध्यान रमे निशदिश हो. भा० ६

(११) श्री श्रेयांस जिन स्तवन

(मुख मरकलडे—ए देशी)

श्रेयांस जिनेश्वर दाताजी, साहिब सांभळो;
तुमे जगमां अति विख्याताजी; सा०
मांग्युं देतां ते किशुं विमासोजी, सा०
मुज मनमां एह तमासोजी. सा० १

तुम देतां सवि देवायेजी, सा०
तो अजर[1] कर्ये शुं थायेजी; सा०
यश पूरण केम लहीजेजी, सा०
जो अरज करीने दीजेजी. सा० २

जो अधिकुं द्यो तो देजोजी, सा०
सेवक करी चित्त धरेजोजी; सा०
यश कहे तुम पद सेवाजी, सा०
ते मुज सुरतरुफळ मेवाजी. सा० ३

(११) श्री स्वामीप्रभ जिन स्तवन

(रहो रहो रहो रहो वालहा—ए देशी)

नमि नमि नमि नमि वीनवु, सुगुण स्वामी जिणंद नाथ रे;
ज्ञेय सकल जाणंग तुमे, प्रभुजी ज्ञानदिणंद नाथ रे. न० १

वर्तमान ए जीवनी, एहवी परिणति केम; ना०
जाणुं हेय विभावने, पिण नवि छूटे प्रेम. ना० न० २

१.जरा (जन्मादि) रहित अक्षय

परपरिणतिरस रंगता, पर ग्राहकता भाव; ना०
पर करता पर भोगता, श्यो थयो एह स्वभाव. ना० न० ३

विषय कषाय अशुद्धता, न घटे ए [1]निरधार; ना०
तो पण वंछुं तेहने, किम तरीए संसार. ना० न० ४

मिथ्या अविरति [2]प्रमुखने, नियमा जाणुं दोष; ना०
निंदुं गरहुं वळी वळी, पण ते पामे संतोष. ना० न० ५

अंतरंग पररमणता, टलशे किश्ये उपाय; ना०
आणा आराधन विना, किम गुणसिद्धि थाय. ना० न० ६

हवे जिन वचन प्रसंगथी, जाणी साधक नीति; ना०
शुद्ध साध्य रुचिपणे, करीए साधन रीति. ना० न० ७

भाव ने रमण प्रभुगुणे, योग गुणी आधीन; ना०
राग ते जिनगुणरंगमें, प्रभु दीठां रति पीन. ना० न० ८

हेतु पलटावी सवे, जोड्या गुणी गुण भक्ति; ना०
तेह प्रशस्तपणे रम्या, साधे आतमशक्ति. ना० न० ९

धन तन मन वचना सवे, जोड्यां स्वामी पाय; ना०
बाधक कारण वारतां, साधन कारण थाय. ना० न० १०

आतमता पलटावतां, प्रगटे संवर रूप; ना०
स्वस्वरूप रसी करे, पूर्णानंद अनुप. ना० न० ११

विषय कषाय जहर टळी, अमृत थाये एम; ना०
जे परसिद्ध रुचि हुवे, तो प्रभुसेवा धरी प्रेम. ना० न० १२

कारण रंगी कार्यने, साधे अवसर पामी; ना०
देवचंद्र जिनराजनी, सेवा शिवसुख धामी. ना० न० १३

---

१. जरूर, २. वगेरेने

(१२) श्री चंद्रानन जिन स्तवन

(वीरा चांदला–ए देशी)

चंद्रानन जिन, चंद्रानन जिन, सांभळीए अरदास रे;
मुज सेवक भणी छे प्रभुनो विश्वासो रे. चं०१

भरतक्षेत्र मानवपणो रे, लाधो दुःषम काल;
जिन पूरवधर विरहथी रे, दुलहो साधन चालो रे. चं०२

द्रव्य क्रिया रुचि जीवडा रे, भाव धर्म रुचिहीन;
उपदेशक पण तेहवा रे, शुं करे जीव नवीन रे. चं०३

तत्त्वागम जाणंग तजी रे, बहुजन संमत जेह;
मूढ हठी जन आदर्या रे, सुगुरु कहावे तेह रे. चं०४

आणा साध्य विना क्रिया रे, लोके मान्यो रे धर्म;
दंसण नाण चारित्रनो रे, मूळ न जाण्यो मर्म रे. चं०५

गच्छ कदाग्रह साचवे रे, माने धर्म प्रसिद्ध;
आतमगुण अकषायता रे, धर्म न जाणे शुद्ध रे. चं०६

तत्त्वरसिक जन थोडला रे, बहुलो जन संवाद;
जाणो छो जिनराजजी रे, सघलो एह विषाद रे. चं०७

नाथ चरण वंदनतणो रे, मनमां घणो उमंग;
पुण्य विना किम पामीए रे, प्रभुसेवननो रंग रे. चं०८

जगतारक प्रभु वंदीए रे, महाविदेह मझार;
वस्तु धर्म स्याद्वादता रे, सुणी करिये निर्धार रे. चं०९

तुज करुणा सहु उपरे रे, सरखी छे महाराय;
पण अविराधक जीवने रे, कारण सफलुं थाय रे. चं०१०

एहवा पण भवि जीवने रे, देव भक्ति आधार;
प्रभु समरणथी पामिये रे, देवचंद्र पद सार रे. चं०११

(१२) श्री चंद्रानन जिन स्तवन

नलिनावती विजये जयकारी, चंद्रानन उपगारी रे सुण विनति मोरी,
पश्चिम अरधे धातकी खंडे, नयरी अयोध्या मंडे रे. सु० १

राणी लीलावती चित्त सुहायो, पद्मावतीनो जायो रे; सु०
नृप वाल्मीक कुळे तुं दीवो, वृषभ लंछन चिरंजीवो रे. सु० २

केवळ ज्ञान अनंत खजानो, नहि तुज जगमांहे छानो रे; सु०
तेहनो लव देतां शुं नासे, मनमांहे कांई विमासे रे. सु० ३

रयण एक दिये रयणे भरियो, जो गाजंतो दरियो रे; सु०
तो तेहने कांई हाण न आवे, लोक ते संपत्ति पावे रे. सु० ४

अलि माचे परिमल लव पामी, पंकज वन नहि खामी रे; सु०
अंब लुंब कोटि नवि छीजे, एक पिक सुख दीजे रे. सु० ५

चंद्रकिरण विस्तारे छोछुं, नवि होये अमीयमां ओछुं रे; सु०
आशा तारक हे बहुत निहोरा, ते होवे सुखित चकोरा रे. सु० ६

तिम जो गुण लव दीओ तुम हेजे, तो अमे दीपुं तेजे रे; सु०
वाचक यश कहे वांछित देशो, धर्मनेह निरवहेशो रे. सु० ७

---

(१२) श्री वासुपूज्य जिन स्तवन

(विषय न गंजीए—ए देशी)

वासुपूज्य जिन वालहा रे, संभारो निज दास;
साहिबशुं हठ नवि होये रे, पण कीजे अरदास रे.
चतुर विचारिये. १

श्वास पहिला सांभरे रे, मुख दीठे सुख होय;
विसार्या नवि वीसरे रे, तेहशुं हठ किम होय रे. च० २

आमण दुमण नवि टळे रे, खण विण पूरे रे आश;
सेवक यश कहे दीजीए रे, निज पदकमळनो वास रे. च० ३

---

(१२) श्री मुनिसुव्रत जिन स्तवन

दीठो दरिशण श्री प्रभुजीनो, साचे रागे मनशुं भीनो;
जसु रागे नीरागी थाये, तेहनी भक्ति कोने न सुहाये. १

पुद्‌गल आशारागी अनेरा, तसु पासे कुण खाये फेरा;
जसु भक्ते निरभयपद लहिये, तेहनी सेवामां थिर रहीए. २

रागी सेवकथी जे राचे, बाह्य भक्ति देखीने माचे;
जसु गुण दाझे तृष्णा आंचे, तेहनो सुजस चतुर किम वांचे. ३

पूरण ब्रह्म ने पूर्णानंदी, दर्शन ज्ञान चरण रस कंदी;
सकळ विभाव प्रसंग अफंदी, तेह देव समरस मकरंदी. ४

तेहनी भक्ति भवभय भांजे, निर्गुण पिण गुणशक्ति गाजे;
दासभाव प्रभुताने आपे, अंतरंग कळिमळ सवि कापे. ५

अध्यातम सुखकारण पूरो, स्वस्वभाव अनुभूति सनूरो;
तसु गुण वळगी चेतना कीजे, परम महोदय शुद्ध लहीजे. ६

मुनिसुव्रतप्रभु प्रभुता लीना, आतम संपत्ति भासन पीना;
आणारंगे चित्त धरीजे, देवचंद्रपद शीघ्र वरीजे. ७

---

(१३) श्री चंद्रबाहु जिन स्तवन

(श्री अरनाथ उपासना—ए देशी)

चंद्रबाहुजिन सेवना, भवनाशिनी तेह;
परपरिणतिना पासने, निष्कासन रेह. चं० १

पुद्‌गल भाव आशंसना, उद्‌घासन केतु;
सम्यग्‌दर्शन वासना, भासन चरण समेतु. चं० २

त्रिकरण योग प्रशंसना, गुणस्तवना रंग;
वंदन पूजन भावना, निज पावना अंग. चं० ३

परमातम पद कामना, कामनाशन एह;
सत्ताधर्म प्रकाशना, करवा गुण गेह. चं० ४

परमेश्वर आलंबना, राच्या जेह जीव;
निर्मळ साध्यनी साधना, साधे तेह सदीव. चं० ५

परमानंद उपासवा, प्रभु पुष्ट उपाय;
तुज सम तारक सेवतां, परसेव न थाय. चं० ६

शुद्धातम संपत्तितणा, तुम्हें कारण सार;
देवचंद्र अरिहंतनी, सेवा सुखकार. चं० ७

---

(१३) श्री चंद्रबाहु जिन स्तवन

देवानंद नरींदनो रे, जनरंजनो रे लाल;
नंदन चंदन वाणी रे, दुःखभंजनो रे लाल.
राणी सुगंधा वालहो रे, जन० कमललंछन सुखखाण रे. दु० १

पुष्कर दीव पुष्कलावई रे, ज० विजय विजय सुखकार रे; दु०
चंद्रबाहु पुंडरीगिणी रे, ज० नगरीए करे विहार रे. दु० २

तस गुणगण गंगाजले रे, ज० मुज मन पावन कीध रे; दु०
फिरि ते मेलुं किम हुवे रे, ज० अकरण नियम प्रसिद्ध रे. दु० ३

अंतरंग गुण गोठडी रे, ज० निश्चय समकित तेह रे; दु०
विरला कोईक जाणशे रे, ज० ते तो अगम अछेह रे. दु० ४

नागर जननी चातुरी रे, ज० पामर जाणे केम रे; दु०
तिम कुण जाणे सांईशुं रे, ज० अम निश्चयनय प्रेम रे. दु० ५

स्वाद सुधानो जाणतो रे, ज० लालित होय कदन्न रे; दु०
पण अवसर जो ते लहे रे, ज० ते दिन माने धन्न रे. दु० ६

श्रीनयविजय विबुधतणो रे ज० सेवक कहे सुणो देव रे; दु०
चंद्रबाहु मुज दीजीए रे, ज० निज पय पंकज सेव रे. दु० ७

(१३) श्री विमलनाथ जिन स्तवन

(ललनानी ढाल)

विमलनाथ मुज मन वसे, जिम सीता मन राम, ललना;
पिक[1] वंछे सहकारने[2], पंथी मन जिम धाम; ललना. वि० १

कुंजर चित्त रेवा वसे, कमळा मन गोविंद; ल०
गौरी मन शंकर वसे, कुमुदिनी मन जिम चंद. ल० वि० २

अलि मन विकसित मालती, कमलिनी चित्त दिणंद; ल०
वाचक यशने वालहो, तेम श्री विमल जिणंद. ल० वि० ३

(१३) श्री सुमतिनाथ जिन स्तवन

(कन्हैयालाल–ए देशी)

प्रभुशुं इश्युं वीनवुं रे लाल, मुज विभाव दुःख रीत रे;
साहिबा लाल;
तीन काळना ज्ञेयनी रे लाल, जाणो छो सहु नीति रे. सा० प्र० १

ज्ञेय ज्ञानशुं नवि मिले रे लाल, ज्ञान न जाये तत्थ रे; सा०
प्राप्तअप्राप्त अमेयने रे लाल, जाणो जे जिम जथ्थ रे. सा० प्र० २

छतिपर्याय जे ज्ञानना रे लाल, ते तो नवि पलटाय रे; सा०
ज्ञेयनी नव नव वर्तना रे लाल, सवि जाणे असहाय रे. सा० प्र० ३

धर्मादिक[3] सहु द्रव्यनो रे लाल, प्राप्तभणी सहकार रे; सा०
रसनादिक गुणवर्त्तता रे लाल, निज क्षेत्रे ते धार रे. सा० प्र० ४

१. कोकिल, २. आंबाने, ३. धर्मास्तिकाय आदि छये द्रव्यना

जाणंग अभिलाषी नहि रे लाल नवि प्रतिबिंबे ज्ञेय रे; सा०
कारक शक्ते जाणवुं रे लाल, भाव अनंत अमेय रे. सा०प्र०५

तेह ज्ञान सत्ता थके रे लाल, न जणाये निज तत्त्व रे; सा०
रुचि पण तेहवी नवि वधेरे लाल ए अम मोहमहत्त्व रे. सा०प्र०६

मुज ज्ञायकता पररसी रे लाल, परतृष्णाये तप्त रे; सा०
ते समतारस अनुभवे रे लाल, सुमतिसेवन व्याप्त रे. सा०प्र०७

बाधकता पलटाववा रे लाल, नाथभक्ति आधार रे; सा०
प्रभुगुणरंगी चेतना रे लाल, एहि ज जीवन सार रे. सा०प्र०८

अमृत-अनुष्ठाने रह्यो रे लाल, अमृतक्रियाने उपाय रे; सा०
देवचंद्र रंगे रमे रे लाल, ते सुमतिदेव पसाय रे. सा०प्र०९

---

(१४) श्री भुजंगस्वामी स्तवन

(देशी लुअरनी)

पुष्कलावई विजये हो के विचरे तीर्थपति,
प्रभुचरणने सेवे हो, के सुर नर असुरपति;
जसु गुण प्रगट्यो हो, के सर्व प्रदेशमां,
आतम गुणनी हो, के विकसी अनंत रमा. १

सामान्य स्वभावनी हो, के परिणति असहाई,
धर्म विशेषनी हो, के गुणने अनुजाई;
गुण सकल प्रदेशे हो, के निज निज कार्य करे,
समुदाय प्रवर्ते हो, के कर्त्ता भाव धरे. २

जड द्रव्य चतुष्के हो, के कर्त्ताभाव नहीं,
सर्व प्रदेशे हो, के वृत्ति विभिन्न कही;
चेतन द्रव्यने हो, के सकल प्रदेश मिले,
गुणवर्तना वर्ते हो, के वस्तुने सहज बले. ३

शंकर सहकारी हो, के सहज गुण वरते,
द्रव्यादिक परिणति हो, के भावे अनुसरते;
दानादिक लब्धि हो, के न हुवे सहाय विना,
सहकार अकंपे हो, के गुणनी वृत्ति घना. ४

पर्याय अनंता हो के जे एक कार्यपणे,
वरते तेहने हो, के जिनवर गुण पभणे;
ज्ञानादिक गुणनी हो, के वर्तना जीव प्रते,
धर्मादिक द्रव्यने हो, के सहकार करते. ५

ग्राहक व्यापकता हो, के प्रभु तुम धर्म रमी,
आतम अनुभवथी हो, के परिणति अन्य वमी;
तुज शक्ति अनंती हो, के गातां ने ध्यातां,
मुज शक्ति विकासन हो, के थाये गुण रमतां. ६

इम निज गुण भोगी हो, के स्वामी भुजंग मुदा,
जे नित्य वंदे हो, के ते नर धन्य सदा;
देवचंद्र प्रभुनी हो, के पुण्ये भक्ति सधे,
आतम-अनुभवनी हो के नित्य नित्य शक्ति वधे. ७

---

(१४) श्री भुजंगस्वामी स्तवन

भुजंगदेव भावे भजो, राय महाबळ नंद लाल रे;
महिमा कूखे हंसलो, कमळ लंछन सुखकंद लाल रे. भु० १

वप्र विजय विजयापुरी, करे विहार उछाह लाल रे;
पूरव अरधे पुख्खरे, गंधसेनानो नाह लाल रे. भु० २

कागळ लिखवो कारमो, आवे जो दुर्जन हाथ लाल रे;
अणमिलवुं दूरंत रे, चित्त फिरे तुम साथ लाल रे. भु० ३

किसि इसारत कीजीए, तुमे जाणो छो जगभाव लाल रे;
साहिब जाण अजाणने, सामुं करे प्रस्ताव लाल रे. भु० ४

खिजमतमां खामी नहीं, मेल न मनमां कोय लाल रे;
करुणापूरण लोयणे, सामुं कांई न जोय लाल रे. भु० ५

आसंगो मोटा तणो, कुंजर ग्रहवो कान लाल रे;
वाचक यश कहे विनति, भक्तिवशे मुज मान लाल रे. भु० ६

(१४) श्री अनंत जिन स्तवन

श्री अनंतजिन सेविये रे लाल, मोहनवल्लीकंद मनमोहना,
जे सेव्यो शिवसुख दिये रे लाल, टाळे भवभय फंद. म० श्री० १

मुख मटके जग मोहियो रे लाल, रूप रंग अतिचंग; म०
लोचन अति अणियालडां रे लाल, वाणी गंगतरंग. म० श्री० २

गुण सघळा अंगे वस्या रे लाल, दोष गया सवि दूर; म०
वाचक यश कहे सुख लहुं रे लाल, देखी प्रभु मुखनूर. म० श्री० ३

(१४) श्री शिवगति जिन स्तवन

(थारा महेला उपर मेह, झबूके वीजळी हो लाल झ०—ए देशी)

शिवगति जिनवरदेव, सेव आ दोहिली, हो लाल से०
परपरिणति परित्याग, करे तसु सोहिली; हो लाल क०
आस्रव सर्व निवारी, जेह संवर धरे, हो लाल जे०
जे जिन आणा लीन, पीन सेवन करे. हो लाल पी० १

वीतराग गुणराग, भक्ति रुचि नैगमे, हो लाल भ०
यथा प्रवृत्ति भव्यजीव, नयसंग्रह रमे; हो लाल न०

अमृतक्रिया विधियुक्त, वचन आचारथी, हो लाल व०
मोक्षार्थी जिनभक्ति, करे व्यवहारथी. हो लाल क० २

गुण प्राग्भावी कार्य,—तणे कारणपणे, हो लाल त०
रत्नत्रयी परिणाम ते, ऋजुसूत्रे भणे; हो लाल ऋ०
जे गुण प्रगट थयो, निज निज कार्य करे, हो लाल नि०
साधक भावे युक्त, शब्दनये ते धरे. हो लाल श० ३

पोते गुणपर्याय, प्रगटपणे कार्यता, हो लाल प्र०
ऊणे थाये जाव, ताव समभिरूढता; हो लाल ता०
संपूरण निज भाव, स्वकार्य कीजते, हो लाल स्व०
शुद्धातम निजरूप, —तणे रस लीजते. हो लाल त० ४

उत्सर्गे एवंभूत, ते फळने नीपने, हो लाल ते०
निःसंगी परमातम, रंगथी ते बने; हो लाल रं०
सहज अनंत अत्यंत, महंत सुखे भर्या, हो लाल म०
अविनाशी अविकार, अपार गुणे वर्या. हो लाल अ० ५

जे प्रवृत्ति भवमूळ, छेद उपाय जे, हो लाल छे०
प्रभुगुणरागे रक्त, थाय शिवदाय ते; हो लाल था०
अंश थकी सरवंश, विशुद्धपणुं ठवे, हो लाल वि०
शुक्लबीजशशिरेह, तेह पूरण हुवे. हो लाल ते० ६

तिम प्रभुथी शुचि राग, करे वीतरागता, हो लाल क०
गुण एकत्वे थाय, स्वगुण प्राग्भावता; हो लाल स्व०
देवचंद्र जिनचंद्र, सेवामांहि रहो, हो लाल से०
अव्याबाध अगाध, आत्मसुख संग्रहो. हो लाल आ० ७

---

(१५) श्री ईश्वरदेव जिन स्तवन

(काल अनंतानंत—ए देशी)

सेवो ईश्वर देव, जिणे ईश्वरता हो निज अद्‌भुत वरी;
तिरोभावनी शक्ति, आविर्भावे हो सहु प्रगट करी. १
अस्तित्वादिक धर्म, निर्मळ भावे हो सहुने सर्वदा;
नित्यत्वादि स्वभाव, ते परिणामी हो जडचेतन सदा. २
कर्त्ता भोक्ता भाव, कारक ग्राहक हो ज्ञान चारित्रता;
गुणपर्याय अनंत, पाम्या तुमचा हो पूर्ण पवित्रता. ३
पूर्णानंद स्वरूप, भोगी अयोगी हो उपयोगी सदा;
शक्ति सकल स्वाधीन, वरते प्रभुनी हो जे न चले कदा. ४
दास विभाव अनंत, नासे प्रभुजी हो तुज अवलंबने;
ज्ञानानंद महंत, तुज सेवाथी हो सेवकने बने. ५
धन्य धन्य ते जीव, प्रभुपद वंदी हो जे देशना सुणे;
ज्ञान क्रिया करे शुद्ध, अनुभव योगे हो निज साधकपणे. ६
वारंवार जिनराज, तुज पद सेवा हो होजो निर्मली;
तुज शासन अनुजाई, वासन भासन हो तत्त्वरमण वळी. ७
शुद्धातम निज धर्म, रुचि अनुभवथी हो साधन सत्यता;
देवचंद्र जिनचंद्र, भक्ति पसाये हो होशे व्यक्तता. ८

---

(१५) श्री ईश्वरदेव जिन स्तवन

(राजा जो मिले—ए देशी)

नृप गजसेन जसोदा मात, नंदन ईश्वर गुण अवदात;
स्वामी सेवीए.
पुष्करवर पूरवारध कच्छ, विजय सुसीमा नयरी अच्छ. स्वा० १

शशिलंछन प्रभु करे रे विहार, राणी भद्रावतीनो भरथार; स्वा०
जे पामे प्रभुनो देदार, धन धन ते नरनो अवतार. स्वा० २

धन ते तन जिन नमीए पाय, धन ते मन जे प्रभु गुण ध्याय; स्वा०
धन जे जीहा प्रभु गुण गाय, धन्य ते वेळा वंदन थाय. स्वा० ३

अणमिलवे उत्कंठा जोर, मिलवे विरह तणो भय सोर; स्वा०
अंतरंग मिलवे जीउ छांहि, शोक विरह जिम दूरे पलाय. स्वा० ४

तुं माता तुं बंधव मुज, तुं ही पिता तुजशुं मुज गुंज; स्वा०
श्रीनयविजय विबुधनो शिष्य, वाचकयश कहे पूरो जगीश. स्वा० ५

---

(१५) श्री धर्मनाथ जिन स्तवन

(राग मल्हार)

धरमनाथ तुज सरिखो, साहिब शिर थके रे, के सा०
चोर जोर जे फोरवे, मुजशुं इक मने रे; के मु०
गजनिमीलिका करवी, तुजने नवि घटे रे, के तु०
जे तुज सन्मुख जोतां, अरिनुं बळ मिटे रे. के अ० १

रवि ऊगे गयणांगण, तिमिर ते नवि रहे रे, के ति०
कामकुंभ घर आवे, दारिद्र किम रहे रे; के दा०
वन विचरे जो सिंह तो, बीक न गज तणी रे, के बी०
कर्म करे शुं जोर, प्रसन्न जो जगधणी रे. के प्र० २

सुगुण निर्गुणनो अंतर, प्रभु नवि चित्त धरे रे, के प्र०
निर्गुण पण शरणागत, जाणी हित करे रे; के जा०
चंद्र त्यजे नवि लंछन, मृग अति शामळो रे, के मृ०
यश कहे तिम तुम जाणी, मुज अरिबळ दळो रे. के मु० ३

(१५) श्री आस्ताग जिन स्तवन

(मन मोह्युं अमारुं प्रभुगुणे-ए देशी)

करो साचा रंग जिनेश्वरु, संसार विरंग सहु अन्य रे;
सुरपति नरपति संपदा, ते तो दुरगंधी कदन्न रे. क० १

जिन आस्ताग गुणरस रमी, चल विषय विकार विरूप रे;
विण समकित मत अभिलषे, जिणे चाख्यो शुद्धस्वरूप रे. क० २

निज गुणचिंतन जळ रम्या, तसु क्रोध [1]अनळनो ताप रे;
नवि व्यापे कापे भवस्थिति, जिम [2]शीतने [3]अर्कप्रताप रे. क० ३

जिन गुणरंगी चेतना, नवि बांधे अभिनव कर्म रे;
गुणरमणे निज गुण उल्लसे, ते आस्वादे निज धर्म रे. क० ४

परत्यागी गुण एकता, रमता ज्ञानादिक भाव रे;
स्वस्वरूप ध्याता थई, पामे शुचि क्षायक भाव रे. क० ५

गुणकरणे नव गुण प्रगटता, सत्तागत रसथिति छेद रे;
संक्रमणे उदय प्रदेशथी, करे निर्जरा टाळे खेद रे. क० ६

सहजस्वरूप प्रकाशथी, थाये पूर्णानंद विलास रे;
देवचंद्र जिनराजनी, करज्यो सेवा सुखवास रे. क० ७

---

(१६) श्री नमिप्रभ जिन स्तवन

(अरज अरज सुणोने रूडा राजीया होजी—ए देशी)

नमिप्रभ नमिप्रभ प्रभुजी वीनवुं होजी, पामी वर प्रस्ताव;
जाणो छो जाणो छो विण वीनवे होजी, तो पण दास स्वभाव. न० १

हुं करता हुं करता परभावनो होजी, भोक्ता पुद्गलरूप;
ग्राहक ग्राहक व्यापक एहनो होजी, राच्यो जड भवभूप. न० २

---

१. अग्निनो, २. टाढने, ३. सूर्यनो ताप

आतम आतम धर्म विसारियो होजी, सेव्यो मिथ्या माग;
आस्त्रव आस्त्रव बंधपणुं कर्युं होजी, संवर निर्जरा त्याग. न० ३

जडचल जडचल कर्म जे देहने होजी, जाण्युं आतम तत्त्व;
बहिरातम बहिरातमता में ग्रही होजी, चतुरंगे एकत्व. न० ४

केवल केवल ज्ञानमहोदधि होजी, केवल दंशण बुद्ध;
वीरज वीरज अनंत स्वभावनो होजी, चारित्र क्षायिक शुद्ध. न० ५

विश्रामी विश्रामी निजभावना होजी, स्याद्वादी अप्रमाद;
परमातम परमातम प्रभु देखतां होजी, भागी भ्रांति अनाद. न० ६

जिनसम जिनसम सत्ता ओळखी होजी, तसु प्राग्भावनी ईह;
अंतर अंतर आतमता लही होजी, पर परिणति निरीह. न० ७

प्रतिछंदे प्रतिछंदे जिनराजने होजी, करता साधक भाव;
देवचंद्र देवचंद्र पद अनुभवे होजी, शुद्धातम प्राग्भाव. न० ८

---

(१६) श्री नमिप्रभ जिन स्तवन

पुष्करवर पूरव अरध दिवाजे रे, साहिबजी,
नलिनावती विजये नयरी अजोध्या छाजे रे; सा०
प्रभु वीरनरेसर-वंश-दिनेसर ध्याईए रे, सा०
सेनासुत साचो गुणशुं जाचो गाईए रे. सा० १

मोहनी मनवल्लभ दरसन दुर्लभ जास रे, सा०
रविचरण उपासी किरण विलासी खास रे; सा०
भविजन मन रंजन भावठ भंजन भगवंत रे, सा०
नमिप्रभ वंदुं पाप निकंदुं तंत रे. सा० २

घर सुरतरु फळियो सुरमणि मिलियो हाथ रे, सा०
करी करुणा पूरी अघ चूरी जगनाथ रे; सा०

अमिए घन वूठा वळी तूठा सवि देव रे, सा०
शिवगामी पामी जो में तुज पद सेव रे. सा० ३

गंगाजल नाह्यो हुं उमाह्यो आज रे, सा०
गुरु संगत सारी म्हारी वधारी लाज रे; सा०
मुह माग्या जाग्या पूरव पुन्य अंकुर रे, सा०
मन लीनो कीनो तुज गुण प्रेम पंडूर रे. सा० ४

तुं दोलतदाता तुं जगत्राता महाराज रे, सा०
भवसायर तारो सारो वांछित काज रे; सा०
दुःखचूरण पूरण कीजे सयल जगीश रे, सा०
अरदास प्रकाशे श्री नयविजय सुशिष्य रे. सा० ५

---

(१६) श्री शांतिनाथ जिन स्तवन

(सुणी पशुआं वाणी रे–ए देशी)

जगजन मन रंजे रे, [१]मनमथ बळ भंजे रे;
नवि राग न दोष तुं अंजे चित्तशुं रे. १

शिर छत्र विराजे रे, देव दुंदुभि वाजे रे;
ठकुराई इम छाजे, तोहि अकिंचनो रे. २

थिरता धृति सारी रे, वरी समता नारी रे;
ब्रह्मचारी शिरोमणि, तो पण तुं सुण्यो रे. ३

न धरे भवरंगो रे, नवि दोषा संगो रे;
मृग लंछन चंगो, तो पण तुं सही रे. ४

तुज गुण कुण आखे[२] रे, जग केवळी पाखे रे;
सेवक यश भाखे, अचिरासुत जयो रे. ५

१.कामदेव, २.भाखे

(१६) श्री नमिश्वर जिन स्तवन

(हो पियु पंखीडा–ए देशी)

जगत दिवाकर श्री नमिश्वर स्वाम जो,
तुज मुख दीठे नाठी भूल अनादिनी रे लो;
जाग्यो सम्यग्ज्ञान सुधारस धाम जो,
छांडी दुर्जय मिथ्या नींद प्रमादनी रे लो. १

सहेजे प्रगट्यो निज पर भाव विवेक जो,
अंतर आतम ठहर्यो साधन साधवे रे लो;
साध्यालंबी थई ज्ञायकता छेक जो,
निज परिणति थिर निज धर्मरसे ठवे रे लो. २

त्यागीने सवि परपरिणति रस रीझ जो,
जागी छे निज-आतम-अनुभव इष्टता रे लो;
सहेजे छूटी आस्रव भावनी चाल जो,
जालम ए प्रगटी संवर शिष्टता रे लो. ३

बंधना हेतु जे छे पापस्थान जो,
ते तुज भगते पाम्या पुष्ट प्रशस्तता रे लो;
ध्येयगुणे वळग्यो पूरण उपयोग जो,
तेहथी पामे ध्याता ध्येय समस्तता रे लो. ४

[1]जे अति दुस्तर जलधि समो संसार जो,
ते गोपद सम कीधो प्रभु अवलंबने रे लो;
[2]जिन आलंबनी निरालंबता पामे जो,
तेणे हम रमशुं निजगुण शुद्ध नंदनवने रे लो. ५

---

१. जे न तरी शकाय एवो अपार समुद्र जेवो संसार, ते गायनी खरीमां पाणी भरायुं होय, तेवो अल्प करी दीधो.

२. पाठां–जाण्यो पूर्णानंद ते आतम पास जो,
अवलंब्यो निर्विकल्प परमातमतत्त्वने रे लो. ५

स्याद्वादी निज प्रभुताने एकत्व जो,
क्षायक भावे थाये निज रत्नत्रयी रे लो;
प्रत्याहार करीने धारे धारण शुद्ध जो,
तत्त्वानंदी पूर्ण समाधिलयमयी रे लो. ६
अव्याबाध स्वगुणनी पूरण रीत जो,
कर्त्ता भोक्ता भावे रमणपणे धरे रे लो;
सहज अकृत्रिम निर्मळ ज्ञानानंद जो,
देवचंद्र एकत्वे सेवनथी वरे रे लो. ७

---

(१७) श्री वीरसेन जिन स्तवन

वीरसेन जगदीश, ताहरी परम जगीश;
आज हो दीसे रे, वीरजता त्रिभुवनथी घणीजी. १
अणहारी अशरीर, अक्षय अजय अति धीर;
आज हो अविनाशी, अलेशी ध्रुव प्रभुता बनीजी. २
अतीन्द्रिय गत [1]कोह, विगत [2]माय [3]मय [4]लोह;
आज हो सोहे रे, मोहे जगजनता भणीजी. ३
अमर अखंड अरूप, पूर्णानंद स्वरूप;
आज हो चिद्रूपे दीपे, थिर समता धणीजी. ४
वेदरहित अकषाय, शुद्ध सिद्ध असहाय;
आज हो ध्यायके नायकने, ध्येयपदे ग्रह्योजी. ५
दान लाभ निज भोग, शुद्ध स्वगुण उपभोग;
आज हो अजोगी करता, भोक्ता प्रभु लह्योजी. ६
दरिशण ज्ञान चारित्र, सकल प्रदेश पवित्र;
आज हो निर्मळ निस्संगी, अरिहा वंदियेजी. ७

---

१. क्रोध, २. माया, ३. मद, मान, ४. लोभ

देवचंद्र जिनचंद्र, पूर्णानंदनो वृंद;
आज हो जिनवर सेवाथी, चिर आनंदियेजी. ८

(१७) श्री वीरसेन जिन स्तवन

पश्चिम अरध पुष्करवरे, विजय पुष्कलावई दीपे रे;
नयरी पुंडरिगिणी विहरता, प्रभु तेजे रवि झीपे रे;
श्री वीरसेन सुहंकरु. १

भानुसेन भूमिपाळनो, अंगज गजगति वंदो रे;
राजसेना मनवल्लभो, वृषभ लंछन जिनचंदो रे. श्री० २

मसिविण जे लिख्या तुज गुण, अक्षर प्रेमना चित्त रे;
धोईए तिम तिम ऊघडे, भगतिजले तेह नित रे. श्री० ३

चक्रवर्ती मन सुख धरे, ऋषभकूटे लिखी नामो रे;
अधिका रे तुज गुण तेहथी, प्रगट हुआ ठामठामो रे. श्री० ४

निजगुण गूंथित तें करी, कीरति मोतीनी माळा रे;
ते मुज कंठे आरोपातां, दीसे झाकझमाळा रे. श्री० ५

प्रगट हुये जिम जगतमां, शोभा सेवक केरी रे;
वाचक यश कहे तिम करो, साहिब प्रीत घणेरी रे. श्री० ६

(१७) श्री कुंथुनाथ जिन स्तवन

सुखदायक साहिब सांभळो, मुजने तुजशुं अति रंग रे;
तुमे तो नीरागी हुई रह्या, ए शो एकंगो[१] ढंग[२] रे. सु० १

तुम चित्तमां वसवुं मुज घणुं, ते तो उंबरफूल समान रे;
मुज चित्तमां वसो जो तुमे, तो पाम्या नवे निधान रे. सु० २

१. एकतरफी, २. रीत

श्री कुंथुनाथ ! अमे निरवहुं, इम एकंगो पण नेह रे;
इणि [1]आकीने फळ पामशुं, वळी होशे दुःखनो छेह रे. सु० ३

आराध्यो कामित पूरवे, चिंतामणि पाषाण रे;
वाचकयश कहे मुज दीजिये, इम जाणी कोडिकल्याण रे. सु० ४

(१७) श्री अनिल जिन स्तवन

(देखो गति दैवनी रे—ए देशी)

स्वारथ विण उपगारता रे, अद्‌भुत अतिशय रिद्धि;
आत्मस्वरूप प्रकाशता रे, पूरण सहज समृद्धि,
अनिल जिन सेवीए रे.
नाथ तुम्हारी जोडी, न को त्रिहु लोकमें रे,
प्रभुजी परम आधार, अछो भवि थोकने रे. १

परकारज करता नहीं रे, सेव्या पार न हेत;
जे सेवे तन्मय थई रे, ते लहे शिवसंकेत. अ० २

करता निज गुण वृत्तिता रे, गुण परिणति उपभोग;
निःप्रयासगुण वर्त्तता रे, नित्य सकल उपयोग. अ० ३

सेव भक्ति भोगी नहीं रे, न करे परनो सहाय;
तुज गुणरंगी भक्तना रे, सहेजे कारज थाय. अ० ४

किरिया कारण कार्यता रे, एक समय स्वाधीन;
वरते प्रतिगुण सर्वदा रे, तसु अनुभव लयलीन. अ० ५

ज्ञायक लोकालोकना रे, अनिलप्रभु जिनराय;
नित्यानंदमयी सदा रे, देवचंद्र सुखदाय. अ० ६

---

१. श्रद्धाए.

(१८) श्री महाभद्र जिन स्तवन

महाभद्र जिनराज, राज राज विराजे हो आज तुमारडोजी;
क्षायिकवीर्य अनंत, धर्म अभंगे हो तुं साहिब वडोजी.
हुं बलिहारी रे श्री जिनवर तणी रे. १

कर्ता भोक्ता भाव, कारक कारण हो तुं स्वामी छतोजी;
ज्ञानानंद प्रधान, सर्व वस्तुनो हो धर्म प्रकाशतोजी. हुं० २

सम्यग्दर्शन मित्त, स्थिर निर्धारे रे अविसंवादताजी;
अव्याबाध समाधि, कोश अनश्वर रे निज आनंदताजी. हुं० ३

देश असंख्य प्रदेश, निज निज रीते रे गुणसंपत्ति भर्याजी;
चारित्र दुर्ग अभंग, आतम शक्ते हो पर जय संचर्याजी. हुं० ४

धर्मक्षमादिकसैन्य, परिणति प्रभुता हो तुज बल आकरोजी;
तत्त्व सकल प्राग्भाव, सादि अनंती रे रीते प्रभु धर्योजी. हुं० ५

द्रव्य भाव अरिलेश, सकल निवारी रे साहिब अवतर्योजी;
सहज स्वभाव विलास, भोगी उपभोगी रे ज्ञानगुणे भर्योजी. हुं० ६

आचारिज उवझाय, साधक मुनिवर हो देशविरतिधरुजी;
आतम सिध्ध अनंत, कारण रूपे रे योग क्षेमंकरुजी. हुं० ७

सम्यग्दृष्टि जीव, आणारागी हो सहु जिनराजनाजी;
आतम साधन काज, सेवे पदकज हो श्री महाभद्रनांजी. हुं० ८

देवचंद्र जिनचंद्र, भक्ते राचो हो भवि आतम रुचिजी;
अव्यय अक्षय शुध्ध, संपत्ति प्रगटे हो सत्तागत शुचिजी. हुं० ९

---

(१८) श्री महाभद्र जिन स्तवन

(आज हो छाजे रे–ए देशी)

देवरायनो नंद, मात उमा मनचंद;
आज हो राणी रे, सूरिकांता कंत सोहामणोजी. १

पुष्कर पश्चिम अर्द्ध, विजय ते वप्र सुबद्ध;
आज हो नयरी रे विजयाए विहरे गुणनीलोजी. २

महाभद्र जिनराय, गजलंछन जस पाय;
आज हो सोहे रे मोहे मन लटकाळे लोयणेजी. ३

तेहशुं मुज अति प्रेम, परसुर नमवा नेम;
आज हो रंजे रे दुःख भंजे, प्रभु मुज ते गुणेजी. ४

धर्म यौवन नवरंग, समकित पाम्यो चंग;
आज हो लाखीणी लाडी मुगति ते मेलशेजी. ५

चरण धर्म अवदात, ते कन्यानो तात;
आज हो माहरा रे प्रभुजीने, ते छे वश सदाजी. ६

श्री नयविजय सुशिष्य, यश कहे सुणो जगदीश;
आज हो तारो रे हुं सेवक, देव करो दयाजी. ७

(१८) श्री अरनाथ जिन स्तवन

(प्रथम गोवाळ तणी—ए देशी)

अरजिन दरिशन दीजियेजी, भविककमळवन सूर;
मन तरसे मळवा घणुंजी, तुमे तो जई रह्या दूर.
सोभागी, तुमशुं मुज मन नेह.
तुमशुं मुज मन नेहलोजी, जिम बपइयां मेह. सो० १

आवागमन पथिक तणुंजी, नहि शिवनगर निवेश;
कागळ कुण हाथे लिखुंजी, कोण कहे संदेश. सो० २

जो सेवक संभारशोजी, अंतरयामी रे आप;
यश कहे तो मुज मन तणोजी, टळशे सघळो संताप. सो० ३

(१८) श्री यशोधर जिन स्तवन

वदन पर वारी हो यशोधर, वदन पर वारी;
मोहरहित मोहनजयाको, उपशम रस क्यारी. हो य० १
मोही जीव लोहको कंचन, करवे पारस भारी;
समकित सुरतरु वन सींचनको वर पुष्करजल धारी. हो य० २
सर्व प्रदेश प्रगट शम गुणथी, प्रवृत्ति अनंत अपहारी;
परमगुणी सेवनथें सेवक, अप्रशस्तता वारी. हो य० ३
परपरिणति रुचिरमण ग्रहणता, दोष अनादि निवारी;
देवचंद्र प्रभु सेवक ध्याने, आतम शक्ति समारी. हो य० ४

---

(१९) श्री देवजशा जिन स्तवन

(महाविदेह क्षेत्र सोहामणुं—ए देशी)

देवजशा दरिशण करो, विघटे मोह विभाव लाल रे;
प्रगटे शुद्ध स्वभावता, आनंद लहरी दाव लाल रे. दे० १
स्वामी वसो पुष्करवरे, जंबु भरते दास लाल रे;
क्षेत्र विभेद घणो पड्यो, किम पहोंचे उल्लास लाल रे. दे० २
होवत जो तनु पांखडी, आवत नाथ हजूर लाल रे;
जो होती चित्त आंखडी, देखत नित्य प्रभुनूर लाल रे. दे० ३
शासनभक्त जे सुरवरा, वीनवुं शीश नमाय लाल रे;
कृपा करो मुज उपरे, तो जिनवंदन थाय लाल रे. दे० ४
पूछुं पूर्व विराधना, शी कीधी इण जीव लाल रे;
अविरति मोह टले नहीं, दीठे आगम दीव लाल रे. दे० ५
आतम शुद्ध स्वभावने, बोधन शोधन काज लाल रे;
रत्नत्रयी प्राप्ति तणो, हेतु कहो महाराज लाल रे. दे० ६

तुज सरिखो साहिब मिल्यो, भांजे भवभ्रम टेव लाल रे;
पुष्टालंबन प्रभु लही, कोण करे परसेव लाल रे. दे०७

दीनदयाळ कृपाळुओ, नाथ भविक आधार लाल रे;
देवचंद्र जिन सेवना, परमामृत सुखकार लाल रे. दे०८

---

(१९) श्री चंद्रयशा (देवजशा) जिन स्तवन

(दर्शन तारा दृष्टिमां मनमोहन मेरे—ए देशी)

चंद्रयशा जिनराजीओ, मनमोहन मेरे,
पुष्कर दीव मोझार रे मनमोहन मेरे;
पश्चिम अरध सोहामणो, म० वच्छ विजय संभार रे. म०१

नयरी सुसीमा विचरता, म० संवरभूप कुलचंद रे; म०
शशि लंछन पद्मावती, म० वल्लभ गंगानंद रे. म०२

कटिलीलाए केसरी, म० ते हार्यो गयो रान रे; म०
हार्यो हिमकर तुज मुखे, म० हजीय वळे नहि वान रे. म०३

तुज लोचनथी लाजियां, म० कमळ गयां जळमांही रे; म०
अहिपति पाताळे गयो म० जीत्यो ललित तुज बांही रे. म०४

जीत्यो दिनकर तेजशुं, म० फिरतो रहे ते आकाश रे; म०
नींद न आवे तेहने, म० जेह मन खेद अभ्यास रे. म०५

एम जीत्यो तुमे जगतने म० हरि लियो चित्तरतन्न रे; म०
बंधु कहावो जगतना, म० ते किम होय उपमन्न रे. म०६

गति तुमे जाणो तुम तणी, म० हुं सेवुं तुज पाय रे; म०
शरण करे बळियातणुं म० यश कहे तस सुख थाय रे. म०७

---

(१९) श्री मल्लिनाथ जिन स्तवन

(ढाळ रसियानी—ए देशी)

मल्लि जिणेसर मुजने तुमे मिल्या, जेह मांही सुखकंद वाल्हेसर;
ते कळियुग अमे गिरुओ लेखवुं, नवि बीजा युगवृंद वा० म० १

आरो सारो रे मुज पांचमो, जिहां तुम दर्शन दीठ; वा०
मरुभूमि पण थिति सुरतरु तणी, मेरु थकी हुई ईठ. वा० म० २

पंचम आरे रे तुम्ह मेलावडे, रूडो राख्यो रे रंग; वा०
चोथो आरो रे फिरि आव्यो गणुं, वाचकयश कहे चंग. वा० म० ३

---

(१९) श्री कृतार्थ जिन स्तवन

(अधिका ताहरो हुं तो अपराधी—ए देशी)

सेवा सारज्यो जिननी मन साचे, पण मत मागो भाई; से०
महिनतनो फळ मागी लेतां, दास भाव सवि जाई. से० १

भक्ति नहीं ते तो भाडायत, जे सेवाफळ [१]जाचे;
दास तिके जे घन भरी नीरखी, [२]केकीनी परे नाचे. से० २

सारी विधि सेवा सारंतां, आण न कांई भांजे;
हुकम हाजर खिजमति करतां, सहेजे नाथ निवाजे. से० ३

साहिब जाणो छो सहु वातो, शुं कहिये तुम आगे;
साहिब सनमुख अम मागणनी, वात कारमी लागे. से० ४

स्वामी कृतार्थ तो पिण तुमथी, आश सहुको राखे;
नाथ विना सेवकनी चिंता, कोण करे विणु दाखे. से० ५

तुज सेव्यां फळ माग्यो देतां, देवपणो थाये काचो;
विण माग्यां वांछित फळ आपे, तिणे देवचंद्र पद साचो. से० ६

---

१. मागे, २. मोर

(२०) श्री अजितवीर्य जिन स्तवन

अजितवीर्य जिन विचरता रे, मनमोहना रे लाल,
पुष्करअर्ध विदेह रे, भविबोहना रे लाल;
जंगम सुरतरु सारिखो रे, मनमोहना रे लाल,
सेवे धन्य धन्य तेह रे भविबोहना रे लाल. १

जिनगुण अमृतपानथी रे म० अमृत क्रिया सुपसाय रे; भ०
अमृतक्रिया अनुष्ठानथी रे म० आतम अमृत थाय रे. भ० २

प्रीति भक्ति अनुष्ठानथी रे म० वचन असंगी सेव रे; भ०
कर्ता तन्मयता लहे रे, म० प्रभु भक्ति नित्यमेव रे. भ० ३

परमेश्वर अवलंबने रे, म० ध्याता ध्येय अभेद रे; भ०
ध्येय समापत्ति हुवे रे, म० साध्य सिद्धि अविच्छेद रे. भ० ४

जिन गुण राग परागथी रे, म० वासित मुज परिणाम रे; भ०
तजशे दुष्ट विभावता रे, म० सरशे आतम काम रे. भ० ५

जिनभक्तिरत चित्तने रे, म० वेधक रस गुण प्रेम रे; भ०
सेवक जिनपद पामशे रे, म० रसवेधित अय जेम रे. भ० ६

नाथ भक्तिरस भावथी रे, म० तृण जाणुं परदेव रे; भ०
चिंतामणि सुरतरुथकी रे, म० अधिकी अरिहंतसेव रे. भ० ७

परमातम गुणस्मृति थकी रे, म० फरश्यो आतमराम रे; भ०
नियमा कंचनता लहे रे, म० लोह ज्युं पारस पाम रे. भ० ८

निर्मळ तत्त्वरुचि थई रे, म० करजो जिनपति भक्ति रे; भ०
देवचंद्र पद पामशो रे, म० परम महोदय युक्ति रे. भ० ९

(२०) श्री अजितवीर्य जिन स्तवन

(ए छींडी किहां राखी कुमति—ए देशी)

दीव पुष्करवर पश्चिम अरधे, विजय नलिनावई सोहे;
नयरी अयोध्या मंडन स्वस्तिक लंछन जिन जग मोहे रे;
भवियां, अजितवीर्य जिन वंदो. १

राजपाल कुळ मुगट नगीनो, मात कनिनिका जायो;
रतनमाळा राणीनो वल्लभ, प्रत्यक्ष सुरमणि पायो रे. भ० २

दुरिजनशुं करी जे हुओ दूषण, हुये तस शोषण इहां;
एहवा साहिबना गुण गाई, पवित्र करुं हुं जीहा रे. भ० ३

प्रभु-गुणगण गंगाजले न्हाई, कीयो कर्ममल दूर;
स्नातकपद जिन भगतें लहिये, चिदानंद भरपूर रे. भ० ४

जे संसर्ग अभेदारोपे, समापत्ति मुनि माने;
ते जिनवर गुण थुणतां लहिये, ज्ञानध्यान लयताने रे. भ० ५

स्पर्श ज्ञान इणिपरे अनुभवतां, देखीजे [१]जिनरूप;
सकळ जोग जीवन ते पामी, निस्तरिये भवकूप रे. भ० ६

शरण-त्राण-आलंबन जिनजी, कोई नहीं तस तोले;
श्रीनयविजय विबुध पय सेवक, वाचकयश एम बोले रे. भ० ७

---

(२०) श्री मुनिसुव्रत जिन स्तवन

(वीरमाता प्रीतिकारिणी—ए देशी)

आज सफळ दिन मुज तणो, मुनिसुव्रत दीठा;
भागी ते भावट भव तणी, दिवस दुरितना[२] नीठा. आ० १

आंगणे कल्पवेली फळी, घन अमियना वूठा;
आप माग्या पासा ढळ्या, सुर समकिती तूठा. आ० २

---

१. पाठांतर—निजरूप, २. पापना दिवसो नाश पाम्या

नियति हित दान सन्मुख हुये, स्वपुण्योदय साथे;
यश कहे साहिबे मुक्तिनुं, करिउं तिलक निज हाथे. आ० ३

(२०) श्री धर्मीश्वर जिन स्तवन

(अखियां हरखन लागी हमारी अखियां—ए देशी)

हुं तो प्रभु वारी छुं तुम मुखनी, हुं तो जिन बलिहारी तुम मुखनी;
समता अमृतमय सुप्रसन्ननी, त्रेय नहीं रागरुखनी. हुं० १

भ्रमर अधर शिष धनुहर कमलदल, कीर हीर पूनमशशीनी;
शोभा तुच्छ थई प्रभु देखत, कायर हाथे जिम असिनी. हुं० २

मनमोहन तुम सनमुख नीरखत, आंख न तृप्ति अमची;
मोहतिमिर रवि हरषचंद्रछबी, मूरत ए उपशमची. हुं० ३

मननी चिंता मटी प्रभु ध्यावत, मुख देखतां तुम जिननी;
इंद्री तृषा गई जिनेसर सेवतां, गुण गातां वचननी. हुं० ४

मीन चकोर मोर मतंगज, जल शशी घन निज वनथी;
तिम मुज प्रीति साहिब सूरतथी, और न चाहुं मनथी. हुं० ५

ज्ञानानंदन जग आनंदन, आश दासनी इतनी;
देवचंद्र सेवनमें अहर्निश, रमज्यो परिणति चित्तनी. हुं० ६

कलश

(राग धन्याश्री)

वंदो वंदो रे जिनवर विचरंता वंदो;
कीर्तन स्तवन नमन अनुसरतां, पूर्व पाप निकंदो रे,
जिनवर विचरंता वंदो. १

जंबुद्वीपे चार जिनेश्वर, धातकी आठ आणंदो;
पुष्कर अर्धे आठ महामुनि, सेवे चोसठ इंदो रे. जि० २

केवली गणधर साधु साधवी, श्रावक श्राविका वृंदो;
जिनमुख धर्म अमृत अनुभवतां, पामे मन आणंदो रे. जि० ३

सिद्धाचल चौमास रहीने, गायो जिनगुण छंदो;
जिनपति भक्ति मुक्तिनो मारग, अनुपम शिवसुखकंदोरे. जि० ४

खरतर गच्छ जिनचंद्र सुरिवर, पुण्य प्रधान मुणींदो;
सुमतिसागर साधु रंग सुवाचक, पीधो श्रुतमकरंदो रे. जि० ५

राजसार पाठक उपगारी, ज्ञानधर्म दिणंदो;
दीपचंद सद्गुरु गुणवंता, पाठक धीर गयंदो रे. जि० ६

देवचंद्र गणि आतम हेते, गाया वीश जिणंदो;
ऋद्धि वृद्धि सुखसंपत्ति प्रगटे, सुजश महोदय वृंदो रे. जि० ७

---

(२१) श्री नमिनाथ जिन स्तवन

(ऋषभनो वंश रयणायरू—ए देशी)

मुज मन पंकज भमर ले, श्री नमिजिन जगदीशो रे;
ध्यान करुं नित तुम तणुं, नाम जपुं निश दीशो रे. मु० १

चित्त थकी कईयें न वीसरे, देखिये आगलि ध्याने रे;
अंतर तापथी जाणीये, दूर रह्या अनुमाने रे. मु० २

तुं गति तुं मति आशरो, तुंहि ज बांधव मोटो रे;
वाचक यश कहे तुज विना, अवर प्रपंच ते खोटो रे. मु० ३

---

(२१) श्री शुद्धमति जिन स्तवन

(श्री जिनप्रतिमा हो जिन सरखी कही—ए देशी)

श्री शुद्धमति हो जिनवर पूरवो, एह मनोरथ माळ;
सेवक जाणी हो महेरबानी करी, भवसंकटथी टाळ. श्री० १

पतित उद्धारण हो तारण वत्सलु, कर अपणायत एह;
नित्य नीरागी हो निःस्पृह ज्ञाननी, शुद्ध अवस्था देह. श्री० २

परमानंदी हो तुं परमातमा, अविनाशी तुज रीत;
ए गुण जाणी हो तुम वाणी थकी, ठहराणी मुज प्रीत. श्री० ३

शुद्ध स्वरूपी हो ज्ञानानंदनी, अव्याबाध स्वरूप;
भवजलनिधि हो तारक जिनेश्वरु, परम महोदय भूप. श्री० ४

निर्मम निःसंगी हो निर्भय अविकारता, निर्मल सहजसमृद्धि;
अष्ट करम हो वनदाहथी, प्रगटी अन्वय रिद्धि. श्री० ५

आज अनादिनी हो अनंत अक्षता, अक्षर अनक्षर रूप;
अचल अकल हो अमल अगमनुं, चिदानंद चिद्रूप. श्री० ६

अनंतज्ञानी हो अनंतदर्शनी, अनाकारी अविरुद्ध;
लोकालोक हो ज्ञायक सुहंकरु, अनाहारी स्वयंबुद्ध. श्री० ७

जे निज पासे हो ते शुं मागीए, देवचंद्र जिनराज;
तो पण मुजने हो शिवपुर साधतां, होजो सदा सुसहाय. श्री० ८

---

(२२) श्री नेमिनाथ जिन स्तवन

(राजा जो मिले—ए देशी)

कहा कियो तुमे कहो मेरे सांई, फेरी चले रथ तोरण आई;
दिलजानि अरे, मेरा नाह न त्यजीय नेह कछु अजानि. दि० १
अटपटाई चले धरी कछु रोष, पशुअनके शिर दे करी दोष. दि० २
रंग बीच भयो याथी भंग, सो तो साचो जानो कुरंग; दि० ३
प्रीति तनकमि तोरत आज, पियु नावे मनमें तुम लाज. दि० ४
तुम्हे बहुनायक जानो न पीर[1], विरह लागी जिउं वैरीको तीर; दि० ५

---

१. वेदना

हार[1] ठार शृंगार अंगार, असन वसन न सुहाई लगार. दि० ६
तुज विन लागे सुनी सेज, नहीं तनु तेज न हारदहेज; दि० ७
आवोने मंदिर विलसो भोग, बुढापनमें लीजे जोग. दि० ८
छोरुंगी में नहि तेरो संग, गईलि चलुं जिउं छाया अंग; दि० ९
एम विलवती गई गढ गिरनार, देखे प्रीतम राजुलनार. दि० १०
कंते दीधुं केवळ ज्ञान, कीधी प्यारी आप समान; दि० ११
मुक्ति महेलमें खेले दोई, प्रणमे यश उल्लसित तन होई. दि० १२

---

(२३) श्री पार्श्वनाथ जिन स्तवन

(देशी फागनी)

चउ कषाय पाताल कलश जिहां, तिसना[2] पवन प्रचंड
बहु विकल्प कल्लोल चढतुं हे, आरति[3] फेन उद्दंड,
भवसायर भीषण तारीए हो, अहो मेरे ललना पासजी;
त्रिभुवन नाथ दिलमें, ए विनंती धारिये हो. १

जरत उद्दाम काम वडवानल, परत शीलगिरि शृंग;
फिरत व्यसन बहु मगर [4]तिमिंगल, करत हे निमग उमंग. भ० २

भमरियाके बीचि भयंकर, उलटी गुलटी वाच;
करत प्रमाद पिशाचन सहित जिहां, अविरति व्यंतरी नाच. भ० ३

गरजत अरति फुरति रति बिजुरी, होत बहुत तोफान;
लागत चोर कुगुरु मलबारी, धरम जिहाज निदान. भ० ४

जुरे पाटिये जिउं अति जोरी, सहस अढार शीलंग;
धर्मजिहाज तिउं सज करि चलवो, यश कहे शिवपुरी चंग. भ० ५

---

१. गळामां हार हिम जेवा अने शणगार अग्निना अंगारा जेवा लागे छे.
२. तृष्णा, ३. आर्ति—पीडा, दुःख, ४. मगरमच्छ

(२४) श्री महावीर जिन स्तवन

(समकित द्वारगभारे पेसतांजी–ए देशी)

दुःख टळियां मुख दीठे मुज सुख उपनां रे,
भेट्या भेट्या वीरजिणंद रे;
हवे मुज मनमंदिरमां प्रभु आवी वसो रे,
पामुं पामुं परमानंद रे. दु० १

पीठबंध इहां कीधो समकित वज्रनो रे,
काढ्यो काढ्यो कचरो ने भ्रांति रे;
इहां अति ऊंचा सोहे चारित्र चंद्रुआ रे,
रूडी रूडी संवर भीत्ति रे. दु० २

कर्म विवर गोखे इहां मोती झूंमणां रे,
झूलई झूलई धीगुण आठ रे;
बार भावना पंचाली अचरज करे रे,
कोरि कोरि कोरणि काठ रे. दु० ३

इहां आवी समता राणीशुं प्रभु रमो रे,
सारी सारी थिरता सेज रे;
किम जई शकशो एक वार जो आवशो रे,
रंज्या रंज्या हियडानि हेज रे. दु० ४

वयण अरज सुणी प्रभु मनमंदिर आविया रे,
आपे तूठा तूठा त्रिभुवन भाण रे;
श्री नय विजय विबुध पयसेवक एम भणे रे,
तेणी पाम्या पाम्या कोडि कल्याण रे. दु० ५

श्री यशोविजयजीकृत तेर स्तवनो

(१) श्री ऋषभ जिन स्तवन

(ढाळ कडखानी)

ऋषभ जिनराज मुज आज दिन अति भलो,
गुणनीलो जेणे तुं नयण दीठो;
दुःख टल्यां सुख मिल्यां, स्वामी ! तुं नीरखतां,
सुकृत संचय हुवो, पाप [1]नीठो. ऋ० १

कल्पशाखी[2] फल्यो, कामघट[3] मुज मल्यो,
आंगणे अमियनो मेह [4]वूठो;
मुज महीराण[5], महीभाण[6] तुज दर्शने,
क्षय[7] गयो कुमति अंधार जूठो. ऋ० २

कवण नर कनकमणि[8] छोडी तृण संग्रहे ?
कवण कुंजर[9] तजी करह[10] लेवे ?
कवण बेसे तजी, कल्पतरु बावळे ?
तुज तजी अवर सुर कोण सेवे ? ऋ० ३

एक मुज टेक सुविवेक साहेब सदा,
तुज विना देव दुजो न ईहुं;
तुज वचन-राग सुख सागरे झीलतो,
कर्मभर[11] भ्रम थकी हुं न बीहुं. ऋ० ४

कोडी छे दास विभु ! ताहरे भलभला,
माहरे देव तुं एक प्यारो;

१.नाश थयां, २. कल्पवृक्ष, ३. इच्छित फळ देनार दिव्य घडो, ४. अमृतनी वर्षा थई, वृष्टि थई, ५. राजा ६. सूर्य, ७. नाश पाम्यो, ८. पारसमणि, ९. हाथी, १०. ऊंट, ११. कर्मरूपी भरउनाळानी गरमीथी.

पतितपावन समो जगत उद्धारकर,
महिर[१] करी मोहि भवजलधि[२] तारो. ऋ०५
मुक्तिथी अधिक तुज भक्ति मुज मन वसी,
जेहशुं सबळ [३]प्रतिबंध लाग्यो;
चमकपाषाण[४] जिम लोहने खेंचशे,
मुक्तिने सहज तुज भक्तिरागो. ऋ०६
धन्य ते काय, जेणि पाय तुज प्रणमीए,
तुज थुण्ये[५] जेह धन्य! धन्य! [६]जीहा;
धन्य! ते हृदय जिणे तुज सदा समरीए,
धन्य ते रात ने धन्य! [७]दिहा. ऋ०७
गुण अनंता सदा तुज खजाने भर्या,
एक गुण देत मुज शुं विमासो?
रयण[८] एक देत शी हाण [९]रयणायरे?
लोकनी आपदा [१०]जेणे नासो. ऋ०८
गंग सम रंग तुज कीर्ति कल्लोलने,
रवि थकी अधिक तप-तेज ताजो;
नयविजय विबुध सेवक हुं आपरो,
जश कहे अब मोहि भव निवाजो. ऋ०९

---

(२)

ऋषभदेव हितकारी, जगतगुरु, ऋषभदेव हितकारी;
प्रथम तीर्थंकर प्रथम नरेश्वर, प्रथम यति ब्रह्मचारी. ज०१
वर्षीदान देई तुम जगमें, ईलति ईति निवारी;
तैसी काहि करतु नांहि करुणा, साहेब बेर हमारी. ज०२

---

१. महेर, करुणा, २. संसारसमुद्र, ३. संबंध, ४. लोहचुंबक, ५. स्तवे, वखाणे, ६. जीभ, ७. दिवस, ८. रत्न, ९. रत्नाकर, समुद्र, १०. जेथी

मागत नहीं हम हाथी घोरे, धन कन कंचन नारी;
दियो मोहि चरणकमलकी सेवा, याही लगत मोही प्यारी. ज० ३

भवलीला वासित सुर डारे, तुम पर सब ही उवारी;
में मेरो मन निश्चल कीनो, तुम आणा शिरधारी. ज० ४

ऐसो साहिब नहि कोउ जगमें, यासुं होय दिलदारी;
दिल ही दलाल प्रेमके बीचि, तिहां हठ खेंचे गमारी. ज० ५

तुम ही साहिब में हूं बंदा, या मत दीओ विसारी;
श्रीनयविजय विबुध सेवकके, तुम हो परम उपकारी. ज० ६

---

(३) श्री अजित जिन स्तवन

अजित देव मुज वालहा, ज्युं मोरा मेहा;
ज्युं मधुकर मन मालती, पंथी मन गेहा. अ० १

मेरे मन तुं ही रुच्यो, प्रभु कंचन देहा;
हरि, हर, ब्रह्म, पुरंदरा, तुज आगे केहा. अ० २

तुं ही अगोचर को नहीं, सज्जन गुण रेहा;
चाहे ताकुं चाहीए, धरी धर्म सनेहा. अ० ३

भगतवच्छल जगतारनो, तुं बिरुद वदेहा;
वीतराग हुई वालहा, क्युं करी द्यो छेहा. अ० ४

जे जिनवर हे भरतमें, ऐरावत विदेहा;
यश कहे तुज पद प्रणमतां, सब प्रणमे तेहा. अ० ५

---

(४) श्री संभव जिन स्तवन

संभवजिन जब नयन मिल्यो हो,
प्रगटे पूरव पुण्यके अंकुर,
तबथें दिन मोहि सफल वल्यो हो. सं० १

अंगनमें अमिये मेह वूठे,
जनम तापको व्याप गल्यो हो;
बोधबीज प्रगट्यो त्रिहु जगमें,
तप संजमको खेत फल्यो हो. सं० २

जैसी भक्ति तैसी प्रभु करुणा,
श्वेत शंखमें दूध मिल्यो हो;
दर्शनथें नवनिधि में पाई,
दुःख दोहग[1] सवि दूर टल्यो हो. सं० ३

डरत फिरत हे दूर ही दिलथें,
मोहमल्ल जिणे जगत्रय छल्यो हो;
समकित रत्न लहुं दर्शनथें,
अब नवि जाउं कुगति रूल्यो हो. सं० ४

नेह नजर भर निरखत ही मुज,
प्रभुशुं हियडो हेजे हल्यो हो;
श्री नयविजय विबुध सेवककुं,
साहिब सुरतरु होई फल्यो हो. सं० ५

---

(५) श्री अभिनंदन जिन स्तवन

(राग नट)

प्रभु ! तेरे नयनकी बलिहारी,
याकी शोभा विजीत तपसा, कमल करतु है जलचारी;
विधुके[2] शरण गयो मुख-अरिके, वनथें गगन हरिण हारी. प्र० १

सहजहि अंजन मंजुल निरखत, खंजन[3] गर्व दियो दारी;
छीन लहीहि चकोरकी शोभा, अग्नि भखे सो दुःख भारी. प्र० २

---

१. दुर्भाग्य, २. चंद्रने, ३. माछली

चंचलता गुण लियो [१]मीनको, अलि[२] ज्युं[३] तारा[४] हे [५]कारी;
कहूं सुभगता[६] केति[७] इनकी ? मोही सब ही [८]अमरनारी. प्र० ३

घूमत है समता रस माते, जैसे गजवर मदवारी;
तीनभुवनमें नहि कोई [९]नीको, अभिनंदनजिन [१०]अनुकारी. प्र० ४

मेरे मन तो तू ही रुचत है, परे[११] कोण परकी [१२]लारी;
तेरे नयनकी मेरे नयनमें, जश कहे दीओ छबी अवतारी. प्र० ५

(६) श्री सुमति जिन स्तवन

(राग मारू)

सुमतिनाथ साचा हो. (टेर)
परि परि परखतही भया, जैसा हीरा जाचा हो;
और देव सवि परिहर्या, में जाणी काचा हो. सु० १

तेरी क्रिया है खरी, जैसी तुज वाचा हो;
और देव सब मोहे भर्या, सवि मिथ्या माच्या हो. सु० २

चौरासी लख भेखमां, हुं बहु परि नाचा हो;
मुगति दान देई साहिबा, अब कर हो उवाचा हो. सु० ३

लागी अग्नि कषायकी, [१३]सब ठोर ही आंचा हो;
रक्षक जाणी आदर्या, तुम शरण साचा हो. सु० ४

पक्षपात नहि कोउसुं, नहीं लालच लांचा हो;
श्री नयविजय सुशिष्यको, तोसुं दिल राच्या हो. सु० ५

१. माछलीनो, २. भमरा, ३. जेवी, ४. आंखनी कीकी, ५. काळी, ६. सौभाग्य, मनोहरता, ७. केटली, ८. देवीओ, ९. सारो, १०. जेवो, ११. पडे, १२. पूंठे, १३. पाठां—सब ठोर रहिया चाहो.

(७) श्री पद्मप्रभ जिन स्तवन

घडी घडी सांभरे सांई सलूना—घ०
पद्मप्रभ जिन दिलसें न वीसरे, मानुं कियो कछु गुनको दूना;
दरिसन देखत ही सुख पाउं, तो बिनु होत हुं उना दूना. घ० १

प्रभु गुन ज्ञान ध्यान विधि रचना, पान सुपारी काथा चूना;
राग भयो दिलमें आयोगे, रहे छिपाया ना छाना छूना. घ० २

प्रभुगुण चित्त बांध्यो सब साखे, कुन पइसे लेई घरका खूना;
राग जग्यो प्रभुशुं मोहि प्रगट, कहो नया कोउ कहो जूना. घ० ३

लोकलाजसें जे चित्त चोरे, सो तो सहज विवेकहि सूना;
प्रभुगुण ध्यान वगर भ्रम भूल्या, करे क्रिया सो [1]राने [2]रूना. घ० ४

में तो नेह कियो तोहि साथे, अब निवाह तो तो थेई हूना;
जश कहे तो विनु और न सेवुं, अमिय खाई कुन चाखे लूना. घ० ५

---

(८) श्री सुपार्श्व जिन स्तवन

(राग कल्याण)

ऐसे स्वामी सुपार्श्वसें दिल लगा,
दुःख भगा, सुख जगा जगतारणा; ऐसे०

राजहंसकुं मानसरोवर, रेवा जल ज्युं [3]वारणा;
खीर सिंधु ज्युं हरिकुं प्यारो, ज्ञानीकुं तत्त्वविचारणा. ऐ० १

मोरकुं मेह, चकोरकुं चंदा, मधु[4] मनमथ[5] चित्तठारना;
फूल अमूल भमरकुं अंबही, कोकिलकुं सुखकारना. ऐ० २

सीताकुं राम, काम ज्युं रतिकुं, पंथीकुं घर-बारना;
दानीकुं त्याग, याग ब्रह्मनकुं, जोगीकुं संजम धारना. ऐ० ३

---

१. जंगलमां, २. रोवुं, पोक मूकवी, ३. हाथीने (जेम), ४. मधुमास (वसंत) अथवा मदिरा, ५. कामदेव.

नंदनवन ज्युं सुरकुं वल्लभ, न्यायीकुं न्याय निहारना;
त्युं मेरे मन तू ही सुहायो, ओर तो चित्तथें उतारना. ऐ० ४

श्री सुपार्श्व दर्शन पर तेरे, कीजे कोडी उवारणा;
श्री नयविजय विबुध सेवककुं, दियो समतारस पारणा. ऐ० ५

(९) श्री चंद्रप्रभ जिन स्तवन

श्री चंद्रप्रभ जिनराज राजे, वदन पूनम चंद रे;
भविक लोक चकोर नीरखत, लहे परमानंद रे. श्री० १

महमहे महिमाए जशभर, सरस जस अरविंद रे;
रणझणे कविजन भमर रसिया, लहे सुख मकरंद रे. श्री० २

जस नामे दोलत अधिक दीपे, टळे [1]दोहग [2]दंद रे;
जस गुणकथा भवव्यथा भांजे, ध्यान शिवतरु कंद रे. श्री० ३

विपुल हृदय विशाल भुजयुग, चलिति चाल गयंद रे;
अतुल अतिशय महिमा मंदिर, प्रणमत सुरनरवृंद रे. श्री० ४

हुं दास चाकर देव तारो, शिष्य तुज फरजंद रे;
जस विजय वाचकएम वीनवे, टाल भुज भवफंद रे. श्री० ५

(१०) श्री सुविधि जिन स्तवन

(राग केदारो)

में कीनो नहीं तुम बिन ओरशुं राग,
दिन दिन वान चढत गुण तेरो, ज्युं कंचन परभाग;
ओरनमें हे कषायकी कालिमा, सो क्युं सेवा लाग. में० १

राजहंस तू मानसरोवर, ओर अशुचि-रुचि काग;
विषय भुजंगम[3] गरुड तू कहिये, ओर विषय विषनाग. में० २

---

१. दुर्भाग्य, २. द्वन्द्व, शीतल अने उष्ण, जन्म मरण आदि जोडका, ३. साप

ओर देव जल छीलर सरीखे, तू तो समुद्र अथाग;
तू सुरतरु जग वांछित पूरन, ओर ते सूके साग. में० ३
तू पुरुषोत्तम तू ही निरंजन, तू शंकर वडभाग;
तू ब्रह्मा तू बुद्ध महाबल, तू ही देव वीतराग. में० ४
सुविधिनाथ तुज गुण फूलनको, मेरो दिल हे बाग;
जस कहे भमर रसिक होई तामें, लीजे भक्ति पराग. में० ५

---

(११) श्री शीतल जिन स्तवन

शीतलजिन मोहि प्यारा, साहेब शीतलजिन मोहे प्यारा;
भुवन-विरोचन[1] पंकज लोचन, जीउके जीउ हमारा. सा० शी० १
ज्योतिशुं ज्योति मिलत जब ध्यावे, होवत नहि तब न्यारा;
बांधी मूठी खूले भव-माया[2], मिटे महा भ्रम भारा. सा० शी० २
तुम न्यारे[3] तब सब ही न्यारा, अंतर कुटुंब उदारा;
तुमही नजीक नजीक हे सबही, रिद्धि अनंत अपारा. सा० शी० ३
विषय लगनकी अग्नि बुझावत, तुम गुन अनुभव धारा;
भई मगनता तुम गुण रसकी, कुन कंचन कुन दारा. सा० शी० ४
शीतलता गुन होर[4] करत तुम, चंदन काहु बिचारा ?
नाम ही तुमचा ताप हरत है, वाकुं घसत घसारा. सा० शी० ५
करहुं कष्ट जन बहुत हमारे, नाम तिहारो आधारा;
जश कहे जन्ममरणभय भागो, तुम नामे भव पारा. सा० शी० ६

---

(१२) श्री शांतिनाथ जिन स्तवन

हम मगन भये प्रभु ध्यानमें, [टैर]
विसर गई दुविधा तन मनकी, अचिरासुत गुण गानमें. ह० १

---

१. रुचिकारक, २. संसारनी मायारूपी "बांधी मूठी लाखनी उघाडे तो राखनी" ए रूप भ्रम, ३. जुदा, दूर, ४. होड, सरखामणी

हरि हर ब्रह्म पुरंदरकी रिद्ध, आवत नहि कोउ मानमें;
चिदानंदकी मोज मची है, समता रसके पानमें. ह० २

इतने दिन तू नाहि पिछान्यो, मेरो जन्म गमायो अजानमें;
अब तो अधिकारी होई बेठे, प्रभु गुण अखय खजानमें. ह० ३

गई दीनता सब ही हमारी, प्रभु ! तुज समकित दानमें;
प्रभु गुण अनुभवके रस आगे, आवत नहि कोउ मानमें. ह० ४

जिनही पाया तिनही छिपाया, न कहे कोउके कानमें;
ताली लागी जब अनुभवकी, तब जाने कोउ सानमें. ह० ५

प्रभुगुणअनुभव [1]चंद्रहास ज्यौं, सो तो न रहे म्यानमें;
वाचक यश कहे मोह महा अरि, जीत लियो हे मेदानमें. ह० ६

(१३) श्री पार्श्वनाथ जिन स्तवन

(राग—बिलाउल)

मेरे साहेब तुम ही हो, प्रभु पास जिणंदा !
खिजमतगार गरीब हूं, में तेरा बंदा. मे० १

में चकोर करुं चाकरी, जब तुम ही चंदा;
चक्रवाक में हुई रहुं, जब तुम ही दिणंदा. मे० २

मधुकर परि में रणझणुं, जब तुम अरविंदा;
भक्ति करुं खगपति[2] परे, जब तुम ही गोविंदा. मे० ३

तुम जब गर्जित[3] घन भये, तब में [4]शिखिनंदा;
तुम सायर जब में तदा, [5]सुरसरिता [6]अमंदा. मे० ४

दूर करो दादा पासजी ! भव दुःखका फंदा;
वाचक जश कहे दासकुं, दियो परमानंदा. मे० ५

१. तलवार, २. गरुड, ३. गाजतां वादळां, ४. मोर, ५. गंगा, ६. वेगवाळी

छूटक स्तवनो

(१४)

साहिब सांभळो रे, संभव अरज हमारी,
भवोभव हुं भम्यो रे, न लही सेवा तुमारी;
नरय निगोदमां रे, तिहां हुं बहु भव भमियो,
तुम विना दुःख सह्यां रे, अहोनिश क्रोधे धमधमियो. सा० १

इंद्रिय वश पड्यो रे, पाल्यां व्रत नवि सुंसे,
त्रस पण नवि गण्या रे, थावर हणिया हुंशे;
व्रत चित्त नवि धर्या रे, बीजुं साचुं न बोल्युं,
पापनी गोठडी रे, तिहां में हइडलुं जई खोल्युं. सा० २

चोरी में करी रे, चउविह अदत्त न टाळ्युं,
श्री जिनआणशुं रे, में नवि संजम पाल्युं;
मधुकर तणी परे रे, शुद्ध न आहार गवेख्यो,
रसन लालचे रे, नीरस पिंड उवेख्यो. सा० ३

नरभव दोहिलो रे, पामी मोह वश पडियो,
परस्त्री देखीने रे, मुज मन तिहां जई अडियो;
काम न को सर्यां रे, पापे पिंड में भरियो,
शुद्ध बुद्ध नवि रही रे, तेणे नवि आतम तरियो. सा० ४

लक्ष्मीनी लालचे रे, में बहु दीनता दाखी,
तोपण नवि मळी रे, मळी तो नवि रही राखी;
जे जन अभिलखे रे, ते तो तेहथी नासे,
तृण सम जे गणे रे, तेहनी नित्य रहे पासे. सा० ५

धन धन ते नरा रे, एहनो मोह विछोडी,
विषय निवारीने रे, जेहने धर्ममां जोडी;

अभक्ष्य ते में भख्यां रे, रात्रि भोजन कीधां,
व्रत नवि पाळियां रे, जेहवां मूळथी लीधां. सा० ६

अनंत भव हुं भम्यो रे, भमतां साहिब मळियो,
तुम विना कोण दिये रे, बोधिरयण मुज बळियो;
संभव आपजो रे, चरणकमळ तुम सेवा,
नय एम वीनवे रे, सुणजो देवाधिदेवा. सा० ७

---

(१५)

(राग—दीठो सुविधि जिणंद, समाधि रसे भर्यो हो लाल)

रूप अनुप निहाळी, सुमति जिन ताहरुं, हो लाल सुमति०
छांडी चपल स्वभाव, ठर्युं मन माहरुं; हो लाल ठर्युं०
रूपी सरूप न होत जो, जग तुज दीसतुं, हो लाल जग०
तो कुण उपर मन, कहो अम हीसतुं. हो लाल कहो० १

हीस्या विण किम शुद्ध, स्वभावने इच्छता, हो लाल स्व०
इच्छा विण तुज भाव, प्रगट किम प्रीछता; हो लाल प्रगट०
प्रीछ्या विण किम ध्यान, दशामांहि लावता, हो लाल दशा०
लाव्या विण रस स्वाद, कहो किम पावता. हो लाल कहो० २

भक्ति विना नवि मुक्ति, हुवे कोई भक्तने, हो लाल हुवे०
रूपी विना तो तेह, हुवे कोई व्यक्तने; हो लाल हुवे०
नवण विलेपन माळ, प्रदीप ने धूपणा, हो लाल प्रदीप०
नव नव भूषण भाल, तिलक ने खूंपणा. हो लाल तिलक० ३

अम सत् पुण्यने योगे, तुमे रूपी थया, हो लाल तुमे०
अमृत समाणी वाणी, धरमनी कही गया; हो लाल धरमनी०

तेह आलंबीने जीव, घणाये बुझिया, हो लाल घणा०
भावि भावन ज्ञानी, अमो पण रीझिया. हो लाल अमो० ४
ते माटे तुज पिंड, घणा गुण कारणो, हो लाल घणा०
सेव्यो ध्यायो हुवे, महा भय वारणो; हो लाल महा०
शान्तिविजय बुध शिष्य, कहे भवि काजना, हो लाल कहे०
प्रभुनुं पिंडस्थ ध्यान, करो थई एकमना. हो लाल करो० ५

---

(१६)

(भवि तुमे वंदो रे सूरीश्वर गच्छराया—ए देशी)

मोहन मुजरो लेजो राज, तुम सेवामां रहेशुं,
वामानंदन जगदानंदन, जेह सुधारस खाणी;
मुख मटके लोचनने लटके, लोभाणी इंद्राणी. मो० १
भवपट्टण चिहुं दिशि चारे गति, चोराशी लख चौटा;
क्रोध मान माया लोभादिक, चोवटीआ अति खोटा. मो० २
मिथ्या मेतो कुमति पुरोहित, मदनसेनाने तोरे;
लांच लई लख लोक संतापे, मोह कंदर्पने जोरे. मो० ३
अनादि निगोद ते बंदीखानो, तृष्णा तोपे राख्यो;
संज्ञा चारे चोकी मेली, वेद नपुंसक वांको. मो० ४
भवस्थिति कर्मविवर लई नाठो, पुण्य उदय पण वाध्यो;
स्थावर विकलेंद्रियपणुं ओळंगी, पंचेन्द्रीपणुं लाध्यो. मो० ५
मानवभव आरजकुळ सद्गुरु, विमलबोध मल्यो मुजने;
क्रोधादिक सहु शत्रु विनाशी, तेणे ओळखाव्यो तुजने. मो० ६
पाटणमांहे परम दयाळु, जगत विभूषण भेट्या;
सत्तर बाणुं शुभ परिणामे, कर्म कठिन बळ मेट्या. मो० ७

समकित गज उपशम अंबाडी, ज्ञान कटक बळ कीधुं;
खिमाविजय जिन चरणरमण सुख, राज पोतानुं लीधुं. मो०८

---

(१७)

श्री पासजी प्रगट प्रभावी, तुज मूरति मुज मन भावी रे;
मन मोहना जिनराया, सूर नर किन्नर गुण गाया रे; म०
जे दिनथी मूरति दीठी, ते दिनथी आपदा नीठी रे. म०१

मटकाळुं मुख सुप्रसन्न, देखत रीझे भवि मन्न रे; म०
समता रस केरां कचोळां, नयणां दीठे रंगरोला रे. म०२

हाथे न धरे हथियारा, नहि जपमालानो प्रचारा रे; म०
उत्संगे न धरे वामा, तेहथी ऊपजे सवि कामा रे. म०३

न करे गीत नृत्यना चाळा, ए तो प्रत्यक्ष नटना ख्याला रे; म०
न बजावे आपे वाजां, न धरे वस्त्र जीरण साजां रे. म०४

इम मूरति तुज निरुपाधि, वीतरागपणे करी साधी रे; म०
कहे मानविजय उवज्झाया, में अवलंब्या तुज पाया रे. म०५

---

(१८)

समकित द्वार गभारे पेसतांजी, पाप पडल गयां दूर रे;
मोहन मरुदेवीनो लाडणोजी, दीठो मीठो आनंद पूर रे. स०१

आयु वर्जित साते कर्मनीजी, सागर कोडाकोडी हीन रे;
स्थिति पढमकरणे करीजी, वीर्य अपूर्व मोगर लीध रे. स०२

भोगळ भांगी आद्यकषायनी, मिथ्यात्वमोहनी सांकळ साथ रे;
द्वार उघाड्या शम संवेगनांजी, अनुभव भुवने बेठो नाथ रे. स०३

तोरण बांध्युं जीवदया तणुंजी, साथीओ पूर्यो श्रद्धा रूप रे;
धूपघटी प्रभुगुण अनुमोदनाजी, धीगुण[1] मंगल आठ अनुप रे. स० ४

संवर पाणी अंग पखालणेजी, केसरचंदन उत्तम ध्यान रे;
आतमगुणरुचि मृगमद महमहेजी, पंचाचार कुसुम प्रधान रे. स० ५

भावपूजाए पावन आतमाजी, पूजो परमेश्वर पुन्य पवित्र रे;
कारणजोगे कारज नीपजेजी, खिमाविजय जिनआगम रीत रे. स० ६

---

(१९)

श्री परमात्मानी स्तवना

अरिहंत नमो भगवंत नमो, परमेश्वर श्री जिनराज नमो;
प्रथम जिनेश्वर प्रेमे पेखत, सिध्यां सघळां काज नमो. अ० १

प्रभु पारंगत परम महोदय, अविनाशी अकलंक नमो;
अजर अमर अद्‌भुत अतिशय निधि, प्रवचन जलधि
[2]मयंक नमो. अ० २

तिहुयण भवियण जन मनवंछिय, पूरण देवरसाल[3] नमो;
लळी लळी पाय नमुं हुं भावे, कर जोडीने त्रिकाळ नमो. अ० ३

सिद्ध बुद्ध तुं जगजन सज्जन नयनानंदन देव नमो;
सकल सुरासुर नरवर नायक, सारे अहोनिश सेव नमो. अ० ४

तुं तीर्थंकर सुखकर साहिब, तुं निष्कारण बंधु नमो;
शरणागत भविने हितवत्सल, तुं ही कृपारस सिंधु नमो. अ० ५

---

१. बुद्धिना आठ गुण—(१) शुश्रूषा, (२) श्रवण, (३) ग्रहण, (४) धारण, (५) विज्ञान, (६) उहा, (७) अपोह, (८) तत्त्वाभिनिवेश.

२. चंद्र, ३. देवतरु, कल्पतरु.

केवळज्ञानादर्शे दर्शित, लोकालोक स्वभाव नमो;
नाशित सकल कलंक कलुषगण, दुरित उपद्रव भाव नमो. अ० ६

जगचिंतामणि जगगुरु, जगहितकारक जगजननाथ नमो;
घोर अपार महोदधि तारण, तुं शिवपुरनो साथ नमो. अ० ७

अशरण शरण नीराग निरंजन, निरुपाधिक जगदीश नमो;
बोधि दियो अनुपम दानेश्वर, ज्ञानविमळ सुरीश नमो. अ० ८

---

(२०)

श्री पार्श्वनाथ जिन स्तवन

(शी कहुं कथनी मारी राज—ए राग)

मुजने दास गणीजे राज, पार्श्वजी ! अर्ज सुणीजे;
अवसर आज पूरीजे राज, पार्श्वजी ! अर्ज सुणीजे.
वामानंदन तुं आनंदन, चंदन शीतल भावे;
दुःखनिकंदन गुणे अभिनंदन, कीजे वंदन भावे राज. पा० १

तुंही ज स्वामी अंतरजामी, मुज मननो विसरामी;
शिवगतिगामी तुं निष्कामी, बीजा देव विरामी राज. पा० २

मूरति तारी मोहनगारी, प्राण थकी पण प्यारी;
हुं बलिहारी वार हजारी, मुजने आश तुम्हारी राज. पा० ३

जे एकतारी करे अतारी (?), लीजे तेहने तारी;
प्रीति विचारी सेवकसारी, दीजे केम विसारी राज. पा० ४

विघन विडारी स्वामी संभारी, प्रीति खरी में धारी;
शंकनिवारी भाव वधारी, वारी तुज चरणारी राज. पा० ५

मिल नर नारी बहु परिवारी, पूज रचे तुज सारी;
देवचंद्र साहिब सुखदाई, पूरो आश अमारी राज. पा० ६

---

३६. क्षमापनापाठनुं पद्य

(रचनार—एक मुमुक्षु)

हे नाथ! भूली हुं भवसागरमां भटक्यो;
नहि अधम काम करतां, हुं कदी पण अटक्यो.

तम वचन अमूलख, लक्षमांही नहि लीधां;
नहि तत्त्व विचारथी, कह्यां तमारां कीधां.

सेव्युं नहि उत्तम, शील प्रणीत तमारुं;
तजी यादी आपनी, में ज बगाड्युं मारुं.

प्रभु! दया, शांति ने क्षमा आदि में छोडी;
वळी पवित्रतानी, ओळखाण पण तोडी.

हुं भूल्यो, आथड्यो, अने रखड्यो भारी;
आ संसारे विभु, विटंबना थई मारी.

हुं पापी मदोन्मत्त, मलिन कर्मना रजथी;
विण तत्त्व मोक्ष मेळवाय नहीं, प्रभु! मुजथी.

हे परमात्मा! हुं प्रपंचमांहि पड्यो छुं;
हुं मूढ, निराश्रित, महा खुवार बन्यो छुं.

बनी अंध अमित अज्ञानथी भूल्यो भक्ति;
नथी निश्चय मुजमां, नाथ! विवेकनी शक्ति.

ओ रागरहित प्रभु! मुजने जाणी अनाथ;
आ दीन दासनो, ग्रहो हेतथी हाथ.

हुं शरण हवे तो ग्रहण करुं छुं तमारुं;
तुम धर्म साथ तुम मुनिनुं शरण स्वीकारुं.

हुं मागुं छुं प्रभु! मुज अपराधनी माफी;
करी दीओ पापथी मुक्त, कहुं पछी कांही.

ए अभिलाषा अविनाशी, पूरण करजो;
मुज दोष दयानिधि, देव दिले नवि धरजो.

हुं पापनो पश्चात्ताप हवे करुं छुं;
वळी सूक्ष्म विचारथी, सदा ऊंडो ऊतरुं छुं.

तुम तत्त्व चमत्कृति, नजरे तूर्त तरे छे;
ए मुज स्वरूपनो, विकास नाथ करे छे.

छो आप नीरागी, अनंत ने अविकारी;
वळी स्वरूप सत् चिदानंद गणुं सुखकारी.

छो सहजानंदी अनंतदर्शी ज्ञानी;
त्रैलोक्य प्रकाशक, नाथ! शुं आपुं निशानी?

मुज हित अर्थे दउं, साक्षी मात्र तमारी;
हुं क्षमा चाहुं, मति सदा आपजो सारी.

तुम प्रणीत तत्त्वमां, शंकाशील न थाउं;
जे आप बतावो, मार्ग त्यां ज हुं जाउं.

मुज आकांक्षा ने, वृत्ति एवी नित्य थाजो;
लई शकुं जेथी हुं, महद् मुक्तिनो लावो.

हे सर्वज्ञ प्रभु! शुं विशेष कहुं हुं तमने;
नथी लेश अजाण्युं, आपथी निश्चय मुजने.

हुं केवल पश्चात्तापथी दिल दहुं छुं;
मुज कर्मजन्य पापनी क्षमा चाहुं छुं.
ॐ शांति शांति, करो कृपाळु शांति;
गुरु राजचंद्र जिन वचन, हरो मम भ्रांति.

३७. श्री बृहद् आलोचना

(श्री लालाजी रणजीतसिंहजी कृत)

दोहा

सिध्ध श्री परमातमा, अरिगंजन अरिहंत;
इष्ट देव वंदुं सदा, भय भंजन भगवंत. १

अरिहा सिध्ध समरुं सदा, आचारज उवझाय;
साधु सकलके चरनकुं, वंदुं शिष नमाय. २

शासन नायक समरिये, भगवंत वीर जिनंद;
अलिय[1] विघन दूरे हरे, आपे परमानंद. ३

अंगूठे अमृत वसे, लब्धि तणो भंडार;
श्रीगुरु गौतम समरिये, वांछित फल दातार. ४

श्री गुरुदेव प्रसादसें, होत मनोरथ सिध्ध;
घन वरसत वेली तरु, फूल फलनकी वृध्ध. ५

पंच परमेष्ठी देवको, भजनपूर पहिचान;
कर्म अरि भाजे सबी, होवे परम कल्यान. ६

श्री जिनयुग पदकमलमें, मुज मन भ्रमर वसाय;
कब ऊगे वो दिनकरु, श्रीमुख दरिसन पाय. ७

प्रणमी पदपंकज भणी, अरिगंजन अरिहंत;
कथन करौं अब जीवको, किंचित् मुज [2]विरतंत. ८

आरंभ विषय कषायवश, भमियो काल अनंत;
लक्षचोराशी योनिसें, अब तारो भगवंत. ९

देव गुरु धर्म सूत्रमें, नव तत्त्वादिक जोय;
अधिका ओछा जे कह्या, [3]मिथ्या दुष्कृत मोय. १०

१. अनिष्ट. २. वृत्तांत, वर्तन. ३. मारां माठां काम निष्फळ थाओ.

मिथ्या मोह अज्ञानको, भरियो रोग अथाग;
वैद्यराज गुरु शरणथी, औषध ज्ञान विराग. ११

जे में जीव विराधिया, सेव्यां पाप अढार;
प्रभु तुमारी साखसें, वारंवार धिक्कार. १२

बुरा बुरा सबको कहे, बुरा न दीसे कोई;
जो घट शोधे आपनो, मोसुं बुरा न कोई. १३

कहेवामां आवे नहीं, अवगुण भर्या अनंत;
लिखवामां क्युं कर लिखुं, जाणो श्री भगवंत. १४

करुणानिधि कृपा करी, कर्म कठिन मुझ छेद;
मिथ्या मोह अज्ञानको, करजो ग्रंथि भेद. १५

पतित उद्धारन नाथजी, अपनो बिरुद विचार;
भूलचूक सब माहरी, खमीए वारंवार. १६

माफ करो सब माहरा, आज तलकना दोष;
दीनदयालु दो मुझे, श्रद्धा शील संतोष. १७

आतमनिंदा शुद्ध भनी, गुनवंत वंदन भाव;
रागद्वेष पतला करी, सबसें खीमत [1]खीमाव. १८

छूटुं पिछलां पापसें, नवां न बांधुं कोई;
श्री गुरुदेव प्रसादसें, सफल मनोरथ होई. १९

परिग्रह ममता तजी करी, पंच महाव्रत धार;
अंत समय आलोचना, करुं संथारो सार. २०

तीन मनोरथ ए कह्या, जो ध्यावे, नित मन्न;
शक्ति सार[2] वर्ते सही, पावे शिवसुख धन्न. २१

१. क्षमी क्षमावो २. अनुसार, प्रमाणे.

अरिहा देव, निर्ग्रंथ गुरु, संवर निर्जर धर्म;
आगम श्री केवली कथित, एहि जैन मत मर्म. २२

आरंभ विषय कषाय तज, शुद्ध समकित व्रत धार;
जिन आज्ञा परमान कर, निश्चय खेवो[1] पार. २३

क्षण निकमो रहनो नहीं, करनो आतम काम;
भणनो गुणनो शीखनो, रमनो ज्ञानाराम. २४

अरिहा सिद्ध सब साधुजी, जिनाज्ञा धर्मसार;
मंगलिक उत्तम सदा, निश्चय शरणां चार. २५

घडी घडी पल पल सदा, प्रभु स्मरणको [2]चाव;
नरभव सफलो, जो करे, दान शील तप भाव. २६

(दोहा)

सिद्धो जैसो जीव है, जीव सोई सिद्ध होय;
कर्म मेलका अंतरा, बूझे विरला कोय. १

कर्म पुद्गल रूप है, जीवरूप है ज्ञान;
दो मिलकर बहु रूप है, [3]विछड्यां पद निरवान. २

जीव करम भिन्न भिन्न करो, मनुष जनमकुं पाय;
आत्मज्ञान वैराग्यसें, धीरज ध्यान जगाय. ३

द्रव्य थकी जीव एक है, क्षेत्र असंख्य प्रमान;
काल थकी रहै सर्वदा, भावे दर्शन ज्ञान. ४

गर्भित पुद्गल पिंडमें, अलख अमूरति देव;
फिरे सहज भवचक्रमें, यह अनादिकी टेव. ५

फूल अत्तर, घी दूधमें, तिलमें तैल छिपाय;
युं चेतन जड करम संग, बंध्यो ममता पाय. ६

१. ऊतरो, २. उत्साह, ३. छूटां थये.

जो जो पुद्‌गलकी दशा, ते निज माने [1]हंस;
याही भरम विभावतें, बढे करमको वंश. ७

रतन बंध्यो गठडी विषे, सूर्य छिप्यो घनमांहि;
सिंह पिंजरामें दियो, जोर चले कछु नांहि. ८

ज्युं बंदर मदिरा पिया, विछु डंकित गात;
भूत लग्यो कौतुक करे, कर्मोंका उत्पात. ९

कर्म संग जीव मूढ है, पावे नाना रूप;
कर्म रूप मलके टले, चेतन सिद्ध सरूप. १०

शुद्ध चेतन उज्ज्वल [2]दरव, रह्यो कर्म मल छाय;
तप संयमसें धोवतां, ज्ञानज्योति [3]बढ जाय. ११

ज्ञान थकी जाने सकल, दर्शन श्रद्धा रूप;
चारित्रथी आवत रुके, तपस्या क्षपन सरूप. १२

कर्मरूप मलके शुधे, चेतन चांदी रूप;
निर्मल ज्योति प्रगट भयां, केवलज्ञान अनूप. १३

मूसी[4] पावक सोहगी, फुकांतनो उपाय;
रामचरण चारु मिल्या, मैल कनकको जाय. १४

कर्मरूप बादल मिटे, प्रगटे चेतन चंद;
ज्ञानरूप गुन चांदनी, निर्मल ज्योति अमंद. १५

राग द्वेष दो बीजसें, कर्मबंधकी [5]व्याध;
आत्मज्ञान वैराग्यसें, पावे मुक्ति [6]समाध. १६

---

१. जीव, २. द्रव्य, ३. वधी जाय, ४. सोनुं गाळवानी कुलडी, ५. व्याधि, रोग. ६. समाधि, सुख.

अवसर वीत्यो जात है, [१]अपने वश कछु होत;
पुण्य छतां पुण्य होत है, दीपक दीपकज्योत. १७

कल्पवृक्ष, चिंतामणी, इन भवमें सुखकार;
ज्ञानवृध्धि इनसे अधिक, भवदुःख भंजनहार. १८

राईमात्र घटवध नहीं, देख्यां केवळज्ञान;
यह निश्चय कर जानके, त्यजीए परथम[२] ध्यान. १९

दूजा[३] कुछ भी न चिंतीए, कर्मबंध बहु दोष;
त्रीजा[४] चोथा[५] ध्यायके, करीए मन संतोष. २०

गई वस्तु सोचे नहीं, आगम वांछा नांहि;
वर्तमान वर्ते सदा, सो ज्ञानी जग मांहि. २१

अहो ! समदृष्टि आतमा, करे कुटुंब प्रतिपाल;
अंतर्गत न्यारो रहे, (ज्युं) धाव खिलावे बाल. २२

सुख दुःख दोनुं वसत है, ज्ञानीके घट मांहि;
गिरि[६] सर[७] दीसे [८]मुकरमें, भार भींजवो नांहि. २३

जो[९] जो पुद्‌गल फरसना, निश्चे फरसे सोय;
ममता समता भावसें, कर्म बंध-क्षय होय. २४

बांध्यां सो ही भोगवे, कर्म[१०] शुभाशुभ भाव;
फल निरजरा होत है, यह समाधि चित्त चाव. २५

---

१. पोताना हाथमां अवसर होय त्यारे कंई बने छे. २. आर्त्त—दुःखरूप परिणाम. ३. रौद्र—पापरूप परिणाम. ४. धर्म—शुभ भावरूप परिणाम. ५. शुक्ल—शुद्ध परिणाम. ६. पर्वत. ७. सरोवर. ८. दर्पणमां. ९. जे जे पुद्‌गलोनो स्पर्श थवानो छे, ते नक्की थशे. तेमां ममताभावथी कर्मबंध अने समताभावथी कर्मक्षय थाय छे. १०. बांधेला कर्म भोगवतां शुभाशुभ भावथी फळ थाय छे. समभावमां चित्त होय तो निर्जरा थाय छे.

बांध्यां बिन भुगते नहीं, बिन[1]भुगत्यां न छुटाय;
आप ही करता भोगता, आप ही दूर कराय. २६

पथ कुपथ घटवध करी, रोग हानि वृद्धि थाय;
पुण्य पाप किरिया करी, सुख दुःख जगमें पाय. २७

सुख दीधे सुख होत है, दुःख दीधां दुःख होय;
आप हणे नहि अवरकुं, (तो) अपने हणे न कोय. २८

ज्ञान गरीबी गुरुवचन, नरम वचन निर्दोष;
इनकुं कभी न छांडिये, श्रद्धा शील संतोष. २९

सत मत छोडो हो नरा! लक्ष्मी चौगुनी होय;
सुख दुःख रेखा कर्मकी, टाली टले न कोय. ३०

गोधन गजधन रतनधन, कंचन खान सुखान;
जब आवे संतोषधन, सब धन धूल समान. ३१

शील रतन महोटो रतन, सब रतनांकी खान;
तीन लोककी संपदा, रही शीलमें [2]आन. ३२

शीले सर्प न [3]आभडे, शीले शीतल आग;
शीले अरि करि केसरी, भय जावे सब भाग. ३३

शील रतनके पारखुं, मीठा बोले बैन;
सब जगसें [4]ऊंचा रहे, (जो) नीचां राखे नैन. ३४

तनकर मनकर वचनकर, देत न काहु दुःख;
कर्म रोग पातिक झरे, देखत वाका मुख. ३५

(दोहा)

पान खरंता इम कहे, सुन तरुवर वनराय;
अबके[5] विछुरे कब मिले, दूर पडेंगे जाय. १

---

१. भोगव्या विना. २. आवीने. ३. अथडाय. ४. उदासीन. ५. हमणां छूटां पडेला क्यारे मळीशुं?

तब तरुवर उत्तर दियो, सुनो पत्र एक बात;
इस घर एसी रीत है, एक आवत एक जात. २

वरस[1] दिनाकी गांठको, उत्सव गाय बजाय;
मूरख नर समजे नहीं, वरस गांठको जाय. ३

(सोरठो)

पवन[2] तणो विश्वास, किण कारण तें दृढ कियो ?
इनकी एही रीत, आवे के आवे नहीं. ४

(दोहा)

करज [3]बिराना काढके, खरच किया बहु नाम;
जब मुदत पूरी हुवे, देनां पडशे दाम. १

बिनुं दियां छूटे नहीं, यह निश्चय कर मान;
हस हसके क्युं खरचीए, दाम बिराना जान. २

जीव हिंसा करतां थकां, लागे मिष्ट [4]अज्ञान;
ज्ञानी इम जाने सही, विष मिलियो पकवान. ३

काम भोग प्यारा लगे, फल [5]किंपाक समान;
मीठी खाज खुजावतां, पीछे दुःखकी खान. ४

जप तप संयम दोहिलो, औषध कडवी जान;
सुखकारन पीछे घनो, निश्चय पद निरवान. ५

डाभ अणी जलबिंदुओ, सुख विषयनको चाव;
भवसागर दुःखजल भर्यो, यह संसार स्वभाव. ६

चढ उत्तंग जहांसे पतन, शिखर नहीं वो कूप;
जिस सुख अंदर दुःख वसे, सो सुख भी दुःखरूप. ७

---

१. वर्षगांठनो दिवस ऊजवे छे. २. वा, श्वासोश्वास, ३. पारका व्याजे लावी.
४. अज्ञानीने. ५. झेरी झाडनुं नाम.

जब लग जिनके पुण्यका, पहोंचे नहीं [1]करार;
तब लग उसको माफ है, अवगुन करे हजार. ८

पुण्य खीन जब होत है, उदय होत है पाप;
दाजे वनकी लाकरी, प्रजले आपोआप. ९

पाप छिपायां ना छीपे, छीपे तो महाभाग;
दाबी डूबी ना रहे, रूई लपेटी आग. १०

बहु वीती थोडी रही, अब तो सुरत[2] संभार;
परभव निश्चय चालनो, वृथा जन्म मत हार. ११

चार कोश ग्रामांतरे, खरची बांधे [3]लार;
परभव निश्चय जावणो, करीए धर्म विचार. १२

रज विरज ऊंची गई, [4]नरमाईके पान;
पत्थर ठोकर खात है, करडाईके [5]तान. १३

अवगुन उर धरीए नहीं, जो हुवे विरख [6]बबूल;
गुन लीजे कालु कहे, नहि छायामें सूल. १४

जैसी जापे वस्तु है, वैसी दे दिखलाय;
वाका बुरा न मानीए, कहां लेने वो जाय? १५

गुरु कारीगर सारिखा, टांकी[7] वचन विचार;
पत्थरसे प्रतिमा करे, पूजा लहे अपार. १६

संतनकी सेवा कियां, प्रभु रीझत है आप;
जाका बाल खिलाईए, ताका रीझत बाप. १७

---

१. मुदत पूरी थई नथी. २. लक्ष. ३. साथे. ४. नरमाशपणाथी. ५. तन्मयपणुं.
६. बावळनुं वृक्ष. ७. टांकणारूप वचन गण.

भवसागर संसारमें, दीपा श्री जिनराज;
उद्यम करी फ्होंचे तीरे, बेठी धर्म जहाज. १८

निज आतमकुं दमन कर, पर आतमकुं चीन;
परमातमको भजन कर, सोई मत परवीन. १९

समजु शंके[1] पापसें, अणसमजु हरखंत;
वे लूखां वे चीकणां, इण विध कर्म बधंत. २०

समज सार संसारमें, समजु टाले दोष;
समज समज करि जीव ही, गया अनंता मोक्ष. २१

उपशम विषय कषायनो, संवर तीनुं योग;
किरिया जतन विवेकसें, मिटे कर्म दुःखरोग. २२

रोग मिटे समता वधे, समकित व्रत आराध;
निर्वैरी सब जीवसें, पावे मुक्ति समाध. २३

इति भूलचूकमिच्छामि दुक्कडं

श्री पंचपरमेष्ठि भगवद्भ्यो नमः

(दोहा)

अनंत चौवीशी जिन नमुं, सिद्ध अनंता क्रोड;
वर्तमान जिनवर सवे, केवली दो नव कोड.

गणधरादि सब साधुजी, समकित व्रत गुणधार;
यथायोग्य वंदन करुं, जिनआज्ञा अनुसार.

एक नवकार गणवो

प्रणमी पदपंकज भनी, अरिगंजन अरिहंत;
कथन करुं हवे जीवनुं, किंचित् मुज विरतंत.

---

१. डरे.

अंजनानी देशी

हुं अपराधी अनादिको, जनम जनम गुना किया भरपूर के;
लूंटीआ प्राण छ कायना, सेव्यां पाप अढारां करूर के.

(हवेनुं गद्य मूळ हिंदी भाषामां छे तेनुं गुर्जर भाषांतर मूक्युं छे.)

आज सुधी आ भवमां, पहेलां संख्याता, असंख्याता अने अनंता भवमां कुगुरु, कुदेव अने कुधर्मनी सद्दहणा, प्ररूपणा, फरसना, सेवनादिक संबंधी पापदोष लाग्या ते सर्वे मिच्छामि दुक्कडं.

अज्ञानपणे, मिथ्यात्वपणे, अव्रतपणे, कषायपणे, अशुभयोगे करी, प्रमादे करी अपछंद-अविनीतपणुं में कर्युं ते सर्वे मिच्छामि दुक्कडं.

श्री अरिहंत भगवंत वीतराग केवलज्ञानी महाराजनी, श्री गणधरदेवनी, श्री आचार्यनी, श्री धर्माचार्यनी, श्री उपाध्यायनी, अने श्री साधु-साध्वीनी, श्रावकश्राविकानी, समदृष्टि साधर्मी उत्तम पुरुषोनी, शास्त्रसूत्रपाठनी, अर्थ-परमार्थनी, धर्म संबंधी अने सकल पदार्थोनी अविनय, अभक्ति, आशातनादि करी, करावी, अनुमोदी; मन, वचन अने कायाए करी द्रव्यथी, क्षेत्रथी, कालथी अने भावथी सम्यक्प्रकारे विनय, भक्ति, आराधना, पालन, स्पर्शना, सेवनादिक यथायोग्य अनुक्रमे नहीं करी, नहीं करावी, नहीं अनुमोदी, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं. मारी भूलचूक, अवगुण, अपराध सर्वे माफकरो, क्षमा करो; हुं मन, वचन, कायाए करी खमावुं छुं.

दोहा

अपराधी गुरु देवको, तीन भुवनको चोर;
ठगुं विराणा मालमें, हा हा कर्म कठोर.

कामी कपटी लालची, अपछंदा अविनीत;
अविवेकी क्रोधी कठिन, महापापी भयभीत.

जे में जीव विराधिया, सेव्यां पाप अढार;
नाथ तुमारी साखसें, वारंवार धिक्कार.

पहेलुं पाप प्राणातिपात :–

छकायपणे में छकाय जीवनी विराधना करी; पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, बेइंद्रिय, तेइंद्रिय, चौरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, संज्ञी, असंज्ञी, गर्भज चौदे प्रकारे संमूर्छिम आदि त्रस स्थावर जीवोनी विराधना करी, करावी, अनुमोदी मन, वचन अने कायाए करी, ऊठतां, बेसतां, सूतां, हालतां, चालतां, शस्त्र, वस्त्र, मकानादिक उपकरणो उठावतां, मूकतां, लेतां, देतां, वर्ततां, वर्तावतां, अपडिलेहणा, दुपडिलेहणा संबंधी, अप्रमार्जना, दुःप्रमार्जना संबंधी, अधिकी ओछी, विपरीत पूंजना पडिलेहणा संबंधी अने आहार विहारादिक नाना प्रकारना घणा घणा कर्तव्योमां संख्याता, असंख्याता अने निगोद आश्रयी अनंता जीवना जेटला प्राण लूंट्या, ते सर्व जीवोनो हुं पापी अपराधी छुं, निश्चय करी बदलानो देणदार छुं. सर्व जीव मने माफ करो. मारी भूलचूक, अवगुण, अपराध सर्वे माफकरो. देवसीय, राईय, पाक्षिक, चौमासी अने सांवत्सरिक संबंधी वारंवार मिच्छामि दुक्कडं. वारंवार क्षमावुं छुं. तमे सर्वे क्षमजो.

खामेमि सव्वजीवे, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्व भूएसु, वेरं मज्झं न केणइ॥

ते दिवस मारो धन्य हशे के जे दिवसे हुं छये कायना जीवोना वैरबदलाथी निवृत्ति पामीश. सर्व चोराशी लाख जीव-

योनिने अभयदान दईश. ते दिवस मारो परम कल्याणमय थशे.

बीजुं पाप मृषावाद :–

क्रोधवशे, मानवशे, मायावशे, लोभवशे, हास्ये करी, भयवशे इत्यादिक करी मृषा वचन बोल्यो, निंदा-विकथा करी, कर्कश, कठोर, मार्मिक भाषा बोली इत्यादिक अनेक प्रकारे मृषा जूठुं बोल्यो, बोलाव्युं, बोलतां प्रत्ये अनुमोद्युं ते सर्वे मन-वचन-कायाए करी मिच्छामि दुक्कडं. ते दिवस मारो धन्य हशे के जे दिवसे हुं सर्वथा प्रकारे मृषावादनो त्याग करीश. ते दिवस मारो परम कल्याणमय थशे.

त्रीजुं पाप अदत्तादान :–

अणदीधी वस्तु चोरी करीने लीधी, विश्वासघात करी थापण ओळवी, परस्त्री, परधन हरण कर्यां ते मोटी चोरी लौकिकविरुद्धनी, तथा अल्प चोरी ते घर संबंधी नाना प्रकारना कर्तव्योमां उपयोग सहिते ने उपयोग रहिते चोरी करी, करावी, करता प्रत्ये अनुमोदी, मन-वचन-कायाए करी तथा धर्म संबंधी ज्ञान, दर्शन, चारित्र अने तप श्री भगवंत गुरुदेवोनी आज्ञा वगर कर्यां ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं. ते दिवस मारो धन्य हशे के जे दिवसे हुं सर्वथा प्रकारे अदत्तादाननो त्याग करीश. ते मारो परम कल्याणमय दिन थशे.

चोथुं पाप अब्रह्म :–

मैथुन सेववामां मन, वचन अने कायाना योग प्रवर्ताव्या; नव वाड सहित ब्रह्मचर्य पाळ्युं नहीं; नव वाडमां अशुद्धपणे प्रवृत्ति करी; पोते सेव्युं, बीजा पासे सेवराव्युं, सेवनार प्रत्ये भलुं जाण्युं, ते मन वचन कायाए करी मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार

मिच्छामि दुक्कडं. ते दिवस मारो धन्य हशे केजे दिवसे हुं नववाड सहित ब्रह्मचर्य-शीलरत्न आराधीश, सर्वथा प्रकारे कामविकारोथी निवर्तीश. ते दिवस मारो परम कल्याणमय थशे.

पांचमुं परिग्रह पापस्थानक :–

सचित परिग्रह ते दास, दासी, द्विपद, चौपद आदि, मणि पथ्थर आदि अनेक प्रकारे छे अने अचित परिग्रह सोनुं, रूपुं, वस्त्र, आभरण आदि अनेक वस्तु छे, तेनी ममता, मूर्छा, पोतापणुं कर्युं; क्षेत्र घर आदि नव प्रकारना बाह्य परिग्रह अने चौद प्रकारना अभ्यंतर परिग्रहने धार्यो, धराव्यो, धरता प्रत्ये अनुमोद्यो; तथा रात्रिभोजन, अभक्ष्य आहारादि संबंधी पाप दोष सेव्या ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं. ते दिवस मारो धन्य हशे केजे दिवसे हुं सर्वथा प्रकारे परिग्रहनो त्याग करी संसारना प्रंपचोथी निवर्तीश. ते दिवस मारो परम कल्याणमय थशे.

छठ्ठुं क्रोध पापस्थानक :–

क्रोध करीने पोताना आत्माने अने परना आत्माने तप्तायमान कर्या, दुःखित कर्या, कषायी कर्या, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

सातमुं मान पापस्थानक :–

मान एटले अहंभाव सहित त्रण गारव अने आठ मद आदि कर्या, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

आठमुं माया पापस्थानक :–

संसार संबंधी तथा धर्म संबंधी अनेक कर्तव्योमां कपट कर्युं, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

नवमुं लोभ पापस्थानक :–

मूर्छाभाव कर्यो, आशा तृष्णा वांच्छादिक कर्या, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

दशमुं राग पापस्थानक :–

मनगमती वस्तुओमां स्नेह कीधो, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

अगियारमुं द्वेष पापस्थानक :–

अणगमती वस्तु जोई द्वेष कर्यो, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

बारमुं कलह पापस्थानक :–

अप्रशस्त वचन बोली क्लेश उपजाव्या, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

तेरमुं अभ्याख्यान पापस्थानक :–

अछतां आल दीधां, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

चौदमुं पैशुन्य पापस्थानक :–

परनी चुगली चाडी करी, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

पंदरमुं परपरिवाद पापस्थानक :–

बीजाना अवगुण, अवर्णवाद बोल्यो, बोलाव्या, अनुमोद्या, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

सोळमुं रतिअरति पापस्थानक :–

पांच इंद्रियना २३ विषयो, २४० विकारो छे तेमां मनगमतामां

राग कर्यो, अणगमतामां द्वेष कर्यो; संयम, तप आदिमां अरति करी, करावी, अनुमोदी तथा आरंभादि असंयम, प्रमादमां रतिभाव कर्यो, कराव्यो, अनुमोद्यो, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

सत्तरमुं मायामृषावाद पापस्थानक :–

कपट सहित जूठुं बोल्यो, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

अढारमुं मिथ्यादर्शनशल्य पापस्थानक :–

श्री जिनेश्वर देवना मार्गमां शंका, कांक्षादिक विपरीत प्ररूपणा करी, करावी, अनुमोदी, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

एवं अढार पापस्थानक ते द्रव्यथी, क्षेत्रथी, काळथी, भावथी, जाणतां, अजाणतां, मन, वचन, कायाए करी सेव्यां, सेवराव्यां, अनुमोद्यां; अर्थे, अनर्थे, धर्म अर्थे, कामवशे, मोहवशे, स्ववशे, परवशे कर्यां; दिवसे, रात्रे एकला के समूहमां, सूतां वा जागतां, आ भवमां, पहेलां संख्याता, असंख्याता, अनंता भवोमां परिभ्रमण करतां आज दिन अद्यक्षण पर्यंत राग-द्वेष, विषय-कषाय, आळस, प्रमादादिक पौद्‌गलिक प्रपंच, परगुण पर्यायने पोताना मानवारूप विकल्पे करी भूल करी; ज्ञाननी विराधना करी, दर्शननी विराधना करी, चारित्रनी विराधना करी, देशचारित्रनी विराधना करी, तपनी विराधना करी; शुद्ध श्रद्धा-शील, संतोष, क्षमादिक निजस्वरूपनी विराधना करी; उपशम, विवेक, संवर, सामायिक, पोसह, प्रतिक्रमण, ध्यान, मौनादि नियम, व्रत, पचखाण, दान, शील, तपादिनी विराधना करी; परम कल्याणकारी आ बोलोनी आराधना,

पालना आदिक मन, वचन अने कायाए करी नहीं, करावी नहीं, अनुमोदी नहीं, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

छये आवश्यक सम्यक् प्रकारे विधि-उपयोग सहित आराध्या नहीं, पाळ्या नहीं, स्पर्श्या नहीं, विधि-उपयोग रहित-निरादरपणे कर्यां, परंतु आदर-सत्कार, भाव-भक्ति सहित नहीं कर्यां; ज्ञानना चौद, समकितना पांच, बार व्रतना साठ, कर्मादानना पंदर, संलेखनाना पांच एवं नव्वाणुं अतिचारमां तथा १२४ अतिचार मध्ये तथा साधुना १२५ अतिचार मध्ये तथा बावन अनाचरणना श्रद्धादिकमां विराधनादि जे कोई अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचारादि सेव्या, सेवराव्या, अनुमोद्या, जाणतां अजाणतां मन, वचन, कायाए करी, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

में जीवने अजीव सद्दह्या, प्ररूप्या; अजीवने जीव सद्दह्या, प्ररूप्या; धर्मने अधर्म अने अधर्मने धर्म सद्दह्या, प्ररूप्या; साधुने असाधु अने असाधुने साधु सद्दह्या, प्ररूप्या; तथा उत्तम पुरुष, साधु, मुनिराज, साध्वीजीनी सेवा भक्ति यथाविधि मानतादि नहीं करी, नहीं करावी, नहीं अनुमोदी तथा असाधुओनी सेवा भक्ति आदि मानता, पक्ष कर्यो; मुक्तिना मार्गमां संसारनो मार्ग यावत् पच्चीस मिथ्यात्वमांना मिथ्यात्व सेव्यां, सेवराव्यां, अनुमोद्यां, मने करी, वचने करी, कायाए करी; पचीस कषाय संबंधी, पचीस क्रिया संबंधी, तेत्रीश आशातना संबंधी, ध्यानना ओगणीस दोष, वंदनाना बत्रीस दोष, सामायिकना बत्रीस दोष अने पोसहना अढार दोष संबंधी मने, वचने, कायाए करी जे कांई पाप दोष लाग्या, लगाव्या, अनुमोद्या, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

महामोहनीय कर्मबंधनां त्रीस स्थानकने मन, वचन, कायाए

करी सेव्यां, सेवराव्यां, अनुमोद्यां; शीलनी नव वाड, आठ प्रवचन मातानी विराधनादिक तथा श्रावकना एकवीस गुण अने बार व्रतनी विराधनादि मन, वचन अने कायाए करी, करावी, अनुमोदी; तथा त्रण अशुभ लेश्यानां लक्षणोनी अने बोलोनी सेवना करी अने त्रण शुभ लेश्यानां लक्षणोनी अने बोलोनी विराधना करी; चर्चा, वार्ता, व्याख्यानमां श्री जिनेश्वर देवनो मार्ग लोप्यो, गोपव्यो, नहीं मान्यो, अछतानी स्थापना करी–प्रवर्ताव्यो, छतानी स्थापना करी नहीं अने अछतानी निषेधना करी नहीं, छतानी स्थापना अने अछताने निषेध करवानो नियम कर्यो नहीं, कलुषता करी तथा छ प्रकारे ज्ञानावरणीय बंधना बोल तेमज छ प्रकारना दर्शनावरणीय बंधना बोल यावत् आठ कर्मनी अशुभ प्रकृति बंधना पंचावन कारणे करी, ब्यासी प्रकृति पापोनी बांधी, बंधावी, अनुमोदी, मने करी, वचने करी, कायाए करी, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

एक एक बोलथी मांडी कोडाकोडी यावत् संख्यात, असंख्यात, अनंतानंत बोल पर्यंत में जाणवा योग्य बोलने सम्यक्प्रकारे जाण्या नहीं, सद्दह्या-प्ररूप्या नहीं तथा विपरीतपणे श्रद्धान आदि करी, करावी, अनुमोदी, मन, वचन, कायाए करी, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं. एक एक बोलथी मांडी यावत् अनंता बोलमां छांडवा योग्य बोलने छांड्या नहीं अने ते मन, वचन, कायाए करी सेव्या, सेवराव्या, अनुमोद्या, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

एक एक बोलथी मांडी यावत् अनंतानंत बोलमां आदरवा योग्य बोल आदर्या नहीं, आराध्या-पाळ्या-स्पर्श्या नहीं; विराधना खंडनादिक करी, करावी, अनुमोदी, मन, वचन, कायाए करी, ते मने

धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

हे जिनेश्वर वीतराग ! आपनी आज्ञा आराधवामां जे जे प्रमाद कर्यो, सम्यक्प्रकारे उद्यम नहीं कर्यो, नहीं कराव्यो, नहीं अनुमोद्यो; मन, वचन, कायाए करी अथवा अनाज्ञा विषे उद्यम कर्यो, कराव्यो, अनुमोद्यो; एक अक्षरना अनंतमा भाग मात्र-कोई स्वप्नमात्रमां-पण आपनी आज्ञाथी न्यून-अधिक, विपरीतपणे प्रवर्त्यो, ते मने धिक्कार, धिक्कार, वारंवार मिच्छामि दुक्कडं.

ते मारो दिवस धन्य हशे के जे दिवसे हुं आपनी आज्ञामां सर्वथा प्रकारे सम्यक्पणे प्रवर्तीश.

दोहा

श्रद्धा अशुद्ध प्ररूपणा, करी फरसना सोय;
अनजाने पक्षपातमें, मिच्छा दुक्कड मोय.

सूत्र अर्थ जानुं नहीं, अल्पबुद्धि अनजान;
जिनभाषित सब शास्त्रका, अर्थ पाठ परमान.

देवगुरु धर्म सूत्रकुं, नव तत्त्वादिक जोय;
अधिका ओछा जे कह्या, मिच्छा दुक्कड मोय.

हुं मगसेलीओ हो रह्यो, नहीं ज्ञान रसभीज;
गुरुसेवा न करी शकुं, किम मुज कारज सीझ.

जाने देखे जे सुने, देवे सेवे मोय;
अपराधी उन सबनको, बदला देशुं सोय.

जैन धर्म शुद्ध पायके, वरतुं विषय कषाय;
एह अचंबा हो रह्या, जलमें लागी लाय.

एक कनक अरु कामिनी, दो मोटी तरवार;
ऊठ्यो थो जिन भजनकुं, बिचमें लियो मार.

सवैया

संसार छार तजी फरी, छारनो वेपार करुं,
पहेलांनो लागेलो कीच, धोई कीच बीच फरुं;
तेम महा पापी हुं तो मानुं सुख विषयथी,
करी छे फकीरी एवी, अमीरीना आशयथी.

दोहा

त्याग न कर संग्रह करुं, विषयवचन जिम आहार;
तुलसी ए मुज पतितकुं, वारंवार धिक्कार.

कामी कपटी लालची, कठण लोहको दाम;
तुम पारस परसंगथी, सुवरन थाशुं स्वाम.

जप तप संवर हीन हुं, वळी हुं समता हीन;
करुणानिधि कृपाळ हे! शरण राख, हुं दीन.

नहि विद्या नहि वचनबळ, नहि धीरज गुण ज्ञान;
तुलसीदास गरीबकी, पत राखो भगवान.

आठ कर्म प्रबळ करी, भमीओ जीव अनादि;
आठ कर्म छेदन करी, पावे मुक्ति समाधि.

सुसा जैसे अविवेक हुं, आंख मीच अंधियार;
मकडी[1] जाल बिछायके, फसुं आप धिक्कार.

सब भक्षी जिम अग्नि हुं, तपीओ विषय कषाय;
अवछंदा अविनीत में, धर्मी ठग दुःखदाय.

१. करोळियो.

कहा भयो घर छांडके, तज्यो न माया संग;
नाग त्यजी जिम कांचली, विष नहि तजियो अंग.

पुत्र कुपात्र ज में हुओ, अवगुण भर्यो अनंत;
याहित वृध्द विचारके, माफ करो भगवंत.

शासनपति वर्द्धमानजी, तुम लग मेरी दोड;
जैसे[1] समुद्र जहाज विण, सूझत और न ठोर.

भवभ्रमण संसार दुःख, ताका वार न पार;
निर्लोभी सद्‌गुरु बिना, कवण उतारे पार.

श्री पंचपरमेष्ठी भगवंत गुरुदेव महाराज, आपनी सम्यक्‌ज्ञान, सम्यक्‌दर्शन, सम्यक्‌चारित्र, तप, संयम, संवर, निर्जरा आदि मुक्तिमार्ग यथाशक्तिए शुध्द उपयोग सहित आराधन पालन स्पर्शन करवानी आज्ञा छे. वारंवार शुभ उपयोग संबंधी सज्झाय ध्यानादिक अभिग्रह-नियम पचखाणादि करवा, करावववानी, समिति-गुप्ति आदि सर्व प्रकारे आज्ञा छे.

निश्चे चित शुध मुख पढत, तीन योग थिर थाय;
दुर्लभ दीसे कायरा, हलु कर्मी चित भाय.
अक्षर पद हीणो अधिक, भूलचूक कही होय;
अरिहा सिध्द निज साखसें, मिच्छा दुक्कड मोय.

भूलचूक मिच्छामि दुक्कडं

(बृहद् आलोचना समाप्त)

---

१. समुद्रमां वहाणना पक्षीने बीजे ऊडीने जवानुं स्थळ नथी तेम.

३८. स्तुति तथा थोयो

मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः
कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि. १

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता;
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्त्ररश्मिं,
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम्. २

त्वामामनंति मुनयः परमं पुमांस-
मादित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात्;
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयंति मृत्युम्,
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र! पन्थाः ३

त्वामव्ययं विभूमचिंत्यमसंख्यमाद्यम्,
ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनंगकेतुम्,
योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकम्;
ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ४

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित बुद्धिबोधात्,
त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रयशंकरत्वात्;
धाताऽसि धीर! शिवमार्गविधेर्विधानात्,
व्यक्तम् त्वमेव भगवन्! पुरुषोत्तमोऽसि. ५

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषैः
त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीशः
दोषैरुपात्तविविधाश्रयजातगर्वैः
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि. ६

श्रेयं श्रियां मंगलकेलिसद्म, नरेन्द्रदेवेन्द्रनतांघ्रिपद्म,
सर्वज्ञ सर्वातिशयप्रधान, चिरं जय ज्ञानकलानिधान. ७

जगत्रयाधार कृपावतार, दुर्वार संसारविकारवैद्य,
श्री वीतराग त्वयि मुग्धभावाद्, विज्ञ प्रभो विज्ञपयामि किंचित्. ८

सरसशांतिसुधारससागरम् शुचितरं गुणरत्नमहागरम्,
भविकपंकजबोधिदिवाकरं, प्रतिदिनं प्रणमामि जिनेश्वरम्. ९

श्री सहजात्म स्वरूप सदोदित श्री शुद्ध चैतन्य स्वामीजी,
जिनका वचनामृतपानसें, सहज समाधि पामीजी,
जिनका हृदयदर्शने हृदयकी विषमवृत्ति विरामीजी,
ते श्री परमकृपाळु सद्‌गुरु राज नमुं शिर नामीजी. १०

अनंतानंत संसार—संतति छेद कारणम्,
(गुरुराज) जिनराज पदांभोज स्मरणं शरणं मम. ११

परिपूर्ण ज्ञाने परिपूर्ण ध्याने,
परिपूर्ण चारित्र बोधित्वदाने,
नीरागी महा शांतमूर्ति तमारी,
प्रभु प्रार्थना शांति (राज) लेशो अमारी. १२

प्रशमरसनिमग्नं दृष्टियुग्मं प्रसन्नम्,
वदनकमलमंकः कामिनीसंगशून्यः
करयुगमपि यत्ते शस्त्रसंबंधवन्ध्यम्,
तदसि जगति देवो वीतरागस्त्वमेव. १३

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेक शरणं मम,
तस्मात् कारुण्यभावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर. १४

मोक्षमार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्मभूभृताम्,
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां, वन्दे तद्‌गुण लब्धये. १५

३९. पच्चख्खाण

(१) चउविहार उपवासनुं पच्चख्खाण

सूरे उग्गए अब्भत्तट्ठं पच्चक्खाई; चउव्विहं पि आहारं असणं, पाणं, खाईमं, साईमं; अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, वोसिरे.

(२) तिविहार उपवासनुं पच्चख्खाण

सूरे उग्गए अब्भत्तट्ठं पच्चक्खाई; तिविहं पि आहारं असणं, खाईमं,साईमं;अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं; पाणाहार पोरिसिं, साढपोरिसिं, मुट्ठिसहिअं, पच्चक्खाई; अन्नत्थणाभोगेणं, सहसा-गारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा, बहुलेवेण वा, ससित्थेण वा, असित्थेण वा, वोसिरे.

(३) एकासणा-बेआसणानुं पच्चख्खाण

उग्गए सूरे, नमुक्कार सहिअं, पोरिसिं, साढपोरिसिं मुट्ठिसहिअं पच्चक्खाई. उग्गए सूरे, चउव्विहं पि आहारं असणं, पाणं, खाईमं, साईमं; अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, विगईओ पच्चक्खाई, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, लेवालेवेणं, गिहत्थसंसट्ठेणं, उक्खित्तविवेगेणं, पडुच्चमक्खिएणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहि-वत्तियागारेणं; एगासणं, बियासणं पच्चक्खाई, तिविहं पि आहारं असणं, खाईमं, साईमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, सागारियागारेणं, आउंटणपसारेणं, गुरुअब्भुट्ठाणेणं पारिट्ठावणिया-

गारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा, बहुलेवेण वा, ससित्थेण वा, असित्थेण वा, वोसिरे.

(४) आयंबिलनुं पच्चखखाण

उग्गए सूरे, नमुक्कार सहिअं, पोरिसिं, साढपोरिसिं, मुट्ठिसहिअं पच्चक्खाई. उग्गए सूरे, चउव्विहं पि आहारं असणं, पाणं, खाईमं, साईमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, आयंबिलं पच्चक्खाई. अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, लेवालेवेणं, गिहत्थसंसट्ठेणं, उक्खित्तविवेगेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, एगासणं पच्चक्खाई; तिविहं पि आहारं असणं, खाईमं, साईमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, सागारियागारेणं, आउंटणपसारेणं, गुरुअब्भुट्ठाणेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, पाणस्स लेवेण वा, अलेवेण वा, अच्छेण वा, बहुलेवेण वा, ससित्थेण वा, असित्थेण वा, वोसिरे.

(५) चउविहारनुं पच्चखखाण

दिवसचरिमं पच्चक्खाई, चउव्विहं पि आहारं असणं, पाणं, खाईमं, साईमं. अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे.

(६) पाणाहारनुं पच्चखखाण

पाणाहार दिवसचरिमं पच्चक्खाई. अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे.

श्री सनातन जैन धर्म श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, अगास
संक्षिप्त परिचय

परम ज्ञानावतार परमकृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्रजीके परम आज्ञानुवर्ती श्री लघुराज स्वामीके (प्रभुश्रीजीके) निमित्तसे इस आश्रमकी स्थापना वि. सं. १९७६ में हुई। मुनिश्री लघुराजस्वामीकी छत्रछायामें इस आश्रमकी उत्पत्ति हुई अतः भक्तजनोने प्रारंभमें इसका नाम 'श्री लघुराज आश्रम' रखा, परंतु अपने नाम या स्थापनाकी अंशमात्र भी इच्छा न होनेसे परम निःस्पृह गुरुभक्त महर्षि मुनिश्रीने श्रीमद्के इस स्थूल कीर्तिस्तंभका नाम "श्री सनातन जैन धर्म श्रीमद् राजचंद्र आश्रम" रखनेकी सूचना की। तदनुसार इस आश्रमका नाम रखा गया। श्री सनातन जैनधर्मकी पुष्टिके लिये ही यह आश्रम है।

इस आश्रममें प्रविष्ट होते ही एक भव्य प्रवेशद्वार दृष्टिगोचर होता है जिस पर 'क्षमा ही मोक्षका भव्य दरवाजा है' यह बडे अक्षरोंमें उत्कीर्ण है। फिर सामने एक नयनरम्य मंदिर है जिसमें नीचे श्वेतांबर और ऊपर दिगंबर मंदिर है। उसके भूमिगृहमें श्रीमद् राजचंद्रजीकी संगमरमरकी शरीरप्रमाण पद्मासन मुद्राकी प्रतिमा बिराजमान है। इस प्रतिमाके एक ओर प्रणवमंत्र ॐकार तथा दूसरी ओर श्रीमद्जीकी पादुकाजीकी स्थापना है।

इस मंदिरकी बांई ओर एक भव्य सभामंडप है जिसमें भक्ति, सत्संग, पूजा, सत्श्रवण आदिके लिये सैंकडो मुमुक्षु साथ बैठकर आत्मसाधना करते हैं। इस मंदिरके चौकमें मुख्य प्रवेशद्वारके उपर दूसरी मंजिल पर एक पुस्तकालय है। तीसरी मंजिल पर खुले चौकके मध्यमें सुंदर संगमरमरकी देरीमें श्रीमद्जीकी खडे कायोत्सर्गकी ध्यानमुद्राकी पंचधातुकी प्रतिमा बिराजमान है।

मंदिरवाले इस भक्ति संकुलमें दांई ओर एक व्याख्यानमंदिर है जहाँ श्रीमद्जीका पद्मासन मुद्राका भव्य चित्रपट स्थापित किया हुआ है। यहाँ मुख्यतया स्त्रीवर्ग स्वाध्याय एवं प्रतिक्रमण करते है। इसके ऊपर शांतिस्थान है जहाँ श्रीमद्जीका सुंदर चित्रपट स्थापित है। यहाँ पर्युषणादि पर्वोमें पुरुषवर्ग प्रतिक्रमण करते है। वहाँसे पूर्वमें आते हुए 'श्री राजमंदिर' आता है जिसमें श्रीमद्जी तथा प. पू. लघुराजस्वामी (प्रभुश्रीजी)के सुंदर चित्रपट तथा आज्ञा संबंधी शिलालेख है। वहाँसे पूर्वमें पू. श्री ब्रह्मचारीजीका निवासखंड है जहाँ उनके दो चित्रपट स्थापित है। वहाँसे पूर्वमें प. पू. प्रभुश्रीजीका निवासखंड है जहाँ सं. १९९२

की वैशाख सुदी ८ को वे समाधिस्थ हुए थे। वहाँ उनकी पाट, गद्दी, लकडी आदि स्मृतिचिह्न तथा उनका चित्रपट दर्शनार्थ रखे हुए है।

मंदिरके चौकके बाहर ईशान दिशाकी ओर प्रभुश्रीजीके अग्निसंस्कार स्थल पर एक देरीमें उनके पादुकाजी स्थापित किये हुए है, उससे आगे पू. श्री ब्रह्मचारीजीके अग्निसंस्कार स्थान पर उनका समाधि-स्मारक बना हुआ है।

वर्तमान सभामंडपमें श्रीमद्‌जीका कायोत्सर्ग मुद्राका उनके शरीर प्रमाणका भव्य चित्रपट स्थापित किया हुआ है। वर्तमान सभामंडप पर्व दिनोंमें छोटा पड़नेसे उसके समांतर संगमरमरका १२०'×८०' का एक नूतन सभामंडप निर्मित किया गया है। कुल १७,००० वर्गफूटके इस सभामंडपमें अंदाजन ३,००० मुमुक्षु एक साथ बैठकर भक्तिस्वाध्याय कर सकते हैं। इस नूतन सभामंडपमें श्रीमद्‌जीका कायोत्सर्ग मुद्राका १३ फूट ऊँचाईका भव्य विशाल चित्रपट स्थापित किया हुआ है।

परमकृपालुदेव श्रीमद् राजचंद्रजीने प्रभुश्रीजीसे कहा था-"मुनि, दुषमकाल है इसलिये जडभरत होकर विचरना। रिद्धि, सिद्धि प्रकट होगी, उन्हें लाँघ जाना। इस कालके जीव पके हुए चीभडे (एक फल) जैसे हैं। कठोरता सहन नहीं कर सकेंगे। इसलिये करुणामूर्ति बनोगे तो अनेक जीवोंका आपके द्वारा कल्याण होगा।"

वि. सं. १९७६ से १९९२ तक आश्रममें रहकर प्रभुश्रीजीने एक अनन्य भक्तिक्रम निश्चित करके दिया है जिसका आराधन लगभग पिछले ९० बरसोंसे अविरत उनकी आज्ञानुसार आश्रममें चल रहा है। यह आश्रमकी भूमि प्रभुश्रीजीके चरणस्पर्श तथा निवाससे पावन बनी हुई है और आज भी उनकी पवित्र चेतनासे स्पर्शित परमाणुओंका आश्रममें अनुभव होता है। इस पवित्र सत्संगधाम, तीर्थशिरोमणि आश्रमकी यह एक अनन्य विशिष्टता है।

सबेरे ४-०० बजेसे लेकर रातको ९-३० बजे तक निम्नानुसार क्रम चलता है:—

सबेरे ४-०० से ६-३०	भक्तिके पद, मंत्रस्मरण, आलोचनापाठ, सामायिकपाठ, चैत्यवंदन, स्तवन.
सबेरे ९-०० से ११-३०	श्री आत्मसिद्धिशास्त्रकी पूजा अथवा अन्य पूजा.
दोपहर २-०० से ४-१५	भक्तिकेपद तथा वचनामृत आदि वांचन.
शाम ६-००	देववंदन तथा ४ जगह पर आरती-मंगलदीवो.
रात ७-१५ से ९-३०	भक्तिकेपद, मंत्रस्मरण, श्री आत्मसिद्धिशास्त्रकी-भक्ति तथा उपदेशामृत एवं बोधामृतमें से वांचन.

(पर्व दिनोंमें तथा ऋतु अनुसार कार्यक्रम तथा समयमें परिवर्तन होता है)

इस आश्रममें मध्यस्थ वातावरण होनेसे श्वेतांबर, दिगंबर, स्थानकवासी, वैष्णव संप्रदायवाले तथा अन्य संप्रदायवाले किंतु आत्माका कल्याण करनेकी भावनावाले जिज्ञासु जीव आते हैं और रहते हैं । इस पवित्र सत्संगधाम, तीर्थशिरोमणि आश्रमकी यह भी एकअनन्य विशिष्टता है ।

पू. श्री ब्रह्मचारीजीका वि. सं. २०१० में देहोत्सर्ग हुए आज कई वर्ष हो गये हैं और उनका कोई उत्तराधिकारी भी नहीं है फिर भी इस आश्रममें ज्ञानीकी आज्ञानुसार भक्ति-सत्संगका निश्चित कार्यक्रम अस्खलितरूपसे चल रहा है । इस आश्रममें आनेवाले और रहनेवाले प्रत्येक मुमुक्षु भाईबहिनके लिये भक्ति स्वाध्यायके क्रममें उपस्थित रहना और भाग लेना अपेक्षित है । यहाँ सभीको मात्र आत्मार्थके लिये, सत्संग, त्याग, भक्ति आदिकेलिये रहना है । किसी भी प्रकारके विषयकषाय या प्रमादके लिये आश्रममें रहनेकी मनाई है ।

वि. सं. १९५४ में प. पू. प्रभुश्रीजी वसो गाँवमें थे तब परमकृपालुदेव वहाँ पधारे थे । उस समय परमकृपालुदेवने प. पू. प्रभुश्रीजीको, जो कोई मुमुक्षुभाई बहिन आत्मार्थ साधन माँगे तो उसे सात व्यसन, सात अभक्ष्य आदिके त्यागपूर्वक नित्य नियमके पाठ तथा "सहजात्मस्वरूप परमगुरु" मंत्र देनेकी आज्ञा की थी । इस प्रकारसे परमकृपालुदेवने वर्तमानकालमें मोक्षमार्गको प्रकट किया और उसे विश्वमें प्रवर्तमान करनेका अधिकार प. पू. प्रभुश्रीजीको दिया । इस अधिकारके अनुसार प. पू. प्रभुश्रीजीने आश्रमके लिये इस आराधना क्रमकी योजना की है ।

इस बारेमें पू. श्री ब्रह्मचारीजी बोधामृत भाग ३ पत्रांक ९८० में लिखते है–

"प. पू. प्रभुश्रीजीने आश्रमके लिये जो कार्यक्रम बनाया है वह बहुत दीर्घदृष्टिपूर्वक निश्चित किया है । उसमें रस न आवे उतनी जीवकी मुमुक्षुताकी कमी है । अपनी कल्पनाके अनुसार प्रवृत्ति की जाये तो उसमें उसे कुछ रस (रुचि) लगता है, किंतु इससे तो स्वच्छंद पुष्ट होता है और वह संसारका कारण है, ऐसा सोचकर ज्ञानीपुरुषके मार्गमें मनको मोडना ही हितकारी है। न माने तो हठपूर्वक भी मनको क्रममें जोडना हितकारी है ।"

“प. पू. प्रभुश्रीजीने अपने देहोत्सर्गके कुछ दिन पूर्व, सं. १९९२ की चैत्र वदी पंचमीके पवित्र दिनको इस आज्ञामार्गकी सुपुर्दगी पू. श्री ब्रह्मचारीजीको की थी । पू. श्री ब्रह्मचारीजीके देहोत्सर्गके बाद, परमकृपालुदेवकी प्रत्यक्ष आज्ञासे कोई वंचित न रहे और आज भी मुमुक्षुजीव उस आज्ञाको मान्य कर सके इस शुभ आशयसे जिस स्थान पर प. पू. प्रभुश्रीजी तथा पू. श्री ब्रह्मचारीजी आज्ञा देते थे, उस ‘श्री राजमंदिर’ के नामसे प्रसिद्ध धर्मस्थान पर यह नित्यनियमकी आज्ञा और स्मरणमंत्रका परिचय करानेवाले प. पू. प्रभुश्रीजीके उपदेशबोधके साथ एक शिलालेख रखा गया है । इस शिलालेखमें बताये अनुसार आज भी कई सत्साधक “संत (प्रभुश्रीजी)के कहे अनुसार मुझे परमकृपालुदेवकी आज्ञा मान्य है” (उ. पृ. २७३) ऐसी भावनासे, इस स्थानमें कृपालुदेवको प्रत्यक्ष मानकर, उनके चित्रपट समक्ष उनकी प्रत्यक्ष आज्ञाको श्रद्धापूर्वक मान्य करके, उसकी आराधना करनेका नियम लेते हैं ।

आश्रममें सात व्यसन, सात अभक्ष्य, कंदमूल, रात्रिभोजनका सर्वथा निषेध है । ब्रह्मचर्य पालन, आश्रममें आने तथा रहनेवालोंके लिये अनिवार्य और आवश्यक है । आश्रमकी यह मूलभूत नींव है ।

इस आश्रमके बारेमें प. पू. प्रभुश्रीजीने ऐसे उद्‌गार निकाले हैं–

“यह आश्रम कैसा है जानते हो ? देवस्थानक है । यहाँ जिसे आना हो उसे लौकिकभाव बाहर, दरवाजेके बाहर छोड़कर आना है । यहाँ आत्माका योगबल प्रवर्तमान है ।” (पृ. २६९) “इस आश्रममें कृपालुदेवकी आज्ञा प्रवर्तमान है । वे महान अद्‌भुत ज्ञानी है । इस पुण्यभूमिका माहात्म्य अलग ही है । यहाँ रहनेवाले जीव भी पुण्यशाली है ।” (पृ. ४३३)

आश्रममें मुमुक्षुओंके रहने और भोजनकी समुचित व्यवस्था है । पर्व दिनोंमें हजारों मुमुक्षु यहाँ आकर लाभ लेते हैं ।

यहाँके पुस्तक बिक्री विभागमें आश्रम द्वारा प्रकाशित १२० से ज्यादा पुस्तकोंकी बिक्री होती है । जिसमें श्री परमश्रुत प्रभावक मण्डलके अन्तर्गत श्रीमद् राजचंद्र जैन शास्त्रमालाके नामसे प्रकाशित शास्त्र भी समाविष्ट है । (पुस्तकसूची इसी पुस्तकमें अन्यत्र दी गई है ।)

ओफिस कार्यालयके उपर पहली मंजिल पर प्राचीन जैन साहित्यका नमूनेदार संग्रह स्थान है जहाँ ५०० से ज्यादा शास्त्रोंका संग्रह है, जिसमें कई शास्त्र हस्तलिखित है । लम्बे समय तक ये शास्त्र सुरक्षित रह सके इस हेतु उन्हें लेमीनेट करके व्यवस्थित रखा गया है ।

इस आश्रमका संचालन सं. १९८०, चैत्र सुद ५ ता. ९-४-१९२४ के दिन प. उ. प. पू. प्रभुश्रीजी द्वारा किये गये ट्रस्टडीडके अनुसार तथा उसके बाद गुजरात राज्यके माननीय चेरिटी कमिश्नरश्री द्वारा बनाई हुई 'स्कीम' के आधीन ट्रस्टीमंडल द्वारा हो रहा है ।

सुज्ञ पाठक अच्छी तरहसे समझ गये होंगे कि प. उ. प. पू. प्रभुश्रीजी द्वारा स्थापित इस आश्रममें उनकी आज्ञानुसार श्री सनातन जैनधर्मकी प्रणाली मान्य है । धर्मका यह मुख्य मार्ग यहाँ सतत बहता रहे एतदर्थ आश्रमका ट्रस्टीमंडल तथा अन्य समझदार मुमुक्षुवर्ग सदा जागृतरूपसे प्रयत्नशील हैं । फिर भी मिथ्या श्रद्धावालोंका परिबल चारों ओर दृष्टिगोचर हो रहा है । ऐसी परिस्थितिमें आश्रमकी सत्प्रणालीमें हस्तक्षेप कर उसके मूल ध्येय और आदर्शको हानि पहुँचानेका प्रयत्न करनेवाले ऐसे तत्त्वोंसे सचेत रहनेकी और समय आनेपर उसका प्रतिकार करनेकी हम सबकी पवित्र फर्ज है । आश्रमका अस्तित्व ही जिस पर टिका हुआ है ऐसे इस प्राणप्रश्नकी रक्षाके लिये ट्रस्टीमंडल आप सबका सहयोग चाहता है । जो इस तीर्थभूमिको आत्मकल्याणका एक अनुपम स्थान मानते है, उनकी तरफसे संपूर्ण सहयोग मिलेगा ही-ऐसी यह ट्रस्टीमंडल श्रद्धा रखता है ।

अन्तमें, फिरसे निवेदन हैं कि श्री सनातन जैन वीतरागमार्गकी उपासनाके लिये ही यह आश्रम है । इस मूल ध्येयको सन्मान देकर, भावपूर्वक सहयोग देकर सब मुमुक्षु इस आश्रमका गौरव बढाये ऐसी हमारी नम्र विनंती है ।

आश्रमके संपर्कके लिये :– श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, स्टेशन अगास
(आणंदसे खंभात लाइन पर तीसरा स्टेशन)
पोस्ट : बोरीआ-३८८१३० वाया : आणंद (पश्चिम रेल्वे)
टेलीफोन : ०२६९२-२८१७७८ फेक्स : ०२६९२-२८१३७८
E-mail ID: agasashram@gmail.com

શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર આશ્રમ, અગાસના પ્રકાશનો

ગુજરાતી પ્રકાશન

૧.	અધ્યાત્મરસ-તરંગ	રૂા. ૪/-
૨.	આશ્રમ પરિચય-અમૃત મહોત્સવ	રૂા. ૫/-
૩.	આઠ દૃષ્ટિની સજ્ઝાય	રૂા. ૩/-
૪.	આત્મસિદ્ધિશાસ્ત્ર (વેલ્વેટ બોક્સમાં)	રૂા. ૫૦૦/-
૫.	આત્મસિદ્ધિ શાસ્ત્ર (પુસ્તક આકારે)	રૂા. ૧૨૫/-
૬.	આત્મસિદ્ધિ-વિવેચન	રૂા. ૫/-
૭.	આત્મસિદ્ધિશાસ્ત્ર	રૂા. ૨/-
૮.	આત્મસિદ્ધિશાસ્ત્ર (અર્થ સહિત)	રૂા. ૫/-
૯.	આત્મસિદ્ધિશાસ્ત્ર 'રાજ' જ્યોતિ મહાભાષ્ય	રૂા. ૩૦/-
૧૦.	આલોચનાદિ પદ સંગ્રહ	રૂા. ૪/-
૧૧.	આલોચનાદિ પદ સંગ્રહ (સંક્ષિપ્ત)	રૂા. ૫/-
૧૨.	કર વિચાર તો પામ	રૂા. ૭/-
૧૩.	મોટું કેલેન્ડર	રૂા. ૧૦૦/-
	નાનું કેલેન્ડર	રૂા. ૧૦/-
૧૪.	ચૈત્યવંદન ચોવીશી	રૂા. ૫/-
૧૫.	જ્ઞાનમંજરી	રૂા. ૪/-
૧૬.	તત્ત્વજ્ઞાન (શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર પ્રણીત)	રૂા. ૩/-
૧૭.	તત્ત્વજ્ઞાન-તરંગિણી	રૂા. ૧૨/-
૧૮.	તીર્થપરિચય	રૂા. ૨૦/-
૧૯.	ધર્મામૃત	રૂા. ૧૫/-
૨૦.	નાની ૭ પુસ્તિકાઓનો સેટ	રૂા. ૧૦/-
૨૧.	નાની ત્રણ પુસ્તિકાઓનો સેટ :-	
	નિત્યક્રમ : પ્રાતઃકાળ	રૂા. ૨/-
	નિત્યક્રમ : મધ્યાહ્નકાળ	રૂા. ૨/-
	નિત્યક્રમ : સાયંકાળ	રૂા. ૨/-
૨૨.	નિત્યક્રમ	રૂા. ૬/-
૨૩.	નિત્યનિયમાદિ પાઠ (ભાવાર્થ સહિત)	રૂા. ૮/-
૨૪.	નિયમસાર - કળશ	રૂા. ૫/-
૨૫.	પત્રશતક- (શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર વચનામૃત)	રૂા. ૫/-
૨૬.	પરમાત્મપ્રકાશ	રૂા. ૧૦/-
૨૭.	પંચાસ્તિકાય	રૂા. ૧/-
૨૮.	પૂજાસંચય	રૂા. ૫/-
૨૯.	પ્રત્યક્ષ સત્પુરુષ પરમકૃપાળુદેવ શ્રીમદ્-રાજચંદ્ર	રૂા. ૫/-
૩૦.	મુનિ પ્રત્યે	રૂા. ૫/-
૩૧.	મોક્ષમાળા (ભાવનાબોધ સહિત)	રૂા. ૫/-
૩૨.	રાજપદ (શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર પ્રણીત)	રૂા. ૫/-
૩૩.	રાજપ્રશ્ન	રૂા. ૨૦/-
૩૪.	વિહરમાન જિન-સ્તવન	રૂા. ૩/-
૩૫.	શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર (વચનામૃત)	રૂા. ૧૦/-
૩૬.	શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર (વચનામૃત) ત્રણ ભાગમાં મોટા ટાઈપમાં	રૂા. ૫૦/-
૩૭.	શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર (વચનામૃત) આર્ટ પેપર	રૂા. ૧૦૦/-
૩૮.	શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર આત્મકથા	રૂા. ૬/-
૩૯.	શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર ઉપદેશછાયા	રૂા. ૩/-
૪૦.	કાવ્ય-અમૃત ઝરણા (ભાવાર્થ સહિત)	રૂા. ૪/-
૪૧.	શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર જીવનકળા	રૂા. ૫/-
૪૨.	શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર જીવનચરિત્ર (સંક્ષિપ્ત)	રૂા. ૧/-
૪૩.	શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર જીવન-સાધના	રૂા. ૧૦/-
૪૪.	શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર નિર્વાણ શતાબ્દી-સ્મારક ગ્રંથ	રૂા. ૧૦/-
૪૫.	શ્રીમદ્ લઘુરાજસ્વામી (પ્રભુશ્રીજી) ઉપદેશામૃત	રૂા. ૧૦/-
૪૬.	શ્રીમદ્ લઘુરાજસ્વામી (પ્રભુશ્રીજી)નું જીવનચરિત્ર	રૂા. ૩/-
૪૭.	સમયસાર	રૂા. ૮/-
૪૮.	સમયસાર 'અમૃતજ્યોતિ' મહાભાષ્ય ભાગ-૧ અને ભાગ-૨ (સેટ)	રૂા. ૬૦/-
૪૯.	સમાધિ - સાધના	રૂા. ૫/-
૫૦.	સમાધિ - સોપાન	રૂા. ૧૦/-
૫૧.	સહજસુખસાધન	રૂા. ૧૦/-
૫૨.	સાક્ષાત્ સરસ્વતી	રૂા. ૨/-
૫૩.	સુબોધ સંગ્રહ (સ્ત્રી-નીતિબોધક ગરબાવલી સહિત)	રૂા. ૩/-
૫૪.	શ્રી સોભાગ પ્રત્યે	રૂા. ૫/-
૫૫.	સ્નાત્રપૂજા	રૂા. ૧/-
૫૬.	સ્વામી કાર્ત્તિકેયાનુપ્રેક્ષા	રૂા. ૧૫/-
૫૭.	શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર જીવનકથા (સચિત્ર)	રૂા. ૧૦/-
૫૮.	ઉપદેશામૃત દૃષ્ટાંતકથાઓ	રૂા. ૩/-
૫૯.	ગાંધીજીના પ્રશ્નો અને શ્રીમદ્જીના ઉત્તર (અંગ્રેજી અનુવાદ સાથે)	રૂા. ૨/-
૬૦.	પ.ઉ.પ.પૂ. પ્રભુશ્રીજી સાર્ધ શતાબ્દી-સ્મારકગ્રંથ	રૂા. ૫૦/-
૬૧.	સદ્ધા પરમ દુલ્લહા	રૂા. ૫/-

देवनागरी लिपि (भाषा गुजराती) में प्रकाशित

१.	आत्मसिद्धि शास्त्र	रु. २/-
२.	आलोचनादि पद संग्रह (संक्षिप्त)	रु. ५/-
३.	चैत्यवंदन चौवीशी	रु. ७/-
४.	तत्त्वज्ञान	रु. २/-
५.	नित्यक्रम	रु. ८/-
६.	नित्यक्रमकी तीन पुस्तिकाएँ	रु. ६/-
७.	पूजासंचय	रु. ७/-

हिन्दी अनुवाद

१.	आत्मसिद्धिशास्त्र (अर्थ सहित)	रु. ५/-
२.	कर विचार तो पाम	रु. ७/-
३.	नित्यनियमादि पाठ (भावार्थयुक्त)	रु. ८/-
४.	पत्रशतक	रु. ३/-
५.	मोक्षमाला (भावनाबोध सहित)	रु. ५/-
६.	श्रीमद् राजचंद्र	रु.१०/-
७.	श्रीमद् राजचंद्र उपदेशछाया	रु. ३/-
८.	श्रीमद् राजचंद्र - जीवनकला	रु. ५/-
९.	श्रीमद् राजचंद्र जीवनचरित्र (संक्षिप्त)	रु. १/-
१०.	श्रीमद् राजचंद्र जीवन-साधना	रु.१०/-
११.	छोटी छह पुस्तिकाओंका सेट	रु.१०/-
१२.	उपदेशामृत	रु.१०/-
१३.	श्रीमद् राजचंद्र जीवनकथा (सचित्र)	रु.१०/-
१४.	गांधीजीकेप्रश्न तथा श्रीमद्जीकेउत्तर (अंग्रेजी अनुवादकेसाथ)	रु. १/-
१५.	मोक्षमाला प्रवेशिका	रु. ५/-

English Publications

1.	Shrimad Rajchandra : A Life	Rs. 10/-
2.	Shrimad Rajchandra : A Pictorial Biography	Rs. 10/-
3.	The Self Realization(Atmasiddhi)	Rs. 10/-
4.	Bhavana Bodh	Rs. 2/-
5.	Nityakram Roman English	Rs. 10/-
6.	Small Books Set (Five Books)	Rs. 10/-
7.	Laghurajswami Life	Rs. 5/-
8.	Brahmchariji Life	Rs. 5/-
9.	Apoorva Avsar	Rs. 5/-
10.	Jeevankala	Rs. 10/-
11.	Mokshamala	Rs. 10/-
12.	Diamond Jubilee	Rs. 5/-

શ્રી લઘુરાજ સ્મારક ગ્રંથમાળા

૧.	ગ્રંથ યુગલ (લઘુયોગવાસિષ્ઠસાર અને સમાધિશતક)	રૂા. ૪/-
૨.	તત્ત્વાર્થસાર	રૂા. ૧/-
૩.	પ્રજ્ઞાવબોધ (મોક્ષમાળા-પુસ્તક ચોથું)	રૂા. ૮/-
૪.	બોધામૃત ભાગ ૧	રૂા.૧૦/-
૫.	બોધામૃત ભાગ ૨ (વચનામૃત વિવેચન)	રૂા. ૫/-
૬.	બોધામૃત ભાગ ૩ (પત્રસુધા)	રૂા.૧૦/-
૭.	પૂ.શ્રી બ્રહ્મચારીજી જન્મશતાબ્દી-સ્મારક ગ્રંથ	રૂા. ૮/-
૮.	પ. પૂ. બ્રહ્મચારીજી : જીવનરેખા	રૂા. ૧/-
૯.	મોક્ષમાળા - પ્રવેશિકા	રૂા. ૫/-
૧૦.	મોક્ષમાળા વિવેચન	રૂા. ૫/-
૧૧.	શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર અર્ધશતાબ્દી સ્મારક ગ્રંથ	રૂા.૧૦/-

श्री परमश्रुतप्रभावकमण्डल संचालित श्रीमद् राजचंद्र जैन शास्त्रमाला

१.	इष्टोपदेश	रु.१६/-
२.	इष्टोपदेश (संक्षिप्त)	रु. ३/-
३.	क्रियाकोष	रु.४८/-
४.	गोम्मटसार कर्मकाण्ड	रु.२८/-
५.	गोम्मटसार जीवकाण्ड	रु.५०/-
६.	ज्ञानार्णव	रु.२८/-
७.	तत्त्वसार	रु.२०/-
८.	द्रव्यानुयोगतर्कणा	रु.३२/-
९.	न्यायावतार	रु.१६/-
१०.	परमात्मप्रकाश (संक्षिप्त)	रु. ५/-
११.	परमात्मप्रकाश और योगसार	रु.४०/-
१२.	पञ्चास्तिकाय	रु.१८/-
१३.	पुरुषार्थसिद्ध्युपाय	रु.२०/-
१४.	प्रवचनसार	रु.४४/-
१५.	प्रशमरतिप्रकरण	रु.१२/-
१६.	बृहद्द्रव्यसंग्रह	रु.२८/-
१७.	लब्धिसार (क्षपणासार गर्भित)	रु.५६/-
१८.	सप्तभंगीतरंगिणी	रु.१२/-
१९.	सभाष्यतत्त्वार्थाधिगमसूत्र (मोक्षशास्त्र)	रु.४०/-
२०.	समयसार	रु.४४/-
२१.	स्याद्वादमञ्जरी	रु.२४/-
२२.	स्वामिकार्त्तिकेयानुप्रेक्षा	रु.५२/-
२३.	अध्यात्म राजचंद्र	रू.३०/-
२४.	अष्टप्राभृत	रू.१६/-
२५.	आत्मानुशासन	रू.२०/-

(વિસ્તૃત સૂચીપત્ર જોઈએ તો મંગાવવું.)

इस ग्रंथके प्रकाशनमें सहयोग देने वाले दाताओंके नाम

रकम	नाम	गाम
१,२१,०००	श्री चैनसिंह मेहता तथा श्रीमती कस्तुरलता मेहता	भीलवाडा
५,५५५	श्री पारसभाई एम. जैन तथा भावनाबेन पी. जैन	अगास आश्रम
५,५००	श्री गजराबेन देवराजजी रांका	बेंग्लोर
३,००१	श्री दरियाबाई गणपतचंदजी बंदामुथा	जालोर
२,५०१	श्री शंभुबेन सुरजमलजी पुनमीया	सेमड
२,०००	श्री चेतनभाई भूपेन्द्रभाई शाह	अंधेरी
२,०००	श्री दिवाळीबेन लेखराजजी सोलंकी परिवार	आहोर
१,५५५	श्री धनवंतीबेन लक्ष्मीचंद छेडा	कच्छ-गोधरा
१,५५५	श्री जयाबेन वीसनजी मारू	बीदडा
१,१११	श्रीमद् राजचंद्र ज्ञान मंदिर. हा. प्रेमराजजी	यवत्माल
१,१११	श्री स्मीताबेन वसंतभाई शाह	मुंबई
१,१११	श्री क्रिदय विनीतकुमार बंदा	आहोर
१,१११	श्री प्रयास विनीतकुमार बंदा	आहोर
१,१११	श्री राजेन्द्रभाई लालचंदजी मोदी परिवार	मीरारोड
१,१००	श्री रिध्धि वी. लुंकर	हुबली
१,००१	श्री मंजुलाबेन हिंमतलाल शाह	अगास आश्रम
१,००१	श्री शीलाबेन दिपकभाई शाह	अगास आश्रम
१,००१	श्री हरमन, मनन, निकीता, मिहीन	मुंबई
१,००१	श्री कुसुमबेन हसमुखभाई शाह	मुंबई
१,००१	श्री विक्रमकुमार मदनलालजी सालेचा	मैसूर
१,०००	श्रीमद् राजचंद्र ज्ञान मंदिर	बेंग्लोर
१,०००	श्री प्रवीणचंद्र मणीभाई पटेल	नार
१,०००	श्री बदामीदेवी धिंगडमलजी टीमरेचा	गढशिवाणा
१,०००	श्री सरिताबेन प्रफुल्लकुमार मुथा	मांडवला-चेन्नाई
१,०००	श्री स्पर्श - दर्श प्रफुल्लकुमार मुथा	"
५६७	श्री भवरीबाई तेजराजजी जीवावत	आहोर
५२५	श्री कोकीलाबेन जितेन्द्रभाई शाह	अगास आश्रम
५०१	श्री अमरतलाल हरिभाई सचदेव	मणीनगर
५००	श्रीमद् राजचंद्र मुमुक्षु मंडळ	मीरारोड
५००	श्री सुखीबेन छगनराजजी ओसवाल	गढशिवाणा
५००	श्री धर्मिष्ठाबेन विनोदभाई बाफना	नंदुरबार
५००	श्री पुण्यवंतीबेन इन्द्रकुमार साटीया	हुबली
५००	श्री सुज्ञान सावित्री मोदी	नोईडा
५००	श्री अभिज्ञान शालिनी मोदी	"
५००	स्व. श्रीनाथ मोदी बदनकुंवर. हा. सुज्ञान मोदी	नोईडा
५००	श्री खुशालचंद्र मनोहरमल रतनपुरा वोहरा	मोधरा
५००	श्री भाग्यवंतीदेवी महेन्द्रकुमार धारीवाल	सुरत
५००	श्री अनितादेवी रमेशकुमारजी गुलेचा	बेंग्लोर
५००	श्री निर्मळाबेन शांतिलाल	आहोर
५००	स्व. गजाजी वर्धमान परमार जैन. हा. रमणलाल	भेंसवाडा
५००	श्री भागुबेन रतनचंदजी	वडोदरा
५००	श्री व्रजकुमार राजकुमार महेता	करमसद
५००	श्री जयसुखभाई भायाणी	सोनगढ